वासंती

भाग 1

कक्षा 11 (आधार पाठ्यक्रम) के लिए हिंदी की पाठ्यपुस्तक

संपादक
सत्येंद्र वर्मा

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण

सितंबर 2002

भाद्रपद 1924

ISBN 81-7450-012-X

PD 200T RP

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्लू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110 016	बैंगलूर 560 085	अहमदाबाद 380 014	24 परगना 743 179

प्रकाशन सहयोग

संपादन : राजपाल

उत्पादन : प्रमोद रावत

राजेन्द्र चौहान

आवरण : कल्याण बैनर्जी

रु. 27.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटर मार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित ।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा आनन्द ब्रदर्स, सी-146, नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया फ़ेज-I, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित।

आमुख

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में विद्यालयी स्तर पर विभिन्न शैक्षिक विषयों के लिए पाठ्यचर्या एवं तद्नुरूप पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का कार्य लगभग चार दशकों से हो रहा है। इसी क्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के लागू होने पर तद्निहित सिद्धांतों, सुझावों और उद्देश्यों के अनुसार उपयुक्त शिक्षण-सामग्री एवं पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया गया, जिनमें शिक्षा बाल-केंद्रित होगी एवं शिक्षार्थियों के सर्वांगीण विकास पर विशेष बल दिया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में यह सुझाव भी दिया गया कि कुछ समय के पश्चात् ज्ञान-विज्ञान के विकास, सामाजिक रचना और नवीन दृष्टिकोण तथा मूल्यपरक शैक्षिक आवश्यकताओं को देखते हुए पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों में यथावश्यक संशोधन और परिवर्तन अवश्य किया जाए। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए 'विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000' का निर्माण हुआ। तत्पश्चात् नवीन पाठ्यचर्या में सुझाए गए नवीन उद्देश्यों, जीवन-मूल्यों, सूचना-संसाधनों एवं शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष की दृष्टि से अपेक्षित शैक्षिक बिंदुओं को समाहित करते हुए विविध विषयों का नवीन पाठ्यक्रम तैयार किया गया। तदनुसार नवीन पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया गया। इसी शृंखला में ग्यारहवीं कक्षा के आधार पाठ्यक्रम के लिए प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक 'वासंती' का प्रणयन किया गया है।

इस पाठ्यपुस्तक की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

1. ऐसी पाठ्यसामग्री एवं शैक्षिक क्रियाओं का समावेश जिनसे विद्यार्थियों में राष्ट्रीय लक्ष्यों – जनतांत्रिकता, पंथ निरपेक्षता, समाजवाद, सामाजिक न्याय, समतावाद,

संवैधानिक दायित्वों, मूल कर्तव्यों तथा राष्ट्रीय एकता के प्रति चेतना एवं आस्था उत्पन्न हो सके और उनमें तर्कसंगत वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो।

2. पाठ्यचर्या एवं पाठ्यसामग्री वर्तमान भारतीय जीवन-परिस्थितियों, समस्याओं (पर्यावरण, प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट आदि) तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित हों और उनमें वांछित भावी विकास की दिशा भी परिलक्षित हो।

3. पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों के भावात्मक एवं बौद्धिक उत्कर्ष, चरित्र-निर्माण तथा स्वस्थ मनोवृत्ति के विकास की दृष्टि से प्रेरणादाई सिद्ध हों, उनके द्वारा बच्चों में अधिकाधिक ज्ञानार्जन की उत्कंठा जाग्रत हो और वे निर्धारित पाठ्यविषय तक ही सीमित न रह कर विशद एवं व्यापक अध्ययन के लिए जिज्ञासु तथा तत्पर बने रहें।

प्रस्तुत पुस्तक के निर्माण में हमें अनेक शिक्षाविदों, भाषाशास्त्रियों एवं अध्यापकों का सहयोग मिला है। मैं उन सभी के प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। जिन लेखकों और कवियों ने अपनी रचनाएँ इस पाठ्यपुस्तक में सम्मिलित किए जाने की अनुमति दी है, उनके प्रति मैं विशेष रूप से अपना आभार व्यक्त करता हूँ।

इस पुस्तक के परिष्कार के लिए शिक्षाविदों, अध्यापकों और विद्यार्थियों द्वारा व्यक्त प्रतिक्रियाओं और सुझावों का हम सदैव स्वागत करेंगे।

जगमोहन सिंह राजपूत
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
अक्टूबर, 2001

संपादकीय

उपयुक्त पाठ्यक्रम का निर्धारण एवं तदनुरूप पाठ्यपुस्तक की रचना राष्ट्रीय महत्त्व का कार्य है। राष्ट्रीय शैक्षिक योजना के क्रियान्वयन एवं शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ये मूल उपादान हैं। इस महत्त्व को दृष्टि में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में विद्यालय स्तर की शिक्षा के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रमों एवं पाठ्यपुस्तकों के प्रणयन का कार्य होता रहा है। पर यह कार्य एक सतत विकासशील प्रक्रिया है। बदलती हुई राष्ट्रीय परिस्थितियों, आवश्यकताओं, नूतन जीवन-मूल्यों तथा वांछित विकास की दिशाओं के अनुरूप इसमें संशोधन और परिवर्तन आवश्यक हो जाता है।

इसी परिप्रेक्ष्य में परिषद् ने सन 2000 में विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा का निर्माण किया। इस पाठ्यचर्या के आधार पर विविध विषयों के पाठ्यक्रम निर्धारित किए गए। उनके अनुसार परिषद् ने सभी विषयों की नवीन पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया। इसी कार्यक्रम के अंतर्गत कक्षा ग्यारह के लिए 'आधार पाठ्यक्रम' के अनुसार हिंदी की यह पाठ्यपुस्तक 'वासंती' तैयार की गई है।

इस पाठ्यपुस्तक में दो खंड हैं– गद्य खंड और पद्य खंड। गद्य खंड की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

1. पाठों के चयन में यह ध्यान रखा गया है कि इस स्तर के विद्यार्थियों को हिंदी गद्य की कुछ प्रमुख विधाओं (निबंध, ललित निबंध, व्यंग्य, संस्मरण, जीवनी, यात्रावृत्त, कहानी आदि) एवं शैलियों का परिचय प्राप्त हो जाए। इस दृष्टि से इन विधाओं के प्रतिनिधि साहित्यकारों की रचनाएँ इस पुस्तक में संग्रहीत हैं।

2. पाठों के चयन में इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा गया है कि उनके द्वारा विद्यार्थियों में भाषिक एवं साहित्यिक क्षमता का विकास हो और उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का स्तर उन्नत हो।

3. पाठों के चयन में विषय-वस्तु, भाषा और शैली की विविधता, सरसता और रोचकता का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। इनके अध्ययन से विद्यार्थियों को गद्य की विविध शैलीगत विशेषताओं से परिचित होने का अवसर मिलेगा और विषय-सामग्री के माध्यम से जीवन के अनेक पक्षों की झाँकी मिलेगी, जैसे चरित्र-निर्माण, वैज्ञानिक दृष्टि, राष्ट्रीय चेतना, सांप्रदायिक सद्भाव, मानवीय गुण आदि।

4. विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर एवं ग्रहणशीलता को ध्यान में रख कर पाठ्य-सामग्री का कहीं-कहीं आवश्यक संपादन भी किया गया है। किंतु ऐसा करते समय इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है कि रचना के मूल भाव एवं साहित्यिक सौष्ठव को कोई क्षति न पहुँचे।

पद्य-खंड की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

1. इस खंड में भक्ति काल के तीन कवियों तथा आधुनिक काल के नौ कवियों की कविताएँ संकलित हैं।

2. भक्तिकालीन कवियों में कबीर की काव्य-भाषा को साहित्य समीक्षकों ने 'सधुक्कड़ी' अथवा 'खिचड़ी' भाषा कहा है। सूर और रसखान की काव्य-भाषा ब्रजभाषा है। आधुनिक काल के कवियों की काव्य भाषा 'खड़ी बोली' हिंदी है। इन कविताओं के अध्ययन से विद्यार्थी हिंदी काव्य भाषा के इन तीनों रूपों से परिचित हो सकेंगे।

3. कविताओं के चयन में विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान, भाव बोध की क्षमता और रुचि की विविधता का ध्यान रखा गया है जिससे वे कविता के विविध रूपों से अवगत हो सकेंगे और उनकी सराहना कर सकेंगे।

4. संकलित कविताओं के अध्ययन से विद्यार्थी आधुनिक हिंदी काव्य की विविध शैलियों और प्रवृत्तियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

5. आधुनिक हिंदी कविता के विकास क्रम को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जागरण, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता के प्रमुख कवियों की रचनाएँ संकलित की गई है।

6. आधुनिक हिंदी कविता को समझने और उसके सौंदर्य-तत्त्वों के बोध की दृष्टि से इस खंड की भूमिका (*कविता का अध्ययन और अध्यापन*) में प्रकाश डाला गया है। इससे कविता के अध्ययन में विद्यार्थियों को विशेष सहायता मिलेगी।

दोनों खंडों में प्रत्येक पाठ के अंत में उससे संबंधित प्रश्न और अभ्यास तथा कठिन अंशों को बोधगम्य बनाने की दृष्टि से शब्दार्थ और टिप्पणी दी गई है। इनसे विद्यार्थियों में विषयवस्तु की व्याख्या, विवेचना, सराहना तथा उन पर स्वतंत्र रूप से विचार करने की योग्यता का विकास होगा।

उल्लेखनीय है कि यदि पाठों का शिक्षण सत्रवार (सेमेस्टर) किया जाना हो तो पाठों के निम्नलिखित क्रम को अपनाया जा सकता है--

प्रथम सत्र - (गद्य खंड) 1. सबके थे बापू 2. संत तुलसीदास 3. शरत्चंद्र 4. दो नाक वाले लोग; (पद्य खंड) 5. कबीरदास 6. सूरदास 7. रसखान 8. मैथिलीशरण गुप्त 9. सुमित्रानंदन पंत तथा 10. रामकुमार वर्मा।

द्वितीय सत्र (गद्य खंड) 1. बर्फ के दरिया में साथ-साथ 2. विजयोत्सव 3. दूब-धान 4. तारों की दुनिया में; (पद्य खंड) 5. बालकृष्ण राव 6. भवानी प्रसाद मिश्र 7. नागार्जुन 8. अज्ञेय 9. केदारनाथ सिंह तथा 10. दुष्यंत कुमार।

इस पुस्तक के निर्माण में हमें अनेक शिक्षाविदों और भाषाशास्त्रियों का सहयोग मिला है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं। परिषद् के सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के अध्यक्ष तथा हिंदी पाठ्यपुस्तकों के प्रणयन से संबंधित सदस्यों का हमें जो अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके लिए हम उनके प्रति कृतज्ञ है।

हिंदी भाषा का स्तर ऊँचा करने तथा विद्यार्थियों में साहित्यिक अभिरुचि का विकास करने में यदि इस पुस्तक का योगदान हो सका तो हम अपना श्रम सार्थक समझेंगे।

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ:

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

मो॰ क॰ गांधी

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

प्रो. सत्येंद्र वर्मा *(संयोजक)* प्रो. सुरेश चंद्र पाण्डेय डॉ. स्नेह लता प्रसाद

सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

पांडुलिपि समीक्षा-संशोधन कार्यगोष्ठी के सदस्य

1. पं. विद्यानिवास मिश्र
   अवकाश प्राप्त कुलपति
   संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय
   वाराणसी, उ.प्र.
2. श्री निरंजन कुमार सिंह
   अवकाश प्राप्त रीडर
   सा.वि.मा.शि.वि.
   एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
3. प्रो. माणिक गोविंद चतुर्वेदी
   अवकाश प्राप्त प्रोफ़ेसर
   केंद्रीय हिंदी संस्थान, 'सूर्यमुखी'
   श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली
4. डॉ. आनंद प्रकाश व्यास
   अवकाश प्राप्त रीडर
   शिक्षा विभाग
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
5. डॉ. कृष्ण कुमार गोस्वामी
   प्रोफ़ेसर
   केंद्रीय हिंदी संस्थान, 'सूर्यमुखी'
   श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली
6. डॉ. मान सिंह वर्मा
   अध्यक्ष, हिंदी विभाग
   मेरठ कॉलेज, मेरठ, उत्तर प्रदेश
7. श्री लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
   अवकाश प्राप्त उपनिदेशक
   सूचना एवं जनसंपर्क विभाग
   उ.प्र. शासन, लखनऊ
8. कु. नीरा नारंग
   वरिष्ठ प्रवक्ता
   शिक्षा विभाग
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
9. डॉ. रामकरण डबास
   वरिष्ठ प्रवक्ता
   राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
   नई दिल्ली
10. श्री प्रभाकर द्विवेदी
    अवकाश प्राप्त मुख्य संपादक
    प्रकाशन विभाग
    एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
11. श्री लोकेंद्र चतुर्वेदी
    प्राचार्य
    शासकीय विद्यालय
    कनाडिया, इंदौर, म.प्र.
12. श्री अमर गोस्वामी
    लेखक, एफ-12, सेक्टर-12,
    नोएडा, गौतमबुद्ध नगर, उ.प्र.
13. श्री विश्वनाथ सिंह
    अवकाश प्राप्त अध्यक्ष
    पाठ्यपुस्तक निर्माण् विभाग
    साक्षरता निकेतन, लखनऊ, उ.प्र.
14. डॉ. सुरेश पंत
    अवकाश प्राप्त प्रवक्ता
    राजकीय उच्चतर माध्यमिक बाल विद्यालय
    जनकपुरी, नई दिल्ली
15. कु. कुसुम लता अग्रवाल
    हिंदी अध्यापिका
    सर्वोदय बाल विद्यालय, रमेश नगर
    नई दिल्ली
16. कुमारी इंद्रा सक्सेना
    वरिष्ठ हिंदी अध्यापिका
    डी.एम.स्कूल, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
    एन.सी.ई.आर.टी., अजमेर, राजस्थान
17. कु. विमला उप्रेती
    अवकाश प्राप्त प्रधानाध्यापिका
    राजकीय इंटर कॉलेज
    लखनऊ, उ.प्र.
18. श्रीमती लक्ष्मी मुकुंद
    वरिष्ठ हिंदी अध्यापिका
    डी.टी.ई.ए. स्कूल, सेक्टर-4
    आर.के.पुरम, नई दिल्ली

वसुधैव कुटुंबकम्

(वेद की ऋचाओं से रूपांतर)

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ।।2।।

पूर्व काल के देव कि जैसे
एक-दूसरे के हित का आचार पालते,
साथ जानते हुए भोग्य का लाभ उठाते,
उसी भाँति तुम अपनी वाणी-
मन-विचार को करो संगठित !

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।3।।

अभिमंत्रित करता मैं तुम्हें समान मंत्र से,
और एक ही हवि से करता हवन तुम्हारा।
समिति एक हो तुम सब की, हो समझ एक सम
एक साथ हो गमन और आगमन तुम्हारा
करो लक्ष्य के लिए चित्त-मन सब संकल्पित।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।4।।

तुम सब की कल्पना एक हो,
हृदय एक हो, मन समान हो,
जिससे उपजे सुंदर सम्मति,
सह-अस्तित्व-भावना जग में प्रवहमान हो !

बशीर अहमद 'मयूख'

पाठ-सूची

पद्य खंड

गद्य खंड

गद्य का अध्ययन और अध्यापन

प्रस्तुत संकलन में ऐसे गद्य पाठों का चयन किया गया है जिनके माध्यम से विद्यार्थी हिंदी गद्य साहित्य में विकसित विविध विधाओं और शैलियों से परिचित हो सकें। अतः इन पाठों को द्रुत-पठन की भाँति न पढ़कर इनके गहन अध्ययन-अध्यापन की आवश्यकता है।

हिंदी गद्य साहित्य में अनेक विधाओं का विकास हुआ है जिनमें कहानी, उपन्यास एकांकी और नाटक के अतिरिक्त निम्नांकित विधाएँ उल्लेखनीय हैं :

निबंध, ललित निबंध, व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत, जीवनी, आत्मकथा, गद्यगीत, पत्र-साहित्य, संस्मरण, भेंटवार्ता, डायरी, रेखाचित्र तथा रिपोर्ताज़ आदि।

संकलित गद्य पाठों में दो निबंध (संत तुलसीदास और तारों की दुनिया में), एक ललित निबंध (विजयोत्सव), एक व्यंग्य (दो नाक वाले लोग), एक यात्रा वृत्तांत (बर्फ़ के दरिया में साथ-साथ), एक जीवनी (शरत्चंद्र), एक संस्मरण (सबके थे बापू), एक कहानी (दूब-धान)—कुल आठ पाठ रखे गए हैं।

संकलित पाठों के अध्ययन द्वारा पठन-योग्यता की प्राप्ति तथा विभिन्न विषयों की श्रेष्ठ पुस्तकें पढ़ने में रुचि उत्पन्न करना है। इन पाठों का मुख्य लक्ष्य है—स्तरीय सामग्री पढ़कर विद्यार्थी उसका अर्थ ग्रहण करने के साथ उसके साहित्यिक सौंदर्य की अनुभूति कर सके। समुचित पठन-योग्यता के लिए श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों एवं उसके लेखकों से परिचित होना आवश्यक है। विभिन्न विषयों पर आधारित ज्ञानात्मक सामग्री का अध्ययन भी उतना ही आवश्यक है। इस प्रकार विषय की जानकारी के साथ उसकी शब्दावली से भी परिचय

मिलता है। इन विभिन्न बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए हिंदी के सुप्रसिद्ध लेखकों की विभिन्न विषयों और विधाओं से संबंधित सामग्री का चयन किया गया है।

पाठ्य सामग्री गहन और विशद अध्ययन के लिए है, आवश्यकतानुसार उसे बार-बार पढ़ा जाए और तदुपरांत उस पर विचार किया जाए। परंतु अन्य सामग्री पढ़े बिना पठन-कार्य पूरा नहीं समझना चाहिए। गद्य पाठों का उद्देश्य पठन योग्यता की प्राप्ति है। पठन योग्यता का संबंध गद्य साहित्य से अधिक होता है। जहाँ गद्य का उद्देश्य वस्तु बोध कराना है वहीं कविता का उद्देश्य भाव सौंदर्य की अनुभूति।

गद्य में युक्ति और तर्क से लेखक अपनी बात कहता है, वाक्यों में विषय-प्रतिपादन की क्रमबद्धता रहती है। कुछ वाक्य-समूहों के एक अनुच्छेद में विषय के एक अंग का वर्णन होता है और सभी अनुच्छेद एक विषय-सूत्र में गुँथे रहते है। ये अनुच्छेद विषय को समझने और हृदयंगम करने में सहायक होते हैं।

विधागत साहित्यिक विशेषताएँ भिन्न होते हुए भी इन पाठों में अर्थबोध की दृष्टि से कुछ बातें समान रूप से लागू होती हैं :

1. मुख्य भाव ग्रहण करना।
2. पाठ्य सामग्री का अर्थ ग्रहण करना।
3. प्रसंग द्वारा शब्दों का अर्थ समझना।
4. मुहावरे तथा लोकोक्तियों आदि में व्यक्त भाव का अर्थसूत्र में संबंध निर्वाह करना।
5. वाक्य विशेष के प्रयोगों का अर्थ समझना।
6. समास-विग्रह, संधिविच्छेद करके शब्दार्थ निकालना।
7. स्थल विशेष के अभिधार्थ के साथ उसके लक्ष्यार्थ तथा व्यंग्यार्थ को समझना।
8. अनुच्छेदों का सार बनाना और उसका शीर्षक देना।
9. पाठ का सारांश बताना।
10. शैलीगत विविधता समझना।
11. पाठ्यसामग्री का मूल्यांकन करना।

अर्थबोध पठन-क्रिया का मुख्य अंग है। पूर्वज्ञान, शब्द भंडार, विचारों का विश्लेषण-संश्लेषण एवं पठन-गति पर अर्थग्रहण होता है। अच्छा पाठक पठित अंश का अर्थ तत्काल ग्रहण करता चलता है, अनावश्यक अंशों को छोड़कर आवश्यक अंशों का स्मरण करता है तथा पूरे पाठ का मुख्य भाव समझ लेता है। शिक्षण का अन्य प्रमुख उद्देश्य शब्द भंडार की वृद्धि है। शिक्षण के समय यथाप्रसंग पर्यायवाची, विलोम, अनेकार्थी शब्दों का ज्ञान कराना आवश्यक है। शब्द रचना (संधि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय द्वारा) से भी विद्यार्थियों को परिचित होना चाहिए। शब्द भंडार की वृद्धि की दृष्टि से कोश का प्रयोग आवश्यक है, कोश के प्रयोग पर भी यथासंभव पर्याप्त बल देना चाहिए।

पठन दो प्रकार का होता है— मौन और सस्वर। मौन पठन स्वयं अर्थ समझने के लिए होता है और सस्वर पठन पढ़ी जाती हुई सामग्री को अन्य व्यक्तियों को सुनाने व समझाने के लिए। मौन पठन की आवश्यकता अधिक होती है क्योंकि यह ज्ञानार्जन का मुख्य माध्यम और साधन है। मौन पठन में जितनी अधिक गति हो वही अच्छा है। परंतु सस्वर पठन की गति वही होनी चाहिए जो सामान्य बातचीत में रहती है। इसमें उच्चारण की शुद्धता, स्पष्टता तथा अर्थ और भाव के अनुसार वाणी का उतार-चढ़ाव आवश्यक है।

पाठ-शिक्षण के समय अध्यापक को पाठ्य बिंदुओं का निश्चय पहले से कर लेना चाहिए। किन तथ्यों पर अधिक बल देना है और कौन से स्थल अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, किन अंशों की व्याख्या करनी है तथा किन संदर्भों को देना है आदि का निश्चय कक्षा शिक्षण के पहले ही कर लेना चाहिए। इस स्तर पर यह भी आवश्यक है कि विद्यार्थी आरंभ में ही लेखक से कुछ परिचित हो जाए और वे नवीन विषयवस्तु को ग्रहण करने की मानसिक स्थिति में आ जाए। पाठ-शिक्षण में विद्यार्थियों के पूर्व अर्जित ज्ञान एवं अनुभव का पूरा उपयोग किया जाना चाहिए।

ध्यातव्य है कि गद्य-शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में विकसित की जाने वाली कुछ योग्यताओं और दक्षताओं का उल्लेख ऊपर किया गया है यथा – अर्थबोध की क्षमता

शब्द-भंडार की वृद्‌धि, तीव्र पठन गति, आलोचनात्मक अध्ययन, रचनात्मक प्रवृत्ति एवं अपने भावों और विचारों को व्यक्त करने की अपनी शैली का निर्माण। इन योग्यताओं का विकास सभी प्रकार के गद्‌य पाठों के माध्यम से अपेक्षित है चाहे वे पाठ किसी भी विधा में हों। फिर भी हमें ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक विधा की अपनी साहित्यिक विशेषताएँ होती हैं जो उनकी पृथक पहचान कराती हैं। इस कारण उनके अध्ययन-अध्यापन में भी कुछ अंतर आ जाता है। इस दृष्टि से प्रत्येक विधा से संबंधित पाठों के अध्ययन-अध्यापन पर संक्षेप में प्रकाश डाला जा रहा है।

निबंध

निबंध गद्‌य साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है। इसका महत्त्व आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है— 'यदि गद्‌य लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्‌य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है। इसीलिए गद्‌य शैली के विवेचक उदाहरणों के लिए निबंध को ही चुना करते हैं।' भाषा के शुद्‌ध, प्रांजल और परिनिष्ठित रूप का ज्ञान निबंध साहित्य के द्‌वारा अधिक संभव है। भाषा अध्ययन के इन बिंदुओं पर हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए।

निबंध शब्द के शाब्दिक अर्थ से भी यही ध्वनित होता है। निबंध शब्द का अर्थ है— सम्यक् रूप से बँधी अथवा कसी रचना। इसका अशय यह है कि निबंध में विचार अथवा भाव पूर्णतः एक सूत्र में बँधे हुए रहते हैं। किंतु साहित्यिक जगत में इसका प्रयोग एक ऐसी गद्‌य रचना के लिए रूढ़ हो गया है जिसमें लेखक का व्यक्तित्व किसी न किसी रूप में अवश्य प्रतिबिंबित हो। लेखक स्वच्छंदतापूर्वक अपने मन की बात निबंध के माध्यम से कह सकता है। विधि, विषय या विचार के बंधन से मुक्त रहता है। हमें निबंध के अध्ययन-अध्यापन में स्थल विशेष की ओर विद्‌यार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। व्यक्तित्व की व्यंजना का सामान्य रूप से यह आशय लिया जाता है कि किसी विषय या विचार के संबंध में निबंधकार का निजी मत, प्रतिक्रिया, धारणा, रुचि-अरुचि आदि की झलक मिलती है। कक्षा-शिक्षण में अगले पृष्ठ पर दिया गया क्रम अपनाया जा सकता है :

की प्रस्तावना।

पठन।

ा अध्ययन (शब्दार्थ, शब्द रचना, विशिष्ट शब्द एवं वाक्य-प्रयोग, मुहावरे, ोक्तियों आदि का परिचय)।

य-वस्तु विश्लेषण (इसके अंतर्गत पाठ में आए हुए भाव, विचार, तथ्य, धांत तथा दृष्टांत आदि का विवेचन और स्पष्टीकरण)।

ांकन (पाठ के अंशों का अर्थबोध, विषय-वस्तु विश्लेषण और भाषा अध्ययन ी योग्यताओं का प्रश्नों द्वारा परीक्षण)।

ालन में दो निबंध हैं— 'संत तुलसीदास' (समीक्षात्मक निबंध) तथा 'तारों की ान विषयक निबंध)। इनके अध्ययन-अध्यापन में उपर्युक्त विधि का प्रयोग

व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत

निबंध के ही रूप में एक नई विधा 'ललित निबंध' नाम से विकसित हुई है। ाशेषता है— तथ्य, घटना, क्रिया-व्यापार आदि का भावोन्मेषकारी चित्रण। इस की भाषा-शैली बहुत कुछ भाव प्रधान निबंधों की भाषा-शैली के समान ही प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, विवेकी राय आदि ऐसे ाद्ध लेखक हैं। इनके ललित निबंधों में सांस्कृतिक विषयों का चित्रण बड़ा ा है। इस संकलन में 'विजयोत्सव' ललित निबंध का अच्छा उदाहरण है।

ानक निबंध भी निबंध की ही कोटि में आते हैं किंतु उनमें किसी वर्तमान ा,समस्या आदि के प्रति व्यंग्य की प्रधानता होती है। अन्नपूर्णानंद वर्मा, ई, शरद जोशी, रवींद्रनाथ त्यागी, श्रीलाल शुक्ल, गोपाल चतुर्वेदी आदि इस निबंधकार हैं। इस संकलन में 'दो नाक वाले लोग' व्यंग्य विधा के उदाहरण गया है।

किसी भी प्रकार की यात्रा के विविध अनुभवों और प्रतिक्रियाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति को यात्रा वृत्तांत कहते हैं। यद्यपि यात्रा वृत्तांत में वर्णनात्मक निबंध और संस्मरण दोनों के ही कुछ-कुछ तत्त्व पाए जाते हैं, किंतु यह इन दोनों विधाओं से भिन्न विधा है। घटनाक्रम की गतिशीलता, मार्ग में आने वाली अप्रत्याशित परिस्थितियों की रोमांचकता, कठिनाइयों का सामना करने की साहसिकता आदि यात्रा वृत्तांत में यात्री के प्रस्थान मार्ग एवं गंतव्य से संबंधित भौगोलिक एवं प्राकृतिक चित्रण के साथ-साथ यथाप्रसंग वहाँ की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन की झलक भी प्रस्तुत की जाती है। यात्रा के संपूर्ण वर्णन में लेखक की मानसिक प्रतिक्रियाएँ और धारणाएँ भी व्यंजित होती चलती हैं। इस संकलन में 'बर्फ़ के दरिया में साथ-साथ' यात्रा वृत्तांत को उदाहरण रूप में रखा गया है।

ललित निबंध, व्यंग्य और यात्रा वृत्तांत की अध्ययन-अध्यापन विधि बहुत कुछ निबंध-शिक्षण के ही समान है। इनके शिक्षण में पाठ-विकास का वही क्रम अपनाया जा सकता है जिसका उल्लेख निबंध के अंतर्गत किया जा चुका है। दो शिक्षण-बिंदुओं में कुछ अंतर रखना पड़ता है– (1) निबंध में भाषा-अध्ययन का जितना विस्तार अपेक्षित है, उतना विस्तार इनमें नहीं किया जाता। केवल शब्दार्थ और व्याख्या संबंधी कठिनाई दूर कर दी जाती है। (2) विषय-वस्तु विश्लेषण में इन निबंधों की प्रकृति, तथ्य और रमणीयता का ध्यान रखना पड़ता है और उनसे संबंधित प्रश्नों के द्वारा लालित्य, व्यंग्य और यात्रा की रोमांचकता को उभारा जाता है।

जीवनी और संस्मरण

जीवनी में किसी महापुरुष के जीवन की उन घटनाओं का उल्लेख किया जाता है जिनसे उनके असाधारण चरित्र और स्वभाव पर प्रकाश पड़ता है। जीवनी इतिहास नहीं है, अपितु उसमें महापुरुष के जीवन के कुछ असाधारण प्रसंगों द्वारा उसके चरित्र को उभारने का प्रयास किया जाता है। इस संकलन में 'शरत्चंद्र' पाठ जीवनी का एक अच्छा उदाहरण है।

लेखक के स्मृति पटल पर अंकित किसी विशेष व्यक्ति के जीवन की कुछ घटनाओं का रोचक और प्रेरक विवरण संस्मरण कहलाता है। इसमें लेखक केवल उसी बात का वर्णन

करता है जिसे उसने स्वयं देखा या अनुभव किया है। संस्मरण निकट से देखे हुए व्यक्तियों से संबंधित होता है अतः इसका विवरण विश्वसनीय होता है। प्रस्तुत संकलन में 'सबके थे बापू' पाठ संस्मरण विधा का एक अच्छा उदाहरण है।

इन दोनों विधाओं से संबंधित पाठों की अध्ययन-अध्यापन विधि बहुत कुछ निबंध शिक्षण के समान ही होती है और पाठ विकास का वही क्रम अपनाया जा सकता है। किंतु इन पाठों में भाषा-अध्ययन की उतनी गहराई और विस्तार में नहीं जाते जितनी निबंधों में। केवल शब्दार्थ और व्याख्या संबंधी कठिनाई दूर करने तक ही सीमित रहते हैं। जीवनी के पाठों में विषय-वस्तु विश्लेषण के अंतर्गत महापुरुषों के असाधारण उदात्त चरित्र और महत् कार्यों पर प्रकाश डाला जाता है। संस्मरण के पाठों में जिस व्यक्ति के संबंध में संस्मरण लिखा गया है, उसकी विविध परिस्थितियों में महानता का चित्रण किया जाता है।

कहानी

कहानी के संदर्भ में प्रेमचंद का निम्न कथन दृष्टव्य है— "गल्प (कहानी) एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य होता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथानक उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं। उपन्यास की भांति उसमें मानव जीवन का संपूर्ण तथा वृहद् रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता और न उसमें उपन्यास की भाँति सभी रसों का समावेश होता है। वह एक ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल, बेल-बूटे सजे हुए हैं बल्कि वह एक ऐसा गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"

कहानी में जीवन के किसी एक अंग अथवा मनोभाव का चित्रण होता है। अतः कहानी पढ़ाते समय उस अंग या मनोभाव की ओर विशेष रूप में विद्यार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। कहानी बहुत ही लोकप्रिय विधा है। विद्यार्थी पुस्तक में संकलित कहानी स्वयं ही पढ़ लेते हैं। अतः कक्षा-शिक्षण में उनके कहानी संबंधी पूर्व परिचय का लाभ उठाना चाहिए। मूलतः कहानी का आनंद उसके कहने और सुनने में है। अतः कक्षा में पहले शिक्षक द्वारा

कहानी सुनाई जाए फिर एक-एक अंश के रूप में विद्‌यार्थियों से सुनी जाए। तदुपरांत कहानी के तत्त्वों का विश्लेषण किया जाए।

कहानी में निंम्नलिखित तत्त्व न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य विद्‌यमान रहते हैं। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि कक्षा में कहानी पढ़ी ही न जाए। कथानक के विकास, चरित्र-चित्रण अथवा किसी स्थिति या वातावरण के संबंध में वर्णित मार्मिक स्थलों को कक्षा में आवश्यकतानुसार पढ़ा जाए, जिससे विद्‌यार्थियों को तत्संबंधी साहित्यिक सौंदर्य का बोध हो सके।

कहानी के तत्त्वों— कथानक, चरित्र, कथोपकथन, वातावरण, उद्‌देश्य, भाषा-शैली में से किसी तत्त्व की प्रधानता के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण किया जाता है यथा— घटना प्रधान कहानी, चरित्र प्रधान कहानी, वातावरण प्रधान कहानी आदि। कंहानी में जिस तत्त्व की प्रधानता हो, शिक्षण में उस पर विशेष प्रकाश डालना चाहिए। इस संकलन में रखी गई कहानी 'दूब-धान' बदलते हुए सामाजिक परिवेश, जीवन शैली और मानवीय संबंधों पर आधारित है। बिहार की आंचलिक पृष्ठभूमि से जुड़ी हुई यह एक हृदयस्पर्शी-मार्मिक कहानी है। इस कहानी के कथानक के माध्यम से महानगरीय औपचारिकता और ग्रामीण उन्मुक्तता को सरल-सहज ढंग से प्रस्तुत किया गया है। साथ ही इस कहानी से जो संदेश मिलता है उसकी भी चर्चा करनी चाहिए।

अध्ययन-अध्यापन के संदर्भ में यह ध्यान में रखने की बात है कि शिक्षण की विधि यांत्रिक नहीं होनी चाहिए। यह बहुत कुछ पाठ की प्रकृति, विषय-वस्तु की प्रस्तुति, संयोजन, शैली आदि पर निर्भर करता है कि हम किस विधि को अपनाएँ। जिस विधि से वर्णनात्मक निबंध पढ़ाया जाएगा, उसी विधि से समीक्षात्मक निबंध नहीं पढ़ाया जा सकता। किसी निबंध में तथ्यों और घटनाओं पर बल रहता है तो किसी में मनोभावों और शैलीगत विशेषताओं पर। इसी प्रकार संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत, जीवनी आदि के पाठों में भी पाठ की प्रकृति के अनुसार ही उपयुक्त विधि अपनानी चाहिए। उपयुक्त विधि का निर्वाचन बहुत कुछ शिक्षक के अपने विवेक पर निर्भर करता है।

भदंत आनंद कौसल्यायन

भदंत आनंद कौसल्यायन का जन्म सन 1905 में अंबाला जिले के सोहाना गाँव में हुआ। वे बौद्ध भिक्षु थे और उन्होंने देश-विदेश का काफ़ी भ्रमण किया। बौद्ध भिक्षु के रूप में उनका कार्य सराहनीय रहा है। हिंदी भाषा और साहित्य की सेवा में भी उनका उल्लेखनीय योगदान है। उन्होंने हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के माध्यम से और बाद में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के सचिव के पद पर रहकर हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

पर्यटन तथा संगठन के कार्यों में रुचि रहने के कारण कौसल्यायन का अनुभव गहन और विस्तृत था जो उनकी रचनाओं में परिलक्षित होता है। उनकी बीस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उन्होंने महत्त्वपूर्ण बौद्ध ग्रंथों तथा जातक कथाओं का पाली भाषा से हिंदी में अनुवाद किया है। उनके लिखे हुए रेखाचित्र विशेष प्रसिद्ध हैं। पर्यटक होने के कारण उनके यात्रा-वृत्तांतों में स्थानों और दृश्यों का मनोरम चित्रण मिलता है।

कौसल्यायन गांधी जी के साथ लंबे अरसे तक वर्धा में रहे। गांधी जी के सिद्धांतों और जीवन-शैली से वे अत्यधिक प्रभावित थे। उनके लिखे हुए गांधी जी विषयक संस्मरणों में गांधी जी के जीवन का यथार्थ रूप बड़े ही सहज ढंग से उभर कर सामने आ जाता है। ***भिक्षु के पत्र, जो न भूल सका, आह! ऐसी दरिद्रता, बहाने बाजी*** *आदि उनकी रचनाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।*

प्रस्तुत पाठ ***सबके थे बापू*** *कौसल्यायन जी के बहाने बाजी नामक रचना-संग्रह से लिया गया है। इसमें उन्होंने गांधी जी के साथ बिताए गए क्षणों की एक झाँकी प्रस्तुत की है। इसके*

द्‌वारा गांधी जी की मानवता, शालीनता, प्राणिमात्र के प्रति आत्मीयता, सभी प्रकार के भेदभावों से ऊपर उठकर सबके प्रति उनका समान व्यवहार आदि मानवीय गुणों का हृदयग्राही वर्णन किया गया है। इन्हीं गुणों के कारण बापू सबके थे और सब बापू के थे।

सबके थे बापू

अभी 26 जनवरी को ही हमने अपने स्वतंत्रता दिवस की, अपने सर्वप्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्र राज्य के स्थापना-दिवस की वर्षगाँठ मनाई। उस दिन की, जिस दिन भारत ने स्वतंत्र होने की दृढ़ प्रतिज्ञा की और जिस दिन भारत ने अपने सर्वप्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्र राज्य होने की घोषणा की।

और, फिर चार ही दिन बाद हमने अपने बापू की बरसी मनाई, उस बापू की जिसने हमसे स्वतंत्रता की शपथ लिवाई, जिसने हमें स्वतंत्रता दिलाई।

आज हम हैं, हमारी स्वतंत्रता भी है, किंतु हमारा बापू नहीं है ....

30 जनवरी की मनहूस संध्या को मैं बनारस स्टेशन पर रेल से उतरा ही था कि वहीं बापू के निधन का समाचार मिला। वह समाचार था कि जंगल की आग थी – दहकती, लहकती चारों ओर बढ़ी चली जा रही थी। जो लोग इक्कों, ताँगों और रिक्शों पर बैठ चुके थे, वे सभी इक्के, ताँगे और रिक्शे छोड़-छोड़ कर पैदल चलने लगे।

सामान्य लोगों का निधन होता है तो उनके संबंधी ही रोते हैं। बापू का निधन हुआ तो उनके संबंधी-असंबंधी सभी रोए। देवदास गांधी से भी अधिक ऐसे लोग रोए, जिन्होंने कभी बापू को देखा तक नहीं था। और लोगों का निधन होता है तो उनके प्रशंसक ही रोते हैं, बापू का निधन हुआ तो उनके आलोचक ही नहीं निंदक भी रोए। और लोगों का निधन होता है तो उनके अपने धर्म वाले ही रोते हैं, बापू का निधन हुआ तो हिंदू-मुसलमान सभी रोए, छाती

पीट-पीट कर रोए। और लोगों का निधन होता है तो उनके देशवाले ही रोते हैं, बापू का निधन हुआ तो वे अंग्रेज़ भी रोए, जिनकी सरकार को बापू ने 'शैतानी सरकार' कहा था।

ये सभी क्यों रोए? और इतना अधिक क्यों रोए ? क्योंकि 'बापू' मानवता के धनी थे।

हर दो हाथ, दो पैर वाले पशु को हम आदमी समझने की गलती करते हैं – 'मानव' मान लेते हैं। हर दो हाथ, दो पैर वाला पशु मानव नहीं होता। स्वामी रामतीर्थ ने आदमियों के चार प्रकार बताए हैं, 1. जड़-मानव, 2.वनस्पति-मानव, 3. पशु-मानव और 4. मानव-मानव।

जो व्यक्ति केवल अपनी ही चिंता करता है, अपने से बाहर कुछ सोच ही नहीं सकता, वह 'जड़-मानव' है। जो अपने साथ अपने परिवार वालों, अपने नगरवालों की भी चिंता करता है, वह 'वनस्पति-मानव' है। जो अपने साथ अपने परिवार और नगर के लोगों के साथ-साथ, देश भर के लोगों की भी चिंता करता है, वह 'पशु-मानव' है। जो अपने साथ अपने परिवार और नगर के लोगों तथा अपने देश के साथ-साथ 'मानवमात्र' की ही नहीं 'प्राणिमात्र' की भी चिंता करता है, वही मानव-मानव है। मौलाना हाली का शेर है –

फ़रिश्ते से बेहतर है इंसान बनना,
मगर उसमें पड़ती है मेहनत ज़्यादा।

जो लोग बापू की राजनीति से सहमत नहीं रहे अथवा मेरी तरह जो राजनीति को विशेष समझते भी नहीं रहे, वैसे लोगों पर भी बापू की 'शालीनता', बापू की 'मानवता' जादू का असर करती थी। मेरी ही एक दिन की आपबीती सुनिए –

6 दिसंबर सन 45 की शाम को मैं बापू की व्यस्तता का ख्याल कर उनकी कुटिया के भीतर पैर रखने में हिचकिचा रहा था। आवाज़ सुनाई दी – "आइए, आइए !"

मैं भीतर चला गया।

"अब आप यहाँ रहने के लिए आए हैं। एक महीना, दो महीने, चार महीने, जितना रह सकें।"

"हाँ बापू, जितने दिन वर्धा में रहूँगा, यहीं रहने की कोशिश करूँगा।"

दो चार और बातें करने के अनंतर बापू बोले, "अच्छा तो भोजन की घंटी बज गई है। पहले जाकर भोजन कर लीजिए।"

सेवाग्राम में भोजन के समय भोजन न करने पर दूसरे दिन तक उसी प्रकार इंतज़ार करना पड़ता था, जैसे रेलगाड़ी छूट जाने पर फिर दूसरी गाड़ी का।

"भोजन तो मैं नहीं करूँगा बापू, थोड़ा दूध पी लूँगा।"

श्रीमन्नारायण जी को इशारा हो गया और मुझे उनके साथ वैसे ही जाना पड़ा जैसे किसी कैदी को सिपाही के साथ। यह थी प्रेम की कैद।

लौटा तो बापू को बुरी तरह व्यस्त पाया। एक के बाद दूसरी समस्या निबटाई जा रही थी। आपसी बात कहने का आग्रह रखने में अपना ही मन संकोच मानता था। तब डा. सुशीला नय्यर ने धीरे से सलाह दी, "बापू जी, अब जैसे भी हो मौन ले लें।"

"नहीं, वह तो नहीं हो सकता।"

"बापू ! स्ट्रेन बढ़ जाएगा।"

"जिनको समय दिया जा चुका है, उनको समय देना तो धर्म है, वह कैसे तोड़ा जा सकता है ?"

दया आती थी— अभी रात दस बजे बाद तक समय बँधा हुआ है !

सैर को निकले तो श्रीमन्नारायण जी ने किसी तरह हिम्मत की और 'राष्ट्रभाषा' के विषय में जो बात मैं कहना चाहता था, वह अत्यंत संक्षेप में कह दी— अथवा उसकी भूमिका बाँध दी। मुझसे दो एक वाक्य कहकर बोले, "अब जाना नहीं होगा, यहीं रहना, नहीं तो मैं मुंबई (बंबई) से लौटकर लड़ूँगा।"

"बापू आप तो ऐसे मेजबान हैं कि अतिथि को घर पर छोड़कर स्वयं चले जाते हैं।"

बड़ी ज़ोर से खिलखिलाकर बोले, "हाँ मुझे ऐसा ही अतिथि चाहिए जो मेरी गैरहाज़िरी में घर को घर ही समझे।"

तब तक बापू को फिर मौन की याद कराई गई। मैंने कहा, "अब बापू, आप मौन रख लें।" उसके बाद किसी और ने कुछ कहना चाहा। झट मुँह पर उँगली चली गई। मेरे मुँह से निकला "बापू, मौन वाणी का ही है न, कुछ सुनते चलने में तो हर्ज़ नहीं।"

अब बड़ी फुरती से दोनों कानों पर दोनों हाथ की उँगलियाँ पहुँच गई और मैं समझता हूँ कि गांधी जी के उस चित्र के लिए कोई कुछ भी दे देता। मेरे मानस-पटल पर तो वह अंकित हो ही गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल वर्षा हो रही थी। बापू बरामदे में दो कंधों पर हाथ धरे टहल रहे थे। मैं उधर से गुज़रा तो उनकी नज़र पड़ी। देखा हाथ उठे हुए हैं, नमस्कार के लिए मेरा सिर झुक गया। पास आकर खड़ा ही हुआ था कि बापू बोले, "आप भी इस मंडली में आ सकते हैं, किन्तु चर्चा वही चलेगी जो चल रही है।"

उस समय भी किसी को कुछ बातें समझाई जा रही थीं। मैं पास जाकर खड़ा हो गया। जगह कुछ गीली थी। बापू से न रहा गया। बोले, "जगह गीली है। मेरा डाक्टरी मत कहता है कि आप वहाँ न खड़े हों, इधर सूखे में आएँ।"

अब बापू दो बार अपनी बातचीत में विराम-चिह्न लगा चुके थे। मुझे लगा कि एक विराम-चिह्न मैं भी लगा दूँ तो शायद विशेष अनुपयुक्त न होगा। बोला, "बापू मैं तो केवल एक मिनट में एक ही बात पूछने के लिए खड़ा हो गया था।"

"हाँ, वह तो मैं समझ ही गया था।"

"बापू मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपका मुंबई जाने का दिन तो निश्चित है, लौटने का दिन भी निश्चित है क्या ?"

"देखो, मुंबई में एक नारियल मिलता है, जिसमें पानी भी नहीं होता। यदि जिन्ना साहब ने मुझे वैसा नारियल ही दिया, तब तो मैं रविवार को ही लौट आऊँगा और यदि उसके साथ गुड़ भी दिया और यह भी कहा कि कल कुछ मसाला भी देंगे तो इस प्रकार जिन्ना साहब मुझे कुछ दिन ठहरा भी सकते हैं।"

मैं समझ गया बापू हर चीज़ के लिए तैयार हैं। बोला, "बापू आपने मेरे सेवाग्राम छोड़ने पर जो प्रतिबंध लगाया है वह न रहे तो मैं सोचता हूँ, मैं भी इस बीच में मुंबई में अपना कुछ काम कर आऊँ।"

"हाँ, हाँ, मेरे साथ जाने में एक लाभ है। तीसरे दर्जे का टिकट रहने पर भी जगह अच्छी मिल जाती है।"

"मुझे इस लाभ का ध्यान नहीं था, अब आपने ज्ञान करा दिया तो अवश्य फ़ायदा उठाऊँगा।"

"अच्छी बात है।"

"तो बापू, मैं अपना टिकट लेकर स्टेशन पर उपस्थित रहूँगा।"

"हाँ, तो क्या मुझसे यह आशा रखते हो कि मैं टिकट भी ले दूँगा" ? मैं मुसकराता हुआ विदा लेकर चला आया।

यह मानवता आखिर है क्या चीज़ ? कहने-सुनने में तो उससे बढ़कर आसान दूसरी बात नहीं–'आदमी' को 'आदमी' समझना। क्या यह विशेष कठिन कार्य है? हाँ, कठिन। कठिन, बहुत कठिन।

ऐसा क्यों है ? क्योंकि हममें से हर एक की आँख पर न जाने कितने भिन्न-भिन्न नंबरों के चश्मे लगे हुए हैं – 1. धनी-निर्धन का चश्मा, 2. ऊँची जात-नीची जात का चश्मा, 3. छूत-अछूत का चश्मा, 4. निरोगी-रोगी का चश्मा, 5. स्वजातीय तथा विजातीय का चश्मा, 6. स्वधर्मी तथा विधर्मी का चश्मा, 7. अपनी पार्टी अथवा दल के भीतर का और उसके

बाहर का चश्मा। इनके अतिरिक्त और भी जाने कितने चश्मे हैं। ये चश्मे हमें आदमी के साथ आदमी का-सा व्यवहार करने ही नहीं देते।

बापू ने अपनी साधना द्वारा इस प्रकार के चश्मों को आँखों से उतारने का सफल प्रयत्न किया था। अंधा संसार सही आँख वाले को सहन न कर सका। उसके पास हत्यारे की गोली थी, जो उसने 30 जनवरी की संध्या को अपने माथे पर, अपने ही भाग्य पर दाग दी।

बापू दरिद्रनारायण के पुजारी थे, किंतु उन्हें धनिकों से भी घृणा न थी। वे धनी-निर्धन के पीछे छिपे हुए 'मानव' को देखते थे। बापू ऊँची जात और नीची जात, अछूत और छूत के भ्रम से अपने सार्वजनिक जीवन के आरंभिक युग में ही मुक्त हो गए थे। यदि उनके मन में पक्षपात भी था तो उसके लिए जो जातिवाद के पलड़े में हल्का पड़ता था।

मैं स्वयं प्रार्थनावादी नहीं हूँ, किंतु प्रार्थना करने वाले की इज़्ज़त करता हूँ और बापू की प्रार्थना तो एक छोटी-मोटी धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक कांफ़्रेंस होती थी। उस प्रार्थना में कुरान की आयतों के लिए भी जगह रहती थी। सन 47 में एक समय ऐसा आया जब दिल्ली के कुछेक लोगों ने बापू की सभी सभाओं में विघ्न डालना शुरू किया। उनका कहना था कि बापू को वाल्मीकि मंदिर में कुरान की आयतें नहीं पढ़ने देंगे। एक दिन, दो दिन, रोज़-रोज़ आपत्ति होनी शुरू हुई। शनैः-शनैः आपत्ति करने वालों की संख्या कम भी होने लगी। बापू का कहना था कि जब तक एक भी आपत्ति करनेवाला रहेगा, मैं प्रार्थना न करूँगा। एक दिन जब ऐसा लगता था कि अब कोई आपत्ति करने वाला नहीं रहा, तब भी एक लड़का निकल आया। बापू बोले,"ठीक है, अब आज भी प्रार्थना नहीं होगी। एक आदमी भी जब तक या तो समझता नहीं है या अपने आप यहाँ से उठकर चला नहीं जाता है, तब तक मैं प्रार्थना नहीं करूँगा।"

अपने विरोधी के विरोध का इतना आदर ! यही वह जादू था जिसने कुछ दिनों में ही सारे विरोधियों के विरोध को शांत कर दिया।

1 मई, 1947 के दिन बापू ने अपना परिचय स्वयं दिया था, "मैं किसी भी पार्टी का नहीं हूँ। मैं सभी का हूँ। अगर बिहार के हिंदू फिर पागल बनेंगे तो मैं फ़ाका करके मर जाऊँगा। उसी तरह अगर नोआखाली में मुसलमान दीवाने होंगे तो वहाँ भी मुझे मरना है। मैंने वह हक हासिल कर लिया है। मैं जितना हिंदू का हूँ उससे कम मुसलमानों का नहीं हूँ। सिख, पारसी, ईसाई का भी मैं उतना ही हूँ। भले ही लोग मेरी न सुनें, पर जो मैं कहूँगा सबकी ओर से कहूँगा।"

सचमुच बापू सबके थे। इसीलिए तो सब बापू के थे।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. लेखक ने बापू के निधन के समाचार को *'जंगल की आग'* क्यों कहा है ?
2. स्वामी रामतीर्थ ने आदमियों के कौन-से चार प्रकार बताए हैं ?
3. बापू को किस प्रकार का अतिथि प्रिय था ?
4. बापू के निम्नलिखित कथन उनके किन गुणों पर प्रकाश डालते हैं ?
   - जिनको समय दिया जा चुका है, उनको समय देना तो धर्म है, वह कैसे तोड़ा जा सकता है ?
   - आप भी इस मंडली में आ सकते हैं, किंतु चर्चा वही चलेगी जो चल रही है।
   - जगह गीली है। मेरा डॉक्टरी मत कहता है कि आप वहाँ न खड़े हों। इधर सूखे में आएँ।
   - भले ही लोग मेरी न सुनें, पर जो मैं कहूँगा, सबकी ओर से कहूँगा।
5. लेखक बातचीत में विराम चिह्न लग जाने के उल्लेख द्वारा किस ओर संकेत कर रहा है ?
6. 'फ' तथा 'फ़' और 'ज' तथा 'ज़' ध्वनियों के भेद को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित शब्दों का उच्चारण कीजिए :
   - सफल, फ़रिश्ता, फ़ाका, फुरती, फ़ायदा, फिर
   - ज़्यादा, इज़्ज़त, जादू, जगह, इंतज़ार, चीज़।

लिखित

1. बापू के निधन पर हुई प्रतिक्रिया सामान्य लोगों के निधन पर होने वाली प्रतिक्रिया से किस प्रकार भिन्न थी ?
2. हर दो हाथ दो पैर वाले मानव को 'मानव' क्यों नहीं माना जा सकता ?
3. लेखक की दृष्टि में आदमी को आदमी समझना विशेष कठिन कार्य क्यों है ?
4. आशय स्पष्ट कीजिए —
   (क) अंधा संसार सही आँख वाले को सहन नहीं कर सका। उसके पास हत्यारे की गोली थी, जो उसने इसी 30 जनवरी की संध्या को अपने माथे पर —— अपने ही भाग्य पर दाग दी।
   (ख) ये चश्मे हमें आदमी के साथ आदमी का-सा व्यवहार करने ही नहीं देते।
   (ग) 'अपने विरोधी के विरोध का इतना आदर !'

भाषा-अध्ययन

(1) नीचे कुछ शब्द दिए गए हैं, जिनके विपरीतार्थी शब्द इस पाठ में आए हैं। उन्हें चुनकर लिखिए —
धनी, संबंधी, स्वजातीय, प्रशंसक, स्वधर्मी

(2) निम्नलिखित समस्त पदों का विग्रह कीजिए तथा समास का नाम बताइए —
स्थापना-दिवस, योग्यता- विस्तार, मानस-पटल, छूत-अछूत, प्रभुत्व-संपन्न, हिंदू-मुसलमान

'सचमुच बापू सबके थे। इसीलिए तो सब बापू के थे।' इस कथन का औचित्य सिद्ध करने के लिए महात्मा गांधी के जीवन के कुछ अन्य प्रसंग चुनिए और कक्षा में भित्ति-पत्रिका पर लगाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

निधन — मृत्यु
फ़रिश्ते — देवदूत
मेज़बान — आतिथ्य करने वाला
गैर हाज़िर — अनुपस्थित

अनुपयुक्त – जो उपयुक्त न हो
विजातीय – भिन्न जाति या वर्ग का
फ़ाका – उपवास
दीवाने – पागल
हक़ – अधिकार
हासिल – प्राप्त
देवदास गांधी – महात्मा गांधी के द्वितीय पुत्र

नूरुल हसन

एस. नूरुल हसन का जन्म सन 1921 में लखनऊ (उत्तर प्रदेश) में हुआ। उनके पिता अब्दुल हसन और माँ नवाबज़ादी ख़ुर्शीद लकुवा बेगम थीं, जिनका संबंध रामपुर नवाब खानदान से था।

प्रोफ़ेसर हसन ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से इतिहास में एम.ए. तथा आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, इंग्लैंड से डी. फिल. की उपाधि प्राप्त की। कुछ वर्ष लखनऊ विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य करने के बाद वे 'स्कूल ऑफ ओरिएंटल एण्ड अफ़्रीकन स्टडीज़', लंदन चले गए। पुनः भारत लौटने पर वे अलीगढ़ विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफ़ेसर नियुक्त हो गए। वे लंदन की 'रॉयल हिस्टोरिकल सोसाइटी' तथा 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी' के फ़ेलो भी रहे।

नूरुल हसन की गणना विख्यात इतिहासज्ञ, शिक्षाशास्त्री और शोधार्थी के रूप में होती है। उन्होंने भारत की सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। वे तीन बार 'भारतीय हिस्टोरिकल कांग्रेस' के अध्यक्ष रहे। इसके अतिरिक्त वे अनेक राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक, सामाजिक तथा स्वैच्छिक संस्थाओं से भी संबद्ध रहे। सन 1969 से 1978 तक वे राज्य सभा के सदस्य रहे। इस बीच लगभग 6 वर्ष (1972 से 1977) तक वे भारत सरकार के शिक्षा, समाज कल्याण और संस्कृति मंत्रालय में मंत्री रहे। यूनेस्को में उन्होंने 1971, 1972, 1974 तथा 1976 के भारतीय प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व किया था। यूनेस्को की मानव जाति के इतिहास की प्रतिष्ठित परियोजना से भी वे संबद्ध रहे। बाद में उन्होंने तत्कालीन सोवियत रूस में भारतीय राजदूत तथा पश्चिम बंगाल

और उड़ीसा के राज्यपाल पदों को भी सुशोभित किया। प्रो. हसन का निधन सन 1993 में कोलकाता (कलकत्ता) में हुआ।

नूरुल हसन मूलतः एक प्रतिबद्‌ध इतिहासकार थे। वे संगीत और कला के पारखी भी थे।

प्रस्तुत पाठ रामचरितमानस की चतुश्शती के संबंध में आयोजित समारोह में शिक्षामंत्री के रूप में नूरुल हसन द्‌वारा तुलसीदासजी को अर्पित एक श्रद्‌धांजलि है। इस पाठ में सारगर्भित शब्दों में तुलसी के समन्वयवादी दृष्टिकोण, जीवन में आचरण और कर्म की महत्ता, जनभाषा के माध्यम से भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति आदि विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। उनके विचार से तुलसी केवल युग पुरुष नहीं थे, बल्कि युग-युग के पुरुष थे।

संत तुलसीदास

पिछले दो-तीन सालों में रामचरितमानस की चौथी सदी के संबंध में देश और विदेश में बहुत से जलसे किए गए। इस दौरान तुलसीदास और रामचरितमानस के बारे में कई अहम किताबें भी लिखी गईं। कुछ लोगों ने तुलसीदास को पुराणपंथी और दकियानूसी बताया तो कुछ और लोगों ने उन्हें प्रगतिवादी और समाजवादी साबित किया। मैं इस बहस में नहीं पड़ना चाहता। इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते मेरी रुचि मध्य युग के कवियों, संतों और लेखकों में रही है। मैंने उनको भक्ति-आंदोलन के सिलसिले में देखा और परखा है। सच पूछिए तो सदियों से चले आ रहे भक्ति-आंदोलन को सही दिशा सूफ़ी फ़कीरों और संत कवियों ने दी। तुलसीदासजी का इस आंदोलन में बड़ा योगदान रहा है। मैं आज तुलसीदास के बारे में न तो ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करना चाहता हूँ और न ही इस बात पर ज़ोर देना चाहता हूँ कि उन्होंने राज का, समाज का और अनुशासन का कौन-सा रूप हमारे सामने रखा। मेरे सामने तुलसीदास की तस्वीर उन्हीं के शब्दों में यह है—

माँगिके खैबो मसीत को सोइबो
लैबे को एक न दैबे को दोऊ।

यह फ़कीर अपनी जात से ऊँचा उठकर समाज को कुछ देना चाहता है इसीलिए उसने एक तरफ़ तो पुरानी परंपराओं के ढाँचे को साफ़ और मज़बूत बनाकर हमारे सामने रखा और दूसरी तरफ़ उसने भारतीय संस्कृति के उस मिले-जुले रूप को पेश किया जो उस युग की माँग थी और जिसका सिलसिला हिंदुस्तान में सदियों से चला आ रहा था। दरअसल भारतीय संस्कृति गंगा की धारा के समान है जिसमें बहुत सी धाराएँ मिलकर एक हो जाती हैं। भारत

तो एक ऐसा चमन है जिसमें बहुत सी ज़बानें हैं, बहुत से धर्म हैं, बहुत सी जातियाँ हैं, जो तरह-तरह के फूलों और फलों के मानिंद हैं और सब मिलकर चमन की खूबसूरती बढ़ाते हैं। तुलसीदास ने इसी चमन में माली का काम किया। इसलिए देशी और विदेशी सभी विद्वान तुलसीदास पर मोहित हैं।

इसलिए हमें यह देखना होगा कि तुलसीदास में वे कौन-सी विशेषताएँ हैं जिनकी वजह से उसकी शख़्सियत हर रोज़ रौशन होकर हमारे सामने आ रही है। यह ठीक है कि रामचरितमानस का हज़ारों और लाखों आदमी आज पाठ करते हैं और अपनी-अपनी भावनाओं के मुताबिक उसके अर्थ भी निकालते हैं लेकिन तुलसीदास को अमर बनानेवाली चीज़ सिर्फ़ यही नहीं है। इसका हमें ठोस आधार ढूँढ़ना होगा। तुलसीदास युगपुरुष थे, बल्कि हम कह सकते हैं कि युग-युग के पुरुष थे। उन्हें प्रेरणा अपने युग से मिली, लेकिन वह उससे बँधे नहीं। सोलहवीं और सत्रहवीं सदी में भारत की सियासत में कुछ ठहराव आ गया था लेकिन कुछ ऐसी चीज़ें भी समाज में दाखिल हो चुकी थीं जिनका भारत की परंपराओं से टकराव था। भारतीय संस्कृति की धारा भी कुछ अलग-अलग दिशाओं में बह रही थी। ज़िंदगी के मूल्यों में भी उतार-चढ़ाव था। जिन्होंने भक्ति आंदोलन को गहराई से देखा होगा वे इस बात को अच्छी तरह से समझ सकते हैं। तुलसीदास की निगाह ने इस बात को भाँप लिया और उन्होंने अपनी ज़िंदगी समाज और देश के लिए उत्सर्ग कर दी। भारतीय संस्कृति की धारा वैदिक काल से ही अपनी दिशा बदलती रही है। परंपराएँ और जीवन के मूल्य भी अलग-अलग रूपों में हमारे सामने आते रहे हैं।

भारत की यह विशेषता रही है कि यहाँ के संतों, कवियों और साहित्यकारों ने इस टकराव को दूर करने की कोशिश की है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, आचार्य शंकर, गोरखनाथ, कबीर, दादू और जायसी वगैरह ने भारतीय संस्कृति को विशेष दिशा देने का काम किया था। तुलसीदास ने भी अपने जीवन का यही मकसद बनाया। उनके सामने सवाल था कि वह किस आधार पर अपने मिशन को पूरा करें। समाज के हालात को देखकर उन्होंने राम और रावण की कहानी को लिया और उसके ज़रिए भारतीय संस्कृति का सारा रूप ही

हमारे सामने पेश कर दिया। राम इंसानियत के पैमाने में और रावण हैवानियत के। इस तरह उन्होंने जनमानस तक अपना संदेश पहुँचाने की कोशिश की। खूबी यह रही कि परंपरा के पुराने ढाँचे को उन्होंने रद्द नहीं किया, चाहे वर्णों का हो या आश्रमों का, वेदों का मसला हो या पुराणों का, सभी को उन्होंने अहमियत दी और सबको साथ लेकर उन्होंने समाज का ऐसा ढाँचा जनता के सामने पेश किया जिसको सबने पसंद किया। राम और रावण की लड़ाई क्या है, निर्गुण और सगुण की चर्चा क्या है, शिव शक्ति और विष्णु की भक्ति क्या है— इन सबका निचोड़ तुलसीदास ने पेश करने की कोशिश की।

अकबर ने भी अपने ढंग से यह काम करने की कोशिश की थी, पर उसकी अपील जनता तक नहीं थी। दूसरी खास बात जो तुलसीदास ने की वह है, कर्म को अहमियत देना। भारतीय संस्कृति कर्म से कुछ दूर हटती जा रही थी। इसके लिए उन्होंने भक्ति का रूप सामने रखा, जिसमें कर्म और आचरण ही सब कुछ है। सिर्फ़ उसूलों की दुहाई देना तुलसीदास को पसंद न था। अपने संदेश को जनता तक पहुँचाने के लिए उन्होंने जनता की भाषा का ही सहारा लिया। जो काम अब तक संस्कृत के ज़रिए किया जाता था उसके लिए उन्होंने अवधी ज़बान को चुना, क्योंकि वह जानते थे कि मैत्री और एकता के लिए जनभाषा को अपनाना बहुत ज़रूरी है। इसलिए बहुत-सी मुसीबतें बरदाश्त करके भी, बिना किसी झिझक और डर के उन्होंने भारतीय संस्कृति को जनभाषा के ज़रिए हमारे सामने रखा। वह इस बात को मानते थे कि भारतीय संस्कृति की परंपरा के रूप में परिवर्तन होना चाहिए और वह जनभाषा के ज़रिए ही हो सकता है। इसका आधार हमें मामूली इंसान को नहीं बल्कि गैरमामूली इंसान यानी मर्यादा पुरुषोत्तम को बनाना पड़ेगा। इसलिए उन्होंने राम को चुना।

तुलसीदास इस बात को भी समझते थे कि जहाँ एक तरफ़ हिंदुस्तान में बहुत से मत और पंथ आ गए हैं जो आपस में टकराते हैं वहाँ दूसरी तरफ़ गैर-हिंदुस्तानी नस्लों और खासकर इस्लाम का असर भी समाज पर पड़ चुका है। भक्ति आंदोलन का खास उद्देश्य भेदभाव को दूर करना रहा है। इसलिए तुलसीदास अपने राम को छोटे जाति के मल्लाह से गले मिलाते हैं, उन्हें शबरी के जूठे बेर खिलाते हैं और उनसे दकन की छोटी-छोटी जातियों

से भाई-चारे का रिश्ता कायम कराते हैं। इसी को हम मिली-जुली भारतीय संस्कृति को अमली जामा पहनाना कह सकते हैं। मैं समझता हूँ कि तुलसीदास को हिंदू जाति का प्रतिनिधि मानकर उन्हें तंग दायरे में बाँधना उनसे गैर-इंसाफ़ी करना है। तुलसीदास अपने ज़माने का ऐसा नक्शा पेश करते हैं जो शायद दूसरी जगह मिलना मुश्किल है। एक मज़े की बात यह है कि उन्होंने भारत की परंपराओं का अनादर नहीं किया बल्कि जगह-जगह उनको उभारा ही है। यह ठीक है कि वह सीधे इस्लामी मज़हब, फ़लसफ़ा और तहज़ीब की तरफ़ मुखातिब नहीं होते और न ही उन्होंने किसी और फ़िरके पर हमला किया, लेकिन उन्होंने सबसे लिया है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि अकबर के सुलहकुल को उन्होंने अमली जामा पहनाने की कोशिश की है। एक बात ज़रूर है कि जब वह भक्ति और कर्म पर ज़ोर देते हैं तो भारतीय संस्कृति की धारा को रूहानियत का मोड़ देने की कोशिश करते हैं, लेकिन वह रूहानियत, इंसानियत का आला नमूना है और शायद इसीलिए उन्होंने एक आदर्श रामराज्य का सपना देखा था जिसमें सब लोग मिल-जुलकर भाईचारे से रह सकें। एक बात और गौर करने की यह भी है कि तुलसीदास किसी भी तरह अपने ज़माने से कटकर नहीं चले। इसके साथ उन्होंने उस ज़माने के बहुत से हिंदू-मुस्लिम रीति-रिवाजों को भी अपनी रचनाओं में जगह दी है। अरबी और फ़ारसी के शब्दों को भी अपनाया है। इन सब बातों से नतीजा निकलता है कि जो भक्ति-आंदोलन दकन के आल्वार संतों से शुरू हुआ और सारे देश में बिजली की चमक की तरह फैला, उसको तुलसीदास ने एक दिशा दी।

एक बात जीवन मूल्यों के बारे में और कहना चाहता हूँ। तुलसीदास को हमें एक इकाई के रूप में देखना चाहिए तभी हम उनके योगदान को ठीक समझ सकते हैं। लोक-जीवन और व्यक्तिगत जीवन में उन्होंने कुछ मूल्य पेश किए। लोक-जीवन का सबसे बड़ा मूल्य यह है कि वह किसी एक जाति या वर्ग के लिए नहीं होता, राष्ट्र के लिए होता है और हर इंसान के लिए होता है। उस ज़माने में भारतीय संस्कृति की धारा लोक-जीवन से कुछ हटकर बहने लगी थी, तुलसीदास ने उस कटान को रोका और कई तरीकों से लोक-जीवन की धारा को मज़बूत किया। उन्होंने हर इंसान के लिए चाहे वह राजा हो, फ़क़ीर हो, विद्वान हो — यही

संदेश दिया कि उसका जीवन लोक की भलाई के लिए है। धर्म और मज़हब में भी उन्होंने आचरण पर बल दिया, उसूलों को नहीं। धर्म का केंद्र उन्होंने मामूली इंसान को नहीं बनाया, राम को बनाया, जो असाधारण थे। जहाँ तक व्यक्तिगत मूल्यों का सवाल है, उनकी अभिव्यक्ति उन्होंने भरत, लक्ष्मण, हनुमान और सीता वगैरह के ज़रिए की। लेकिन उन सबका मकसद भी लोक की भलाई ही है। इस तरह हम देखते हैं कि तुलसीदास ने व्यक्ति से बढ़कर समाज की भलाई पर ज़ोर दिया है और इससे भी बढ़कर मुल्क की भलाई पर ज़ोर दिया है। समाजसेवा और देशसेवा तुलसीदास का संदेश है। भारतीय संस्कृति की एकता उनका मिशन है और रामराज्य उनका आदर्श है। ऐसे संत महात्मा के कदमों में अपनी श्रद्धांजलि पेश करता हूँ।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. तुलसीदास के बारे में लोगों के अलग-अलग मत क्या थे ?
2. 'माँगिके खैबो मसीत को सोइबो,
   लैबे को एक न दैबे को दोऊ।' इन पंक्तियों से तुलसीदास के बारे में क्या पता लगता है?
3. भारतीय संस्कृति को गंगा की धारा के समान क्यों कहा है ?
4. तुलसीदास ने अपना संदेश जनता तक पहुँचाने के लिए जनभाषा को आधार क्यों बनाया?
5. समाज में फैले भेदभाव को दूर करने के लिए तुलसीदास ने रामचरितमानस में किन प्रसंगों का सहारा लिया है ?

लिखित

1. लेखक ने तुलसीदास को युग-पुरुष कहने की अपेक्षा युग-युग का पुरुष कहना क्यों उचित समझा ?
2. तुलसीदास के समय भारतीय समाज की क्या स्थिति थी ?

3. तुलसीदास का अपने जीवन का क्या उद्देश्य था ? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने राम-रावण की कथा को क्यों चुना ?
4. लेखक के विचार में तुलसीदास को केवल हिंदू जाति का प्रतिनिधि कहना उपयुक्त क्यों नहीं है ?
5. 'तुलसीदास ने भक्ति आंदोलन को दिशा दी।' सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
6. तुलसीदास ने किन-किन जीवन-मूल्यों पर बल दिया ?
7. तुलसीदास द्वारा प्रस्तुत समाज का ढाँचा सबको पसंद क्यों आया ?
8. तुलसीदास ने कर्मप्रधान संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए भक्ति को आधार क्यों बनाया?
9. तुलसीदास ने लोकजीवन की धारा को मजबूत करने के लिए क्या मुख्य संदेश दिया ?

भाषा-अध्ययन

1. इस पाठ में अरबी-फ़ारसी मूल के शब्दों की भरमार है। पाठ में आए कुछ ऐसे शब्द नीचे दिए गए हैं। इन शब्दों के हिंदी रूप लिखिए –
   मानिंद, सिलसिला, ज़रिए, इंसानियत, ज़बान, बरदाश्त, कायम, तहज़ीब, नतीजा, उसूल।
2. निम्नलिखित शब्दों से भाववाचक संज्ञाएँ बनाइए –
   भारतीय, मित्र, हैवान, प्रतिनिधि, भला।

योग्यता-विस्तार

1. इतिहास की पुस्तकों से अकबर की सुलहकुल की नीति के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर कक्षा में चर्चा कीजिए।
2. रामचरितमानस की कुछ चौपाइयाँ याद कीजिए और उन्हें कक्षा में सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

श्रद्धांजलि	–	श्रद्धापूर्ण निवेदन
अहम	–	महत्त्वपूर्ण
दकियानूसी	–	परंपरावादी, लीक पीटने वाले
सिलसिले	–	नज़रिये, दृष्टि से
सिलसिला	–	क्रम, कड़ी, शृंखला

चमन	–	बाग
मानिंद	–	समान
शख़्सियत	–	व्यक्तित्व
मुताबिक	–	अनुसार
सियासत	–	राजनीति
दाख़िल	–	शामिल, प्रवेश
भाँपना	–	समझना
उत्सर्ग	–	दे देना, न्यौछावर कर देना
मकसद	–	उद्देश्य
इंसानियत	–	मानवीयता, मानवता
उसूल	–	सिद्धांत
गैर-इंसाफ़ी	–	अन्याय
फलसफ़ा	–	दर्शन
तहज़ीब	–	सभ्यता
फ़िरके	–	संप्रदाय, पंथ
अमली	–	व्यावहारिक
रूहानियत	–	आध्यात्मिकता
मिशन	–	उद्देश्य
मुखातिब	–	संबोधित
सुलहकुल	–	विश्वबंधुत्व, अकबर ने दीन-ए-इलाही नाम से जिस धार्मिक मार्ग की कल्पना की थी उसके पीछे सुलहकुल का सिद्धांत था।

विष्णु प्रभाकर

विष्णु प्रभाकर का जन्म सन 1912 में मुज़फ़्फ़रनगर (उत्तर प्रदेश) के एक गाँव में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। कुछ पारिवारिक कारणों से उनको शिक्षा के लिए हिसार (हरियाणा) जाना पड़ा। वहीं पर एक हाई स्कूल में उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। विष्णु प्रभाकर के जीवन पर आर्य समाज तथा महात्मा गांधी के जीवन-दर्शन का गहरा प्रभाव है।

शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् वे हिसार में ही सरकारी सेवा में आ गए। सरकारी नौकरी के समय भी वे साहित्य के अध्ययन एवं लेखन कार्य में संलग्न रहे। सन 1931 में उनकी पहली कहानी प्रकाशित हुई। सन 1933 में हिसार नगर की शौकिया नाटक कंपनियों के संपर्क में आए और उनमें से एक कंपनी में अभिनेता से लेकर मंत्री तक का कार्य किया। सन 1938 में हंस का एकांकी विशेषांक प्रकाशित हुआ। उसे पढ़ने के उपरांत और कुछ मित्रों की प्रेरणा से उन्होंने सन 1939 में प्रथम एकांकी लिखा, जिसका शीर्षक था – 'हत्या के बाद'।

विष्णु प्रभाकर की रचनाओं में प्रारंभ से ही स्वदेश प्रेम, राष्ट्रीय चेतना और समाज-सुधार का स्वर प्रमुख रहा है। इसके कारण उन्हें ब्रिटिश सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा। अतः उन्होंने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और स्वतंत्र लेखन को अपनी जीविका का साधन बना लिया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद वे आकाशवाणी दिल्ली में रेडियो रूपक लिखने का कार्य करने लगे। रेडियो रूपकों के अतिरिक्त उन्होंने रंगमंचीय नाटक भी लिखे हैं।

विष्णु प्रभाकर ने कहानी, उपन्यास, रिपोर्ताज आदि विधाओं में भी पर्याप्त मात्रा में लिखा है। प्रसिद्ध बांग्ला उपन्यासकार शरत्चंद्र के जीवन पर आधारित 'आवारा मसीहा' ने विष्णु जी को सफल जीवनीकार के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं – ***ढलती रात, स्वप्नमयी (उपन्यास), संघर्ष के बाद (कहानी संग्रह), नव प्रभात, डाक्टर (नाटक), प्रकाश और परछाइयाँ, बारह एकांकी, अशोक (एकांकी संग्रह), जाने अनजाने (संस्मरण और रेखाचित्र), आवारा मसीहा (शरत्चंद्र की जीवनी)।***

प्रस्तुत पाठ शरत्चंद्र के जीवन का एक अंश है जिसे लेखक की प्रसिद्ध पुस्तक 'आवारा मसीहा' से लिया गया है। इसमें यह दिखाया गया है कि शरत्चंद्र एक उच्चकोटि के मानवतावादी साहित्यकार ही नहीं, बल्कि सच्चे देशभक्त और स्वतंत्रता संग्राम सेनानी भी थे। शरत्चंद्र का मत था कि राजनीतिक आंदोलन देश की मुक्ति का व्रत है। इस आंदोलन में साहित्यकारों को सबसे आगे बढ़कर योगदान देना चाहिए। लोकमत को जाग्रत करने का उत्तरदायित्व साहित्यिकों पर ही है।

शरत्चंद्र

जिस समय शरत्चंद्र लोकप्रियता की चरम सीमा पर थे, उसी समय उनके जीवन में एक और क्रांति का उदय हुआ। समूचा देश एक नई करवट ले रहा था। राजनीतिक क्षितिज पर तेज़ी के साथ नई परिस्थितियाँ पैदा हो रही थीं। ब्रिटिश क्राउन के प्रति वफ़ादारी की प्रतिज्ञा लेने वाली कांग्रेस ने केंचुल उतार फेंकी थी क्योंकि प्रथम महायुद्ध के समाप्त हो जाने पर भारत के हार्दिक सहयोग के बदले में उसी क्राउन ने उसे रौलेट एक्ट प्रदान किया था। दक्षिण अफ़्रीका में रंगभेद के विरुद्ध संघर्ष करने वाले महात्मा गांधी ने घोषणा की, 'यदि रौलेट कमीशन की सिफ़ारिश को बिल का रूप दिया गया तो मैं सत्याग्रह आरंभ कर दूँगा।'

उन्होंने देश का दौरा किया। उस समय उनके कार्यक्रम का जैसा अभूतपूर्व स्वागत हुआ वैसा शायद फिर कभी नहीं हो सका। सभी ने बड़े उत्साह के साथ उस आंदोलन में भाग लिया। अप्रैल, 1919 में पंजाब में ऐसी अमानुषिक घटना घटी कि सारा देश काँप उठा। 13 अप्रैल को बैसाखी के दिन अमृतसर के जलियाँवाला बाग में एक सभा आयोजित की गई थी। बीस हज़ार स्त्री-पुरुष अपने नेता का भाषण सुन रहे थे कि एक बड़ी सेना लेकर जनरल डायर ने उन्हें घेर लिया। गोली चलाने के पूर्व उसने लोगों को तितर-बितर होने के लिए केवल दो मिनट का समय दिया। जाने के लिए मार्ग था केवल एक सँकरा दरवाज़ा। भागना चाहने पर भी लोग भाग नहीं सकते थे। सैकड़ों व्यक्ति उसी क्षण मारे गए। हज़ारों घायल हुए। उनकी सहायता करने के सारे प्रयत्न विफल कर दिए गए।

इस घटना ने देश के आत्माभिमान पर चोट की। विषधर भुजंग की भाँति वह तड़पकर पागल हो उठा। बड़े-बड़े सरकारपरस्त भी उस दिन विद्रोही हो गए। रवींद्रनाथ ठाकुर इतने

विचलित हुए कि उन्होंने 'सर' की उपाधि लौटा दी, शरत्चंद्र इस बात से बहुत प्रसन्न हुए। पंजाब के इंग्लिश दैनिक 'ट्रिब्यून' के संपादक श्री अमल होम को एक पत्र में उन्होंने लिखा– उस दिन सुना कि तुम भी खूब विपत्ति में पड़े। अंग्रेज़ों की हिंसक मूर्ति बहुत पास से अच्छी तरह देखी, यह कम लाभ नहीं है। हमारा मोह काटने के लिए यह आवश्यक था। हमें यह समझ लेना है कि वे इतने निष्ठुर और पशु हो सकते हैं। यह बात इतिहास के पन्नों से एक दिन हमने समझी थी। इस बार प्रत्यक्ष अनुभव किया। एक और लाभ हुआ कि देश की वेदना के बीच में हमने रवींद्रनाथ को नए रूप में पाया। इस बार अकेले उन्होंने ही हमारे आत्माभिमान की रक्षा की। सी. आर. दास ने एक दिन मुझसे कहा था कि रवि बाबू ने जब नाइटहुड स्वीकार किया था तो वे रोये थे। अब उनसे मिलने पर पूछूँगा कि आज हमारी छाती दस हाथ फूल गई या नहीं?

देशबंधु चित्तरंजनदास स्वयं मन-प्राण से इस आंदोलन में कूद पड़े थे। राष्ट्रीय कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। शरत् बाबू का देशबंधु के साथ अत्यंत स्नेह था, इसलिए वे भी बड़ी तेज़ी के साथ उस ओर खिंच आए। जलियाँवाला बाग हत्याकांड के प्रतिरोध में हावड़ा में जो विशाल सभा हुई, उसमें उन्होंने प्रत्यक्ष भाग लिया और इस प्रकार देशबंधु के साथ उनका जो संपर्क था उसे निरा साहित्यिक ही नहीं रहने दिया।

शरत्चंद्र का राजनीतिक झुकाव सदा गरमदल की ओर रहा। लोकमान्य के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी। हरिलक्ष्मी की मँझली बहू शरमाते हुए, हँसते हुए कहती है, 'तिलक महाराज की तस्वीर देख-देखकर बनाने की कोशिश की थी जीजी, पर कुछ बना नहीं।' यह कहते हुए उसने उँगली उठाकर सामने की दीवार पर टँगे हुए भारत के कौस्तुभ लोकमान्य तिलक का चित्र दिखा दिया। उन्हीं तिलक का जब 31 जुलाई की आधी रात के बाद देहावसान हो गया तब व्याकुल मन शरत्चंद्र ने लिखा – तिलक केवल हमारे भाई ही नहीं थे, बंधु ही नहीं थे, नेता ही नहीं थे, वे हम बाईस करोड़ के मलिन ललाट के शुभ्र गौरवमय तिलक थे। वही तिलक आज मिट गया है। हम अनाथ हो गए हैं !

बंगाल प्रारंभ में गांधीजी से पूरी तरह सहमत नहीं था। देशबंधु असहयोग कार्यक्रम के विरुद्ध थे लेकिन फिर भी सन 1920 में कलकत्ता (कोलकाता) में होने वाले कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में, जिसके सभापति पंजाब केसरी लाला लाजपतराय थे, गांधी जी का प्रस्ताव पास हो गया।

इस प्रस्ताव में सरकार पर प्रतिज्ञा-भंग का आरोप लगाते हुए कहा गया था, "इस कांग्रेस की राय है कि जब तक भूलों का सुधार न हो जाए और स्वराज्य की स्थापना न हो जाए, भारतवासियों के लिए इसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं है कि वे गांधीजी द्वारा संचालित क्रमिक अहिंसात्मक असहयोग की नीति को अपनाएँ।"

इस सलाह के अनुसार सरकारी उपाधियों, अदालतों, स्कूल-कालेजों, कौंसिलों, सरकारी दरबारों का त्याग तथा विदेशी माल का बहिष्कार आवश्यक था और आवश्यक था स्वदेशी वस्त्रों तथा चरखे को स्वीकार करना।

इस प्रस्ताव में देश से अनुरोध किया गया कि लोग राष्ट्रीय आंदोलन में अधिक से अधिक त्याग करें। इस बात पर विशेष ज़ोर दिया गया कि सब सार्वजनिक संस्थाएँ सरकार से असहयोग करने में अपना सारा ध्यान लगा दें और जनता में परस्पर पूर्ण सहयोग स्थापित करें।

देशबंधु दास ने घोषणा की कि वे अपनी वकालत छोड़ देंगे। वे चोटी के वकील थे। उनकी आय और उनके ऐश्वर्य की कोई सीमा न थी। उनकी इस घोषणा ने देश को आलोड़ित कर दिया। देखत-देखते उनका घर एक राजनीतिक संस्थान, परामर्श, संगठन और प्रचार का केंद्र बन गया। शरत् बाबू उन दिनों बाजे शिवपुर में रहते थे। उन्होंने संपूर्ण हृदय से असहयोग आंदोलन का समर्थन किया। वे न केवल हावड़ा जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष चुने गए बल्कि बंगाल प्रादेशिक और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी निर्वाचित हुए। इस प्रकार इस आंदोलन के परिचालन का उत्तरदायित्व भी उन पर आ गया। इस उत्तरदायित्व को उन्होंने मुक्त मन से स्वीकार किया। प्रायः प्रतिदिन सवेरे वे शिवपुर से

कोलकाता आते और देशबंधु तथा दूसरे कार्यकर्ताओं के साथ आंदोलन के संचालन के संबंध में परामर्श करते। इन कार्यकर्ताओं में प्रमुख थे डा. यतींद्रमोहन दासगुप्त, सुभाषचंद्र बोस, हेमंतकुमार सरकार और निर्मलचंद्र 'चंद्र'। चंद्र महोदय से उनकी विशेष घनिष्ठता थी। दोनों वाक्पटु, सरलप्राण तथा रवींद्रनाथ के परम भक्त थे।

शरत्चंद्र परामर्श देने में विशेष पटु थे। किसी जटिल समस्या को लेकर जब सब उलझे रहते तब वे चाय और चुरुट-सेवन में मन देते। और जब दूसरे लोग परेशान हो उठते तो वे सहज भाव से समस्या का समाधान प्रस्तुत करके सबको चकित कर देते।

शरत् साहित्यकार थे और साहित्यकार प्रायः राजनीति के दलदल से दूर रहता है, परंतु वे मानते थे कि भारत की स्वतंत्रता के लिए जो आंदोलन गांधीजी ने चलाया है वह केवल शुष्क राजनीति ही नहीं है, देश की मुक्ति का व्रत है। जो देश की दासता को सह सकता है वह साहित्यिक नहीं है। उनके साहित्य में देश और मनुष्य का यही प्रेम परिष्कृत हुआ है। उसी देश और मनुष्य के प्रेम के कारण वह असहयोग आंदोलन से अलग नहीं रह सके। साहित्यिक मित्रों ने उनसे कहा, "आप तो साहित्यिक हैं। आपका काम साहित्य -चर्चा है, राजनीति नहीं।"

शरत् ने उत्तर दिया, "यह आपकी भूल है। राजनीति में योग देना देशवासियों का कर्तव्य है। विशेषकर हमारे देश में यह राजनीतिक आंदोलन देश की मुक्ति का आंदोलन है। इस आंदोलन में साहित्यिकों को सबसे आगे बढ़कर योग देना चाहिए। लोकमत जाग्रत करने का गुरुभार संसार के सभी देशों में साहित्यिकों के ऊपर रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है। यदि आपकी बात मान भी लें, तो वकील, बैरिस्टर, डॉक्टर, और विद्यार्थी सभी यही तर्क उपस्थित करेंगे। तब राजनीति को कौन सँभालेगा ?"

शरत्चंद्र देश की मुक्ति के आंदोलन में पूर्ण विश्वास रखते थे , परंतु उसके सारे कार्यक्रम में न तो उनकी पूरी श्रद्धा थी और न वैसी आस्था ही। विशेषकर चरखे में उनका

रंचमात्र भी विश्वास नहीं था। फिर भी निरंतर कातते रहे और खद्दर पहनते रहे। स्थान-स्थान पर चरखा स्थापित करने में उन्होंने अपनी जेब से बहुत-सा पैसा खर्च किया था। उनकी मान्यता थी कि उनका विश्वास हो या न हो, परंतु जब कांग्रेस ने खद्दर पहनने का नियम बनाया है तो पहनना ही चाहिए। नहीं तो अनुशासन कैसे रहेगा ? इसलिए वे कातते थे, और सुंदर कातते थे। इतना सुंदर कि एक बार वैज्ञानिक आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय उनके काते हुए सूत का बुना कपड़ा सिर पर रखकर नाच उठे।

वैज्ञानिक प्रफुल्लचंद्र साहित्यिक शरत्चंद्र के बड़े प्रशंसक थे। शरत् बाबू भी उनके प्रति कम श्रद्धा नहीं रखते थे। उन दोनों महाप्राण व्यक्तियों का प्रथम मिलन एक असाधारण घटना के रूप में प्रचारित हो गया था। एक दिन किसी संदर्भ में राय महोदय ने अपने विद्यार्थियों के सामने शरत् बाबू से मिलने की इच्छा प्रकट की। तुरंत एक विद्यार्थी शरत् बाबू के पास पहुँचा और निवेदन किया कि क्या वे किसी दिन राय महोदय से मिलने के लिए चल सकेंगे ?

शरत् बाबू स्वयं बड़े उत्सुक थे, इसलिए वे उसी क्षण उस विद्यार्थी के साथ चल पड़े।

साइंस कॉलेज के ऊपर के तल्ले के एक कमरे में राय महोदय रहते थे। दोनों सीधे वहाँ पहुँचे। उस समय राय महोदय अपनी छोटी खाट पर बैठे काम करने में व्यस्त थे। शरत् बाबू ने देखा, खाट के पास दो कुरसियाँ है, परंतु दोनों कागज़-पत्रों से भरी हैं। बैठने के लिए कहीं भी रंचमात्र स्थान नहीं हैं। तब वे खाट पर बैठने के लिए आगे बढ़े कि सहसा राय महोदय उत्तेजित होकर बोल उठे, "क्या करते हो, क्या करते हो, खाट पर मत बैठो।"

शरत् खड़े के खड़े रह गए। विद्यार्थी की लज्जा का पार नहीं, शीघ्रता से एक कुरसी उठा लाया। शरत् बैठ गए। अब राय महोदय ने उनकी ओर देखकर सहज भाव से पूछा, "क्या कर रहे हो आजकल ?"

शरत् ने उत्तर दिया, "थोड़ा-बहुत लिखने की चेष्टा करता हूँ।"

उत्साहित करते हुए प्रफुल्ल बाबू बोले, "सुंदर ! करे (किए) जाओ। खूब लिखो, लेकिन हाँ, छपाने की जल्दी मत करना।"

बातचीत से स्पष्ट था कि राय महोदय उन्हें अपना कोई पुराना छात्र समझ रहे हैं। विनीत भाव से उन्होंने कहा, "छापने लायक कुछ नहीं है। बस चेष्टा करता हूँ।"

जिस छात्र के साथ शरत् बाबू आए थे वह अब अपने को न रोक सका। प्रफुल्ल बाबू के पास आकर उसने कहा, "जी, ये शरत् बाबू हैं।"

सुनते ही प्रफुल्लचंद्र राय ने चश्मे के ऊपर से शरत्चंद्र को एक बार अच्छी तरह देखा। फिर उठकर तुरंत द्वार पर आए और अपने प्रिय शिष्यों के नाम ले-लेकर पुकारने लगे। क्षण-भर में वहाँ एक छोटी-सी भीड़ जमा हो गई। उनको लेकर सेनापति की तरह वे आगे-आगे घर में घुसे। शरत् बाबू की ओर उँगली से दिखाकर बोले, "देखते हो, उधर कौन बैठा है ? ये हैं श्री शरत्चंद्र चट्टोपाध्याय। उधर देखो उनकी सब पुस्तकें हैं, आज स्वयं भी आए हैं। अच्छी तरह देखो। पैरों की धूल लो।"

उसके बाद शरत्चंद्र के पास आकर बैठ गए और एक अंतरंग मित्र की तरह बातें करने लगे। बोले, "आपकी पुस्तकें पढ़कर कितनी बार बातचीत करने की इच्छा हुई है। आज इतने दिन बाद वह पूरी हुई।"

इस बातचीत में अपरिचय के कारण प्रारंभ में जो भूल हो गई थी, उसके लिए क्षमा-प्रार्थना करने की सुधि भी नहीं उन्हें रही। जहाँ स्नेह हो वहाँ क्षमा कोई अर्थ नहीं रखती।

उनके सारे जीवन की तरह यह मिलन भी रोमांचकारी है। महात्मा गांधी से उनकी प्रथम भेंट भी संभवतः इतनी ही रोमांचकारी रही होगी। परंतु उसका कोई विवरण किसी ने नहीं लिखा। बहुत पहले रंगून में उन्होंने महात्मा जी को देखा था। उनके स्वागत समारोह की रिपोर्ट भी उन्होंने लिखी थी। वह रिपोर्ट रंगून गज़ट में छपी थी, लेकिन भारत में उनकी महात्मा जी से जिस भेंट का विवरण उपलब्ध है, वह चरखे को लेकर ही है। राय महोदय की तरह महात्मा जी ने भी उनके कते सूत की प्रशंसा की थी। असहयोग आंदोलन के समय जब वे कोलकाता

आए थे तो एक दिन 'सर्वेंट' का कार्यालय देखने के लिए गए। देशबंधु दास के घर से और भी कई व्यक्ति उनके साथ थे। श्री श्यामसुंदर चक्रवर्ती उस समय बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। वह भी थे, शरत्चंद्र भी थे। कार्यालय में पहुँचकर महात्मा जी ने सबके साथ चरखा कातने की इच्छा प्रकट की।

चरखे आए और सब कातने लगे। महात्मा जी की दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण थी। तुरंत ही उन्होंने देख लिया कि शरत् बाबू का सूत बहुत सुंदर है। इसके विपरीत श्याम बाबू बहुत मोटा कात रहे हैं।

परिहास के स्वर में बोले, "अरे, देखो तो, बंगाल प्रांतीय कांग्रेस के प्रधान रस्से जैसा मोटा सूत कात रहे हैं।"

सुनकर सब हँस पड़े। शरत्चंद्र बोले, "मंदिर के जो जितना पास होता है। भगवान से उतना ही दूर होता है।"

महात्माजी ने कहा, "शरत् बाबू, आपकी चरखे में श्रद्धा नहीं है ?"

"नहीं, रत्ती भर नहीं।"

"महात्मा जी ने कहा, "लेकिन कातते तो आप चरखे के अनेक प्रेमियों से अच्छा है।"

शरत् बोले, "मैं चरखे को नहीं, आपको प्यार करता हूँ। मैंने चरखा कातना इसीलिए सीखा है।"

महात्मा जी हँस पड़े। बोले, "लेकिन आप इस बात में विश्वास नहीं करते कि कातने से स्वराज्य-प्राप्ति में सहायता मिलेगी ?"

शरत्चंद्र ने हँसते हुए कहा, "जी नहीं, मैं विश्वास नहीं करता। मेरे विचार में स्वराज्य-प्राप्ति में सिपाही ही सहायक हो सकते हैं, चरखे नहीं।"

यह बात सुनकर महात्मा जी बड़े ज़ोर से हँस पड़े।

लेकिन विश्वास हो या न हो, चरखे के लिए कुछ करने में उन्होंने कोई कसर उठा न रखी। छूट गया ऐश्वर्य, छूट गई सिल्क की पोशाक, रह गया बस खद्दर। तेल की बनी पकौड़ी-कचौड़ी, यहाँ तक कि भुने हुए चने खा-खा कर गाँव-गाँव चरखे का प्रचार करते वे घूमे। वे स्वयं कातते थे, घर के दूसरे लोग कातते थे, नौकर तक कातते थे और चकमा देते थे। शरत् पूछते, "*क्यों रे, अमुक काम क्यों नहीं किया ?*"

जवाब मिला, "चरखा कात रहा था।"

(*'आवारा मसीहा'* से)

प्रश्न -अभ्यास

मौखिक

1. महात्मा गांधी ने किस संदर्भ में कहा कि मैं सत्याग्रह आरंभ कर दूँगा ?
2. तिलक के प्रति शरत्चंद्र की सच्ची श्रद्धा का पता कैसे चलता है ?
3. असहयोग आंदोलन के अंतर्गत देशवासियों को क्या सलाह दी गई थी ?
4. चरखे में विश्वास न होने पर भी शरत्चंद्र चरखा क्यों कातते थे ?
5. शरत्चंद्र ने खादी के प्रचार के लिए क्या-क्या कार्य किए ?

लिखित

1. रवींद्रनाथ के 'सर' की उपाधि लौटा देने पर शरत्चंद्र ने चित्तरंजनदास से यह क्यों कहना चाहा कि आज हमारी छाती दस हाथ फूल गई या नहीं ?
2. लेखक ने प्रफुल्लचंद्र राय और शरत्चंद्र के प्रथम मिलन को असाधारण घटना क्यों कहा है ?
3. शरत्चंद्र ने साहित्यिकों को राजनीति से कटकर रहने को भूल क्यों माना है ?
4. उन प्रसंगों का उल्लेख कीजिए जिनसे पता लगता है कि देश के मुक्ति आंदोलन में पूर्ण विश्वास के बावजूद उसके सारे कार्यक्रम में उनकी पूरी श्रद्धा नहीं थी ।

5. 'मंदिर के जो जितना पास होता है भगवान से उतना दूर होता है ।' शरत्चंद्र ने यह किस प्रसंग में कहा और इसका क्या आशय है ?
6. उन प्रसंगों का वर्णन कीजिए जिनसे शरत्चंद्र के निम्नलिखित गुणों पर प्रकाश पड़ता है —

   विनम्रता, नेता में अटूट आस्था, अनुशासनप्रियता, स्पष्टवादिता, समर्पित देशभक्त ।

भाषा-अध्ययन

नीचे कुछ शब्द दिए गए हैं । प्रत्येक शब्द के सामने उसके अर्थ को व्यक्त करने वाला शब्द पाठ में से चुनकर लिखिए।

शब्द	पाठ में प्रयुक्त शब्द
अभूतपूर्व	
अमानुषिक	
असाधारण	
अपरिचय	

योग्यता-विस्तार

1. पाठ में आए स्वतंत्रता सेनानियों के स्वाधीनता संग्राम में योगदान के विषय में जानकारी प्राप्त कीजिए और उनमें से कुछ के संबंध में चर्चा कीजिए ।
2. शरत्चंद्र की कुछ प्रसिद्ध रचनाएँ पढ़िए ।

शब्दार्थ और टिप्पणी

लोकप्रियता — लोगों की पसंद
चरम — सर्वोच्च
क्रांति — परिवर्तन
उदय — उगना, प्रकट होना
क्षितिज — वह स्थान जहाँ पृथ्वी और आकाश मिलते हुए प्रतीत होते हैं
ब्रिटिश क्राउन — अंग्रेज़ सरकार
वफ़ादारी — निष्ठा

केंचुल	—	साँप की परिवर्तनशील त्वचा
प्रथम महायुद्ध	—	सन् 1914 से 1918 तक हुआ विश्वयुद्ध
रंग भेद	—	काले गोरे के बीच किया जाने वाला भेद-भाव
अमानुषिक	—	बर्बर
बैसाखी	—	13 अप्रैल को मनाया जाने वाला संक्रांति का त्यौहार
भुजंग	—	साँप
नाइटहुड	—	ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली 'सर' की उपाधि
सी. आर. दास	—	देशभक्त भारतीय नेता चित्तरंजन दास
लोकमान्य	—	बाल गंगाधर तिलक के लिए सम्मानसूचक शब्द
कौस्तुभ	—	विष्णु के गले की मणि
आलोड़ित	—	मथ डालना
उत्तरदायित्व	—	जिम्मेदारी
पटु	—	कुशल
मुक्ति	—	आज़ादी
रंचमात्र	—	तनिक सा भी
अंतरंग	—	बहुत नज़दीकी, हमराज़
सुधि	—	याद
हरिलक्ष्मी	—	शरत्चंद्र की एक लोकप्रिय कहानी'
रौलेट एक्ट	—	सन 1918 में भारत की ब्रिटिश सरकार ने एक एक्ट बनाया जिसके अनुसार किसी भी भारतीय नागरिक को बिना वारंट के राजद्रोह के जुर्म में गिरफ्तार किया जा सकता था । भारतीयों ने इसे काला कानून कहा।
असहयोग कार्यक्रम	—	भारत से अंग्रेज़ी साम्राज्य को हटाने के लिए गांधी जी ने एक योजना बनाई जिसमें उन्होंने जनता से अपील की कि लोग सरकारी कार्यालयों, अदालतों, शिक्षा संस्थानों आदि में सरकार का साथ न दें।

हरिशंकर परसाई

हरिशंकर परसाई का जन्म सन 1922 में होशंगाबाद (मध्यप्रदेश) के जमानी ग्राम में हुआ। स्नातक स्तर तक मध्यप्रदेश में ही शिक्षा ग्रहण करने के बाद नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. कर अध्यापन कार्य प्रारंभ किया किंतु कुछ ही वर्षों में नौकरी का मोह छोड़कर स्वतंत्र लेखन को अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया। इन्होंने जबलपुर से 'वसुधा' नामक साहित्यिक पत्रिका निकाली और विषम आर्थिक परिस्थितियों में भी अनेक वर्षों तक उसे चलाते रहे। परसाई जी का निधन सन 1995 में हुआ।

परसाई जी ने यद्यपि कहानी, उपन्यास और निबंधों की रचना भी की है किंतु उन्हें सर्वाधिक प्रसिद्धि व्यंग्य रचनाओं से ही मिली है। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं– ***रानी नागफनी की कहानी, तट की खोज*** *(उपन्यास),* ***हँसते हैं रोते हैं, जैसे उनके दिन फिरे*** *(कहानी संग्रह),* ***वैष्णव की फिसलन, तिरछी रेखाएँ, ठिठुरता हुआ गणतंत्र, विकलांग श्रद्धा का दौर*** *(व्यंग्य),* ***तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमानी की परत, पगडंडियों का ज़माना, सदाचार की ताबीज़,*** *और* ***अंत में*** *(निबंध संग्रह)। व्यंग्य शैली परसाई की लेखनी में ऐसी रची-बसी है कि उनके निबंध, कहानी, उपन्यासों में भी व्यक्ति और समाज की कमज़ोरियों पर करारी चोट की गई है।*

परसाई का व्यंग्य केवल मनोरंजन के लिए नहीं है, इसलिए वह केवल गुदगुदाता नहीं, भीतर तक कचोटता है। वे बार-बार पाठक का ध्यान व्यक्ति और समाज की उन कमज़ोरियों और विसंगतियों की ओर आकृष्ट करते हैं जो हमारे जीवन को दूभर बना रही हैं। राजनीतिज्ञ, शासक, लालफीता शाह और समाज के विविध व्यक्तियों, चरित्रों के फरेबों

और आडबंरों पर उन्होंने तिलमिला देने वाले व्यंग्य किए हैं तथा विकृतियों को खोलकर सामने रख दिया है।

हमारे समाज में अनेक प्रकार की रूढ़ियाँ और कुरीतियाँ पाई जाती हैं, जिन्हें मध्यवर्गीय लोगों ने भ्रमवश अपनी मर्यादा का (नाक का) प्रश्न बना रखा है। ***दो नाक वाले लोग*** *में लेखक ने इसी विकृति पर ज़ोरदार प्रहार किया है और मर्यादा के इस मिथ्याजाल को तोड़ने का प्रयास किया है।*
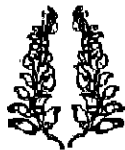
दो नाक वाले लोग

मैं उन्हें समझा रहा था कि लड़की की शादी में टीम-टाम में व्यर्थ खर्च मत करो। पर वे बुज़ुर्ग कह रहे थे, 'आप ठीक कहते हैं, मगर रिश्तेदारों में नाक कट जाएगी।' नाक उनकी काफ़ी लंबी थी। मेरा ख़्याल है, नाक की हिफ़ाज़त सब से ज़्यादा इसी देश में होती है। और या तो नाक बहुत नर्म होती है या छुरा तेज़, जिससे छोटी-सी बात से भी नाक कट जाती है। छोटे आदमी की नाक बहुत नाज़ुक होती है। यह छोटा आदमी नाक को छिपाकर क्यों नहीं रखता?

कुछ बड़े आदमी, जिनकी हैसियत है, इस्पात की नाक लगवा लेते हैं और चमड़े का रंग चढ़वा लेते हैं। कालाबाज़ार में जेल हो आए हैं, लोग उस्तरा लिए नाक काटने को घूम रहे हैं। मगर काटें कैसे? नाक तो स्टील की है। चेहरे पर पहले-जैसी ही फ़िट है और शोभा बढ़ा रही है।

स्मगलिंग में पकड़े गए हैं। हथकड़ी पड़ी है। बाज़ार में से ले जाए जा रहे हैं। लोग नाक काटने को उत्सुक हैं। पर वे नाक तो तिजोरी में रखकर स्मगलिंग करने गए थे। बरी होकर लौटेंगे और नाक फिर पहन लेंगे।

और जो नाक रखते ही नहीं हैं, उन्हें तो कोई डर ही नहीं है। दो छेद हैं, जिनसे साँस ले लेते हैं।

कुछ नाकें गुलाब के पौधे की तरह होती हैं। कलम कर दो तो और अच्छी शाखा बढ़ती है और फूल भी बढ़िया लगते हैं। मैंने ऐसी फूल वाली खुशबूदार नाकें बहुत देखी हैं। जब खुशबू कम होने लगती है, ये फिर कलम करा लेते हैं, जैसे किसी को छेड़ दिया और जूते खा गए।

'जूते खा गए'–अजब मुहावरा है। जूते तो मारे जाते हैं। वे खाए कैसे जाते हैं?

नाक और तरह से भी बढ़ती है। एक दिन एक सज्जन आए। बड़े दुखी थे। कहने लगे, "हमारी तो नाक कट गई। लड़की ने भागकर एक विजातीय लड़के से शादी कर ली। हम ब्राह्मण और लड़का कलाल ! नाक कट गई।"

मैंने उन्हें समझाया कि कटी नहीं है, कलम हुई है। तीन-चार महीनों में और बढ़ जाएगी।

तीन-चार महीने बाद वे मिले तो खुश थे। नाक भी पहले से लंबी मालूम होती थी।

वे बोले, "हाँ, कुछ बढ़ गई है। काफ़ी लोग कहते हैं--आपने बड़ा क्रांतिकारी काम किया। कुछ बिरादरी वाले भी कहते हैं। इसीलिए नाक बढ़ गई है।"

कुछ लोग मैंने देखे हैं, जो कई साल अपने शहर की नाक रहे हैं। उनकी नाक अगर कट जाए, तो सारे शहर की नाक कट जाती है। अगर उन्हें संसद का टिकिट न मिले, तो सारा शहर नकटा हो जाता है।

मगर बात मैं उन सज्जन की कर रहा था, जो मेरे सामने बैठे थे और लड़की की शादी पुराने ठाठ से ही करना चाहते थे। पहले वे रईस थे–याने मध्यम हैसियत के रईस। अब गरीब थे। बिगड़ा रईस और बिगड़ा घोड़ा एक तरह के होते हैं–दोनों बौखला जाते हैं। किससे उधार लेकर खा जाएँ, ठिकाना नहीं। उधर बिगड़ा घोड़ा किसे कुचल दे, ठिकाना नहीं। आदमी को बिगड़े रईस और बिगड़े घोड़े, दोनों से दूर रहना चाहिए।

तो जो भूतपूर्व संपन्न बुजुर्ग मेरे सामने बैठे थे, वे प्रगतिशील थे। लड़की का अंतर्जातीय विवाह कर रहे थे। वे खत्री और लड़का शुद्ध कान्यकुब्ज। वे खुशी से शादी कर रहे थे। पर उनमें विरोधाभास यह था कि शादी ठाठ से करना चाहते थे। बहुत लोग एक परंपरा से छुटकारा पा लेते हैं, पर दूसरी से बँधे रहते हैं। रात को शराब की पार्टी से किसी ईसाई दोस्त के घर से आ रहे हैं, मगर रास्ते में हनुमान का मंदिर दिख जाए, तो थोड़ा तिलक भी सिंदूर का लगा लेंगे।

तो मैं उन बुज़ुर्ग को समझा रहा था, "आपके पास रुपए हैं नहीं। आप कर्ज़ लेकर शादी का ठाठ बनाएँगे। पर कर्ज़ चुकाएँगे कहाँ से? जब आपने इतना नया कदम उठाया है, कि अंतर्जातीय विवाह कर रहे हैं, तो विवाह भी नए ढंग से कीजिए। लड़का कान्यकुब्ज का है। बिरादरी में शादी करता तो कई हज़ार उसे मिलते। लड़का इतना त्याग तो लड़की के प्रेम के लिए कर चुका। फिर भी वह कहता है— अदालत जाकर शादी कर लेते हैं। बाद में एक पार्टी कर देंगे। आप आर्यसमाजी हैं। घंटे-भर में रास्ते में आर्य समाज मंदिर में वैदिक रीति से शादी कर डालिए। फिर तीन-चार सौ रुपयों की एक पार्टी दे दीजिए। लड़के को एक पैसा भी नहीं चाहिए। लड़की के कपड़े-वगैरह मिलाकर शादी हज़ार में हो जाएगी।"

वे कहने लगे, "बात आप ठीक कहते हैं। मगर रिश्तेदारों को तो बुलाना ही पड़ेगा। फिर जब वे आएँगे तो इज़्ज़त के ख्याल से सजावट, खाना, भेंट वगैरह देनी होगी।"

मैंने कहा, "आपका यहाँ तो कोई रिश्तेदार है नहीं। वे हैं कहाँ?"

उन्होंने जवाब दिया, "वे पंजाब में हैं। पटियाला में ही तीन करीबी रिश्तेदार हैं। कुछ दिल्ली में हैं। आगरा में हैं।"

मैंने कहा, "जब पटियाला वाले के पास आपका निमंत्रणपत्र पहुँचेगा, तो पहले तो वह आपको दस गालियाँ देगा—मई का यह मौसम, इतनी गरमी। लोग तड़ातड़ लू से मर रहे हैं। ऐसे में इतना खर्च लगाकर जबलपुर जाओ। कोई बीमार हो जाए तो और मुसीबत। पटियाला या दिल्ली वाला आपका निमंत्रण पाकर खुश नहीं, दुखी होगा। निमंत्रणपत्र न मिला तो वह खुश होगा और बाद में बात बनाएगा।" कहेगा—"आजकल जी डाक की इतनी गड़बड़ी हो गई है कि निमंत्रणपत्र ही नहीं मिला। वरना ऐसा हो सकता था कि हम न आते।"

मैंने फिर कहा, "मैं आपसे कहता हूँ कि दूर से रिश्तेदार का निमंत्रणपत्र मुझे मिलता है, तो मैं घबरा उठता हूँ।"

सोचता हूँ जो ब्राह्मण ग्यारह रुपए में शनि को उतार दे, पच्चीस रुपयों में सगोत्र विवाह करा दे, मंगली लड़की का मंगल पंद्रह रुपए में उठाकर शुक्र के दायरे में फेंक दे, वह लग्न

सितंबर से लेकर मार्च तक सीमित क्यों नहीं कर देता? मई और जून की भयंकर गरमी के लग्न गोल क्यों नहीं कर देता? वह कर सकता है। और फिर ईसाई और मुसलमानों में जब बिना लग्न शादी होती है, तो क्या वर-वधू मर जाते हैं? आठ प्रकार के विवाहों में जो 'गंधर्व विवाह' है, वह क्या है? वह यही शादी है जो आज होने लगी है कि लड़के-लड़की भागकर कहीं शादी कर लेते हैं। इधर लड़की का बाप गुस्से में पुलिस में रिपोर्ट करता है कि अमुक लड़का हमारी 'नाबालिग' लड़की को भगा ले गया है। मगर कुछ नहीं होता; क्योंकि लड़की मैट्रिक का सर्टिफिकेट साथ ले जाती है जिसमें जन्मतिथि होती है।

वे कहने लगे, "नहीं जी, रिश्तदारों में नाक कट जाएगी।"

मैंने कहा, "पटियाला से इतना किराया लगाकर नाक काटने इधर कोई नहीं आएगा। फिर पटियाला में कटी नाक को इधर कौन देखेगा? काट लें पटियाला में।"

वे थोड़ी देर गुम-सुम बैठे रहे।

मैंने कहा, "देखिए जी, आप चाहें तो मैं पुरोहित हो जाता हूँ, और घंटे भर में शादी करा देता हूँ।"

वे चौंके। कहने लगे, "आपको शादी कराने की विधि आती है?"

मैंने कहा, "हाँ, ब्राह्मण का बेटा हूँ। बुज़ुर्गों ने सोचा होगा कि लड़का नालायक निकल जाए और किसी काम-धंधे के लायक न रहे, तो इसे कम-से-कम सत्यनारायण की कथा और विवाहविधि सिखा दो। ये मैं बचपन में ही सीख गया था।"

मैंने आगे कहा, "और बात यह है कि आज-कल कौन संस्कृत समझता है? और पंडित क्या कह रहा है, इसे भी कौन सुनता है? वे तो 'अम' और 'अह' इतना ही जानते हैं। मैं इस तरह मंगल श्लोक पढ़ दूँ तो भी कोई ध्यान नहीं देगा—

ओम जेक एंड जिल वेंट अप दी हिल टु फेच ए पेल आफ वाटरम्,
ओम जेक फैल डाउन एंड ब्रोक हिज़ क्राऊन एंड जिल केम टंबलिंग आफ्टरम्

कुर्यात् सदा मंगलम्.....

इसे लोग वैदिक मंत्र समझेंगे।"

वे हँसने लगे।

मैंने कहा, "लड़का उत्तरप्रदेश का कान्यकुब्ज और आप पंजाब के खत्री। एक-दूसरे के रिश्तेदारों को कोई नहीं जानता। आप एक सलाह मेरी मानिए। इससे काम में भी निपट जाएगा और नाक भी कटने से बच जाएगी। लड़के के पिता की मृत्यु हो चुकी है। आप घंटे-भर में शादी करवा दीजिए। फिर रिश्तेदारों को चिट्ठियाँ लिखिए—"इधर लड़के के पिता को दिल का तेज़ दौरा पड़ा। डाक्टरों ने उम्मीद छोड़ दी थी। दो-तीन घंटे वे किसी तरह जी सकते थे। उन्होंने इच्छा प्रगट की कि मृत्यु के पहले लड़के की शादी हो जाए तो मेरी आत्मा को शांति मिल जाएगी। लिहाज़ा उनकी भावना को देखते हुए हमने फ़ौरन शादी कर दी। लड़का-लड़की वर-वधू के रूप में उनके सामने आए। उनके चरणों पर सिर रखे। उन्होंने इतना ही कहा—सुखी रहो। और उनके प्राण-पखेरू उड़ गए। आप माफ़ करेंगे कि इसी मजबूरी के कारण हम आपको शादी में नहीं बुला सके। कौन जानता है आपके रिश्तेदारों में कि लड़के के पिता की मृत्यु कब हुई?"

उन्होंने सोचा। फिर बोले, "तरकीब ठीक है जी ! पर इस तरह की धोखाधड़ी मुझे पसंद नहीं।"

खैर, मैं उन्हें काम का आदमी लगा नहीं।

दूसरे दिन मुझे बाहर जाना पड़ा। दो-तीन महीने बाद लौटा तो लोगों ने बताया कि उन्होंने सामान और नकद लेकर शादी कर डाली।

तीन-चार दिन बाद से ही साहूकार सबेरे से तकादा करने आने लगे।

रोज़ उनकी नाक थोड़ी-थोड़ी कटने लगी।

मैंने पूछा, "अब क्या हाल है?"

लोग बोले, "अब साहूकार आते हैं, तो यह देखकर निराश लौट जाते हैं कि काटने को नाक ही नहीं बची।"

मैंने मज़ाक में कहा, "साहूकारों से कह दो कि इनकी दूसरी नाक पटियाला में पूरी रखी है। वहाँ जाकर काट लो।"

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. लड़की के पिता को अपनी नाक कट जाने का भय क्यों था?
2. लेखक ने बिगड़े रईस की तुलना किससे की है और किन कारणों से?
3. लेखक ने किन लोगों को दो नाक वाले कहा है और क्यों?
4. लड़की के पिता को लेखक काम का आदमी क्यों नहीं लगा?
5. बुज़ुर्ग ने लेखक की सलाह क्यों नहीं मानी और पुत्री का विवाह किस प्रकार किया?
6. दूर के रिश्तेदार का निमंत्रणपत्र मिलने पर लेखक क्यों घबरा उठता है?

लिखित

1. 'छोटे आदमी की नाक बहुत नाज़ुक होती है।' इसमें छोटा आदमी किन्हें कहा गया है और उनकी नाक नाज़ुक क्यों होती है?
2. 'नाक तो स्टील की है।' 'पर वे नाक तो तिजोरी में रखकर स्मगलिंग क़रने गए थे।' उपर्युक्त कथनों द्वारा लेखक ने अपराधी वर्ग की किस मानसिकता पर प्रहार किया है?
3. लेखक ने ब्राह्मण सज्जन के कथन पर यह टिप्पणी क्यों की 'नाक कटी नहीं है, कलम हुई है?'
4. 'बहुत से लोग एक परंपरा से छुटकारा पा लेते हैं पर दूसरी से बँधे रहते हैं।' यह वाक्य रईस प्रगतिशील बुज़ुर्ग पर किस प्रकार ख़रा उतरता है?
5. लेखक ने लड़की के पिता को उसकी नाक बचाने के लिए क्या-क्या उपाय सुझाए?

6. भारतीय मध्यवर्ग अपनी प्रतिष्ठा बचाने के प्रयत्न में जुटा रहता है। सोदाहरण टिप्पणी कीजिए।
7. इस पाठ के शीर्षक की सार्थकता पर टिप्पणी कीजिए और कोई अन्य उपयुक्त शीर्षक भी सुझाइए।
8. इस पाठ में किन-किन सामाजिक रूढ़ियों पर व्यंग्य किया गया है?
9. आशय स्पष्ट कीजिए-
   (क) नाक की हिफ़ाज़त सबसे ज़्यादा इसी देश में होती है।
   (ख) कुछ नाकें गुलाब के पौधों की तरह होती हैं।
   (ग) जो नाक रखते ही नहीं, उन्हें तो कोई डर ही नहीं। दो छेद हैं, जिनसे साँस ले लेते हैं।
10. इस लेख में लेखक ने छोटे-छोटे कथनों द्वारा अत्यंत पैने व्यंग्य किए हैं। ऐसे कुछ कथन चुनिए। उनमें से जो कथन आपको अधिक अच्छा लगा, उसमें निहित व्यंग्य पर प्रकाश डालिए।

भाषा-अध्ययन

1. निम्नलिखित मुहावरों का अपने वाक्यों में प्रयोग कीज़िए—
   नाक कटना, नाक रखना, नाक का बाल होना, नाक के नीचे होना, नाक घिसना, नाक चढ़ाना, नाक रगड़ना, नाकों चने चबवाना।
2. निम्नलिखित शब्दों से बने विशेषण इस पाठ में आए हैं। उन्हें चुनकर लिखिए—
   जाति, भूख, खुशबू, प्रगति, क्रांति, वेद।

योग्यता-विस्तार

1. 'दोहरी मानसिकता और मध्य वर्ग' विषय पर निबंध लिखिए।
2. हरिशंकर परसाई की कुछ अन्य व्यंग्य रचनाएँ पढ़िए और उन पर कक्षा में चर्चा कीजिए।

शब्दार्थ- टिप्पणी

विजातीय	–	दूसरी जाति का
हैसियत	–	सामर्थ्य, आर्थिक क्षमता
कलाल	–	शराब बेचने वाली जाति विशेष
कलम करना	–	पुनः विकास के लिए काटना
गोल करना	–	गायब कर देना
लग्न	–	शुभ मुहूर्त
नाबालिग	–	अवयस्क
बौखलाना	–	क्रोध से पागल हो जाना, आवेश में आना
कान्यकुब्ज	–	ब्राह्मणों का एक वर्ग

मुहावरे

तकादा करना	–	कर्ज़ की वापसी की माँग
नाक कटना	–	इज़्ज़त जाना
नाक होना	–	सम्मान, प्रतिष्ठा पाना

कमलेश्वर

कमलेश्वर का जन्म सन 1932 में मैनपुरी (उ.प्र.) में हुआ। उन्होंने इलाहाबाद से इंटर, बी.ए. तथा एम.ए. की पढ़ाई पूरी की। आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्हें जीविका के लिए तरह-तरह के काम करने पड़े, जिनमें पुस्तक और पत्र-पत्रिकाओं की प्रूफ़रीडिंग से लेकर साइनबोर्ड पेंटिंग और ब्रुक बांड चाय के गोदाम की चौकीदारी भी शामिल है। बाद में कमलेश्वर ने 'विहान', 'नई कहानियाँ ', 'सारिका', 'श्रीवर्षा', 'कथायात्रा', 'गंगा' आदि पत्रिकाओं तथा 'जागरण' एवं 'भास्कर' आदि दैनिक पत्रों का संपादन किया। वे दूरदर्शन के अतिरिक्त महानिदेशक भी रहे।

कमलेश्वर ने आकाशवाणी और दूरदर्शन के लिए भी काफ़ी लिखा, नए कार्यक्रमों की शुरुआत की और टेलीफिल्मों का निर्माण किया। कमलेश्वर ने कलात्मक और व्यावसायिक फिल्मों के लिए भी काफ़ी लिखा।

कमलेश्वर की पहली कहानी 'कामरेड' सन 1948 में प्रकाशित हुई थी। तब से अब तक वे अपने लेखन में निरंतर सक्रिय हैं। कमलेश्वर ने सामाजिक असमानता, शोषण और वर्गीय असमानता के विरुद्ध खूब लिखा। वे यह मानते हैं कि साहित्य का कोई रूप मनुष्य से बड़ा या उससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकता।

राजा निरबंसिया, कस्बे का आदमी, खोई हुई दिशाएँ, माँस का दरिया, बयान, जार्ज पंचम की नाक, ज़िंदा मुर्दे, *आदि उनके चर्चित कथा संग्रह हैं।* ***एक सड़क सत्तावन गलियाँ, लौटे हुए मुसाफ़िर, डाक बंगला, समुद्र में खोया हुआ आदमी,***

काली आँधी, एक और चंद्रकांता, तीसरा आदमी, कितने पाकिस्तान *आदि उनके उपन्यास भी चर्चित हुए हैं।* ***खंडित यात्राएँ*** *और* ***रात के बाद,*** *यात्रा संस्मरण भी पाठकों द्वारा सराहे गए हैं।* ***नई कहानी की भूमिका*** *और* ***मेरा पन्ना : समांतर सोच*** *उनकी आलोचना पुस्तकें हैं।* ***देश-देशांतर, घटनाचक्र*** *और* ***सिलसिला थमता नहीं*** *आदि विविध विषयों से संबंधित पुस्तकें हैं। इसके अलावा उन्होंने अनेक पुस्तकों का संपादन भी किया है, जिनमें* ***मेरा हमदम मेरा दोस्त, गर्दिश के दिन*** *और विभिन्न भारतीय भाषाओं के कहानी संग्रह उल्लेखनीय हैं।*

बर्फ़ के दरिया में साथ-साथ *कमलेश्वर का रोचक यात्रा वृत्तांत है। यात्रा के रोमांच को शब्दों में उतारकर पाठक को भी रोमांचित कर देने की अद्‌भुत क्षमता इस वृत्तांत में है। हिंदी के तीन प्रतिष्ठित लेखक— मोहन राकेश, उपेंद्रनाथ अश्क और कमलेश्वर— कश्मीर के एक दुर्गम ग्लेशियर के निकट भटक गए थे। परिवेश की भयावहता और कदम-कदम पर खतरों से जूझने का वर्णन पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं।*

बर्फ़ के दरिया में साथ-साथ

मोहन राकेश के कश्मीर पहुँचते ही यह तय हुआ कि उपेंद्रनाथ अश्क को श्रीनगर या पहलगाम में स्थापित करके हम दोनों कहीं और निकल जाएँगे—गुलमर्ग या किसी भी जगह ....हम बंजारों की तरह सिर्फ़ घूमेंगे और गप्पें लड़ाएँगे। अपने कलम होटल-मालिक के पास जमा करवा देंगे और लिखने-लिखाने का नाम नहीं लेंगे। जो लिखता हुआ पकड़ा जाएगा, वह दूसरे दिन के घूमने, नाश्ते और खाने का पूरा खर्चा उठाएगा। इस नियम में कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा और अश्क जी से बहुत सीरियसली कहा जाएगा कि वे अपना कीमती वक्त बरबाद न करें, अपनी सेहत का ख्याल रखने के साथ-साथ साहित्य की सेहत का भी ख्याल रखें और एक मोटा उपन्यास या नाटक हर हालत में पूरा करें। यह मुमकिन न हो, तो अगली महान रचनाओं की रूपरेखा बनाएँ। यानी अश्क जी साहित्य में रहें और हम कश्मीर में!

पर अश्क के भी जीवट का जवाब नहीं! कोल्हाई चलने के लिए वे सुबह-सुबह ही हम दोनों से पहले उठकर तैयार हो गए थे और चीख़ रहे थे – "यारो! नौ मील का रास्ता है...जल्दी नहीं चलोगे तो मारे जाओगे..।"

पिछले दिन के सफ़र ने काफ़ी थका दिया था। पहलगाम से आड़ू और आड़ू से लिद्दरवट। हम सुबह उठकर लिद्दरवट के डाक-बँगले से कोल्हाई के लिए चल पड़े।

सचमुच रास्ता बहुत भयानक था और खतरनाक भी। दाहिनी ओर लिद्दर नदी बह रही थी, उसका पानी चट्टानों के नीचे था, और जगह-जगह जहाँ चट्टानों के बीच में खाली जगह थी—एकाएक पानी के गहरे कुंड आ जाते थे, जिनमें गिर जाने के बाद निकलना संभव

ही नहीं था। कुछ दूर पहुँचने पर रास्ता सँकरा होने लगा। बाईं ओर टूटे हुए पत्थरों के पहाड़ आ गए। दाहिनी ओर दरिया के उस पार देवदार के पेड़ बंद छातों की तरह उगे हुए थे।

कुछ दूर पर ही भोजपत्र का जंगल आया। यादगार-स्वरूप हमने कुछ छाल उतार कर ओवरकोट की जेबों में रख ली। भोजपत्र के जंगल के आगे रास्ता कुछ साफ़ था। घाटी भी खुल गई थी। तभी आराम से चलते-चलते ममदू ने कहा, "साब, कोल्हाई के ऊपर एक दूधसर लेक होता। बहोत ख़ूबसूरत लेक है...कश्मीर का सबसे खूबसूरत लेक!"

हमने हामी भर दी। सतलंजन का मैदान सामने था। उल्टे तिकोन की तरह। यह मैदान बहुत खौफ़नाक था। कभी भी नालों में पानी बढ़ सकता था और पूरा मैदान गहरी झील में तब्दील हो सकता था। हम कुछ देर रुकना भी चाहते थे पर ममदू ने आगाह किया, "कुछ पता नहीं साब! हम यहाँ रुकने का सलाह नई देंगा...क्या पता कब नालों में पानी आ जाए और निकलना मुश्किल हो जाए। मालूम नई पड़ेगा कि ऊपर पहाड़ पर पानी आ गया है। जल्दी-जल्दी पार करने का, साब।"

शायद ममदू कुछ ज़्यादा ही डरा हुआ था पर अनजानी जगहों में जानकारों की गैरज़रूरी बातों को भी मानना पड़ता है।

फिर पथरीली और बेहद पतली घाटियों में होते हुए हम एक ऐसी जगह पहुँच गए जहाँ से आगे का कोई रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। तीनों तरफ़ के पहाड़ सिमसिम की तरह बंद थे। सिर्फ़ वापस जाने वाला रास्ता खुला हुआ था। हम लोग रुक गए। ममदू ने आगे बढ़कर बताया, "इधर दाहिनी तरफ़ दर्रा है ... इसी दर्रा में दो मील आगे कोल्हाई ग्लेशियर है। उदर उसके पास तक कोई नई जा सकता। इदर मोड़ पर मुड़ते ही बरफ़ नदी दिखाई पड़ेगा और बरफ़ का छोटा-सा झील जिससे लिद्दर का दरिया निकलता है ..."

चारों ओर सन्नाटा था। एक चिड़िया तक कहीं नहीं थी। तीनों ओर नीले-नीले पहाड़ खड़े थे। जैसे वे बर्फ़ीली हवाओं से नीले पड़ गए हों! ऊपर आसमान साफ़ था। घड़ी देखी तो साढ़े ग्यारह बज रहे थे। हम तीनों ही खामोश थे। वीरान सौंदर्य चारों ओर बिखरा हुआ था।

नदी की धारा उथली थी पर बहुत तेज़। जंगल पीछे छूट गए थे। घास और ठिगनी झाड़ियों के अलावा और कुछ नहीं था वहाँ। हलकी नीली, हरी और सिलेटी चट्टानों के पहाड़ संन्यासियों की तरह चुप खड़े थे।

हम सब दर्रे की ओर बढ़ गए। दाहिनी ओर मुड़ते ही तिलस्म का दरवाज़ा खुल गया और सामने फिर एक मैदान आ गया। दूर पर कोल्हाई ग्लेशियर गाय की बेहद चौड़ी जीभ की तरह ज़मीन पर पसरा हुआ था और उस झील से बर्फ़ीले पानी की पचास-साठ छोटी-बड़ी धाराएँ निकल रही थीं यही लिद्दर नदी का स्रोत था। हम ढलवाँ पहाड़ों पर बाईं ओर खड़े थे। ग्लेशियर पर धूप सतरंगी होकर चमक रही थी और बर्फ़ की छोटी-बड़ी नुकीली चोटियाँ बर्फ़ के मुकुटों की तरह दमक रही थीं। रोशनी की आभा उन पर पड़कर लौट रही थी और घाटी के सामने वाले पहाड़ चकाचौंध हो रहे थे।

घड़ी चार बजा रही थी और पहाड़ियों की शृंखलाएँ जो परदे की तरह उठती जा रही थीं, खत्म ही नहीं हो रही थीं। अश्क भी हताश-से थे। मैं भी बुरी तरह ऊबा-ऊबा हुआ था। घोड़े और घोड़े वाले वहीं नीचे छूट गए थे। सिर्फ़ ममदू साथ था। आखिर अश्क ने कड़ी आवाज़ में ममदू से पूछा, "किधर है तुम्हारा दूधसर?"

"बस, पहाड़ी के उस पार!" ममदू ने बड़ी आसानी से कहा और आगे बढ़ने लगा। उसकी पीठ पर कुछ ज़रूरी सामान बँधा हुआ था, इसलिए वह भालू की तरह मटक-मटक कर चल रहा था।

आखिर बुरी तरह लस्त होकर जब हम एक ऊँचाई पर पहुँचे तो सारी थकान धुल गई थी। नीचे पहाड़ों से घिरी दूधसर झील नगीने की तरह चमक रही थी! पानी दूध की तरह निर्मल था। चारों ओर एकदम खामोशी थी। निर्जन एकांत! उसके पानी पर बर्फ़ के सिंहासन तैर रहे थे और सिंहासनों के आस-पास बर्फ़ के ही हंस जैसे टुकड़े! झील के पानी की ठंडक से ही पहाड़ों के पैरों पर धूल की तरह बर्फ़ जमी हुई थी। झील की रोशनी पहाड़ों पर पड़ रही थी और पहाड़ों की छाया झील में! तैरते बर्फ़ की बर्छियाँ भी थीं। नुकीली, चमचमाती। कुछ तैरते

टुकड़े बर्फ़ के पौधों की तरह लग रहे थे। उनकी छोटे-छोटी शाखाएँ शीशे की तरह चमक रही थीं।

ऊपर से डबडबाई शांत आँख की तरह लग रही थी दूधसर झील! साँप की आँख जैसा सम्मोहन था उसमें। मैं चुपचाप नीचे उतर गया। नीचे उतरते ही एक बादल आकर शामियाने की तरह तन गया ऊपर! मैं कुछ देर आँखें बंद किए बैठा रहा। एक अंजलि पानी भरा और पी गया। भीतर तक सर्दी की लहर दौड़ती चली गई।

मैं देखता रहा —बर्फ़ के श्वेतपंखी हंस धीरे-धीरे तैर रहे थे। जमी हुई बर्फ़ की छाया चाँदी की चादर की तरह उसके जहाँ-तहाँ खुल गए वक्ष से नीचे तल तक लहरा रही थी। राकेश भी नीचे आकर पास से झील को देखता रहा था।

इस वक्त तक छह बज गए थे। लेकिन झील की शांति और सुंदरता ने किसी तरह का तनाव नहीं रहने दिया था। अब हम झील से बाईं ओर की पहाड़ियाँ पार करते हुए उस रास्ते की खोज में आगे बढ़े, जो सीधा कोल्हाई पर उतरता था। वक्त के हिसाब से देश के अन्य भागों में शाम होनी शुरू हो गई होगी, पर उन पहाड़ियों पर उतना उजाला था कि अभी शाम का एहसास नहीं हो रहा था।

इसके बावजूद उस ऊँचाई से कोल्हाई ग्लेशियर का दृश्य अद्‌भुत था! ग्लेशियर पर अभी भी काफ़ी रोशनी थी। दोनों तरफ़ काले पड़ गए पहाड़ों के बीच बर्फ़ का वह दरिया मीलों लंबी सफ़ेद चादर की तरह पड़ा था। लगता था, दिन में उस दरिया ने उजाला सोखकर रात में अपने इस्तेमाल के लिए जमा कर लिया था ...बर्फ़ के दरिया पर जगह-जगह सदियों से जमी काली बर्फ़ की गोट लगी थी। बीच में साफ़, सफ़ेद चमचमाती बर्फ़ की चूने की चौड़ी सड़क थी। जगह-जगह बर्फ़ की मीनारें खड़ी थीं... खंडहरों की तरह। जैसे कोई बहुत बड़ा और विशाल बर्फ़ का महल ध्वस्त हो गया हो और उसके खंभे और मीनारें रह गई हों, मीलों दूर तक खड़ी। बर्फ़ के वे जबड़े सुंदर भी थे और भयानक भी। उन पर कोहरा लिपटा हुआ था जो ठहरे हुए धुएँ की तरह काँपता था। लगता था, ग्लेशियर साँस ले रहा है! दोनों ओर

थे पहाड़ और हमारी साँसें बंद थीं। सोखा हुआ उजाला कब खत्म हो गया पता ही नहीं चला। शाम अब रात में बदल चुकी थी।

आसमान पूरी तरह काला पड़ गया था। रात कितनी भयानक हो सकती है, इसका पहला एहसास हो रहा था ...कि तभी वह दुर्घटना हुई — .

मैं अपने को सँभाल नहीं पाया और बजरी वाले एक चिकने ढलान से फिसल गया। बारह-चौदह फुट नीचे यदि एक चौरस चट्टान न होती तो शायद हड्डियाँ भी न मिलतीं। मैं उस चट्टान पर आ गिरा था। मौत का झटका लगा था। काफ़ी देर मैं सन्नाटे में पड़ा रहा था। आखिर जब कुछ हिम्मत बँधी तो देखा—बजरी से ऊपर जाने का कोई तरीका नहीं था। अब सिवा नीचे उतरने के कोई चारा नहीं था। नीचे टूटी हुई चट्टानें थीं—पर कोई विकल्प नहीं था। चट्टानें इतनी भारी ज़रूर थीं जो दस पाँच आदमियों का बोझ सँभाल सकती थीं, वे बर्फीले अंधड़ की मार से ही खिसकती थीं। मैंने नीचे उतरना शुरू किया था, यह स्वीकार करके कि कोई भी क्षण मौत का क्षण हो सकता है। ग्लेशियर तक की उतराई करीब तीन सौ फुट थी। जैसे-तैसे मैं ग्लेशियर की तराई में पहुँच गया।

मैंने ऊपर देखा--राकेश, अश्क और ममदू कहीं नज़र नहीं आ रहे थे। कहीं वे लौट न गए हों, सोचते ही मेरे रोंगटे खड़े हो गए थे। अभी तो सामने पड़ा पूरा ग्लेशियर पार करना था ...बर्फ़ीले जबड़ों में से जाना था, तब कहीं जाकर उस पार रास्ता मिलेगा। भय से मेरा शरीर ठंडा पड़ता जा रहा था। बर्फ़ का दरिया सामने साँस ले रहा था। बर्फ़ पर से जाती हवा में अजीब-सी गूँज थी। तभी मेरा आधा शरीर सुन्न पड़ गया था। मैंने चाकू निकाल कर काली चट्टान को खोदा तो बर्फ़ की चीपें उतर आईं। वे सदियों से जमी बर्फ़ की काली चट्टानें थी जिन पर मैं खड़ा था। बाहर जमा देने वाली ठंड थी और सामने बर्फ़ का दरिया पड़ा था।

प्रकृति की रौद्र सुंदरता मेरे सामने थी। आखिर मैंने आवाज़ लगाई,"राकेश......!"

बर्फ़ की गुफ़ाओं से टकराकर आवाज़ गूँजती-गूँजती शायद ऊपर उठती गई और खो गई।

तभी राकेश की आवाज़ कुछ क्षणों के बाद लहराती-लहराती नीचे आई, "कमलेश्वर .....।"

आवाज़ों का यह अद्भुत खेल इतना विचित्र था कि मन सहमता भी था और सँभलता भी था, क्योंकि कोई नज़र नहीं आ रहा था। सिर्फ़ आवाज़ जाती थी और कहीं से दूसरी आवाज़ आती थी। आवाज़ को जाते और आते देखा जा सकता था।

तभी तीन सौ फुट ऊपर तीन धब्बे दिखाई दिए। सिग्नल देने के लिए मैंने अपना रूमाल जलाकर हिलाया ताकि वे जान जाएँ कि मैं नीचे पहुँच चुका हूँ।

आवाज़ों को हम देखते रहे। जलता हुआ रूमाल देखकर राकेश ने आवाज़ लगाई,"हम आ रहे हैं।"

रूमाल की रोशनी में वह आवाज़ देर तक नज़र आती रही।

रात के साढ़े नौ बज चुके थे। अब हमें ग्लेशियर पार करना था। दियासलाइयाँ, चाकू, सिगरेटें और टार्चें हमारे पास थीं। उन्हीं का सहारा था। बर्फ़ की नदी पार करने के लिए मूँज के जूते और नुकीली छड़ियाँ नहीं थीं। छड़ियों की कमी वहीं एकाध उगे हुए ठिगने पेड़ों के डंठल काट कर पूरी कर ली गई। यह भी अचरज की बात थी कि सरल डंठलों वाले दो छोटे पौधे वहाँ थे।

हम उठे और ग्लेशियर पार करने के लिए पहला कदम उठा। ममदू फिसलते-फिसलते बचा। सध कर हम आगे बढ़े। अभी आठ-दस कदम ही गए होंगे कि ग्लेशियर की एक नाली सामने आ गई। वह नाली दो-ढाई फुट चौड़ी थी, पर उसे पार करना एक मसला था। शीशे की तरह चिकनी सतह पर एक पैर से सँभलने और दूसरा पैर उस पर जमने तक के समय में फिसल जाना मामूली बात थी। हम हर जगह पैरों को बर्फ़ में घुमा-घुमा कर जब थोड़ा-सा पकड़ने वाला गड्ढा बना लेते थे, तभी दूसरा पैर आगे रखने की जुर्रत कर पाते थे, क्योंकि यह स्नो नहीं था, यह सख्त चिकनी बर्फ़ की ढलवाँ-सी चादर थी, जिस पर हम चल रहे थे। उस पतली नाली में एक इंच से ज़्यादा पानी नहीं था, पर उसकी ठंडक से पिंडलियाँ तक थर्रा जाती थीं। आखिर ममदू ने उसकी चिकनी सतह में पैर रखकर, घुमा-घुमाकर साँचा-सा बना दिया और उस साँचे में पैर रखकर हम तीनों पार हो गए।

मृत्यु का संकट अभी टला नहीं था। आगे के रास्ते की कोई खबर हमें नहीं थी। अभी तो ग्लेशियर ही पार नहीं हुआ था।

मैं तारीफ़ ही करूँगा अश्क जी के होशो-हवास की। उन्होंने ममदू के हाथ से एक टार्च ले ली और उसे इधर-उधर घुमाकर-घुमाकर वे न जाने क्या देख रहे थे। टार्चों के सैल जवाब दे रहे थे, पर वे इधर-उधर बजरी पर बार-बार रोशनी डालते और कुछ उठाकर अपने ओवरकोट की जेब में रख लेते। बजरी दिखाई देने लगी थी, यह इस बात का सबूत था कि हम ग्लेशियर के पार आ गए थे।

हमारी समझ में कुछ नहीं आया था। राकेश अपनी टार्च बुझा कर धीरे-धीरे हँस रहा था। वह शायद बात समझ गया था। तभी ममदू बोला, "साब! रोशनी बचाकर रखना है। अबी बहोत लंबा रास्ता है। बीच में दलदल भी पड़ सकता है ..."

"सरदियों में जमी बर्फ़ में दबकर कुछ पत्थर बहुत कीमती बन जाते हैं।"अश्क जी ने कहा था। राकेश यह सुनकर बेसाख्ता हँस पड़ा था।

हमारे पैर दो-दो मन के हो गए थे। अब उनसे शरीर और कपड़ों का बोझ उठ नहीं रहा था। दलदल पार करके हम सुस्ताने लगे थे। मौत की बर्फ़ीली वादी से हम ज़रूर निकल आए थे पर अँधेरी घाटियों, सतलंजन के मैदान, पानी से भरे खतरनाक कुंडों में जंगली जानवरों के ख़तरों से अभी हम पार नहीं हुए थे।

जैसे-तैसे हम उस जगह पहुँच गए जहाँ घोड़े वालों को छोड़ कर गए थे। आधी रात हो चुकी थी। हमें ख़त्म हो गया समझकर वे लौट गए थे। रुकने के लिए कोई जगह नहीं थी।

ऊपर से बारिश आ गई थी। गनीमत थी कि हम सतलंजन का मैदान पार कर आए थे... अब ऊबड़-खाबड़ रास्ता आ गया था, जिसके नीचे जगह-जगह पानी के कुंड थे। अंधों की तरह संभल-संभलकर चलने के अलावा कोई चारा नहीं था। ममदू सब खतरे उठाता हुआ आगे-आगे चल रहा था, उसकी आवाज़ आ रही थी, "हिम्मत कर, साहबा! होश साहबा! संभल के, साहबा।"

इसी आवाज़ के सहारे हम चल रहे थे...कहीं कोई रोशनी नहीं, कहीं कोई पगडंडी नहीं, कोई रास्ता नहीं, कोई सहारा नहीं ...बस, ममदू की आवाज़ गूँजती थी। उसी का सिरा पकड़कर हम चलते जा रहे थे। रोशनी की एक झलक के लिए हम तरस रहे थे।

पता नहीं चलते-चलते कब दूर पर एक लौ-सी दिखाई पड़ी। ममदू चीखा, "कोई बस्ती है, साहबा!"

दिशा और समय का अब कोई एहसास नहीं रह गया था। हम सिर्फ़ उस जलती मशाल की ओर खिंचे जा रहे थे। जब वह रोशनी बिलकुल पास आई तो कुछ-कुछ दिखाई पड़ा। वह लिद्दरवट का डाक बँगला ही था।

चौकीदार ने हमें खत्म हुआ मान चुकने के बाद भी भेड़ के घी की मशाल जला रखी थी कि कहीं भटकते-भटकते अगर हम लोग आ ही जाएँ तो रोशनी देखकर उधर निकल आएँ। चौकीदार बोला था, "हम समझा, खतरा हो गया...इस वास्ते मशाल डाक बँगले के कोने से बाँध दिया ..."

हम लोग कमरे में पहुँचते ही कटे पेड़ की तरह गिर पड़े। कीचड़ भरे बूटों और भीगे ओवरकोटों सहित। अब होश नहीं था। सुबह के पाँच बजे हुए थे।

शाम सात बजे कुछ होश आया था। चौकीदार ने ब्रांडी की मालिश की थी। आधी बेहोशी में ही शायद कुछ खा-पीकर हम फिर सो गए थे।

सुबह आँखें ठीक से खुली थीं। चौकीदार चाय ले आया था। जब हम चाय पी रहे थे, तब देखा—किचिन के पास कोने में चाय पीता ममदू चुपचाप बैठा था।

मैंने चौकीदार से कहा, "अरे! ममदू अभी यहीं है!"

तो चौकीदार बोला, "कल दोपहर से ही बैठा है, साब! बोलता है, साहब लोग को सलाम करके जाएगा!"

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. राकेश के कश्मीर पहुँचते ही क्या तय हुआ?
2. लेखक तथा राकेश के साथ अश्क जी भी कश्मीर आए थे। फिर लेखक ने यह क्यों कहा कि अश्क जी साहित्य में रहें और हम कश्मीर में?
3. अश्क जी का साहस किस बात से प्रकट हो रहा था?
4. लेखक ने 'अनजानी जगहों में जानकारों की गैर ज़रूरी बातों को भी मानना' ज़रूरी क्यों समझा?
5. दूर से कोल्हाई ग्लेशियर कैसा लग रहा था?
6. बुरी तरह थक जाने के बाद भी सारी थकान अपने आप कैसे धुल गई?
7. लेखक किस प्रसंग के संदर्भ में अश्क जी के होशो-हवास की तारीफ़ कर रहा था?

लिखित

1. प्रकृति के रूपों का सौंदर्य व्यक्त करने में कहीं 'वीरान' और कहीं 'रौद्र' विशेषण का प्रयोग किया गया है। क्यों?
2. दूधसर लेक के सौंदर्य का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
3. लेखक ने कोल्हाई ग्लेशियर के दृश्य को 'अद्भुत' क्यों कहा है?
4. 'कि तभी वह दुर्घटना हुई ...।' लेखक का यह कथन किस दुर्घटना की ओर संकेत करता है? दुर्घटनाग्रस्त लेखक की मनःस्थिति का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
5. स्पष्ट कीजिए:
   - साँप की आँख जैसा सम्मोहन था उसमें।
   - लगता था ग्लेशियर साँस ले रहा है।
   - आवाज़ को जाते और आते देखा जा सकता था।
6. ग्लेशियर की नाली पार करने के लिए लेखक और उसके साथियों ने क्या-क्या युक्तियाँ अपनाईं?

7. इस यात्रा वृत्तांत में लेखक ने प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन करते हुए अनेक उपमाओं का प्रयोग किया है। उनमें से कोई तीन ऐसी उपमाएँ चुनिए जो आपको अधिक अच्छी लगी हों। अच्छा लगने के कारणों का भी उल्लेख कीजिए।
8. लेखक ने किन प्रसंगों द्‌वारा यह सिद्‌ध करने का प्रयत्न किया है कि प्रकृति की मोहक सुंदरता मानव की सारी थकान, चिंता, तनाव आदि को दूर कर देती है?
9. ममदू की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

भाषा-अध्ययन

1. 'कीमती वक्त', 'मोटा उपन्यास' जैसे अन्य दो विशेषण-विशेष्यों के उदाहरण दीजिए।
2. निम्नलिखित कथनों को मानक हिंदी वाक्यों में लिखिए —
   - साब! ... कोल्हाई के ऊपर एक दूधसर लेक होता।
   - साब! .. हम यहाँ रुकने का सलाह नई देगा।
   - जल्दी-जल्दी पार करने का, साब!
   - साब! रोशनी बचाकर रखना है। अबी बहोत लंबा रास्ता है।

योग्यता-विस्तार

अपने जीवन में घटित अथवा आपके द्‌वारा पठित किसी रोमांचक यात्रा वृत्तांत को कक्षा में सुनाइए और उसे रोमांचक मानने के कारणों पर चर्चा कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

सीरियसली — गंभीरतापूर्वक
सेहत — स्वास्थ्य
जीवट — साहस
हामी भरना — स्वीकार कर लेना
खौफ़नाक — डरावना
ग्लेशियर — हिम-नद — ऐसी पहाड़ी नदियाँ जिनमें ऊपर से बर्फ़ की परत जमी रहती है। इसे ही लेखक ने बर्फ़ का दरिया कहा है।

तिलस्म	—	जादुई लोक
लस्त	—	थक कर चूर होना
एहसास	—	अनुभूति
गोट	—	मगजी, कपड़े की दुहरी पट्टी जो सुंदरता के लिए कपड़ों के किनारे लगाते हैं
रोंगटे खड़े होना	—	रोमांच होना, भयभीत होना
चीपें	—	परतें
जुर्रत	—	साहस
बेसाख्ता	—	अनायास, अचानक, अपने आप
पैर दो-दो मन के हो गए	—	पैर सूज जाना
वादी	—	घाटी, नदी के किनारे का मैदान
सिमसिम	—	अरब देश की एक लोक कथा – 'अलीबाबा चालीस चोर' में गुफ़ा का दरवाज़ा 'खुल जा सिमसिम' कहने पर खुलता था और 'बंद हो जा सिमसिम' कहने पर बंद होता था। प्रस्तुत पाठ के संदर्भ में आशय यह है कि पहाड़ों तक पहुँचना संभव नहीं था।

विद्यानिवास मिश्र

पं. विद्यानिवास मिश्र का जन्म गोरखपुर जिले के पकड़डीहा ग्राम में सन 1926 में हुआ। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. और गोरखपुर विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। प्रारंभ में सरकारी पदों पर रहे। 1957 में उन्होंने गोरखपुर विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य आरंभ किया। फिर काशी विद्यापीठ और बाद में संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में कुलपति पद पर सुशोभित हुए। आप नवभारत टाइम्स के प्रधान संपादक भी रहे।

पं. विद्यानिवास मिश्र संस्कृत और हिंदी दोनों भाषाओं के मर्मज्ञ हैं। उनकी रचनाओं में बड़ी विविधता है। भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी प्रवाहपूर्ण है। उन्होंने यथाप्रसंग लोकभाषा के शब्दों का भी प्रयोग किया है। मिश्र जी को निसर्गतः कवि का हृदय मिला है। इसकी छाप उनके गद्य पर भी पड़ी है। उनके अधिकांश निबंध ललित शैली के हैं।

उन्हें 'महाभारत का काव्यार्थ' पुस्तक पर मूर्तिदेवी पुरस्कार (1990) से, भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से तथा बिड़ला फाउंडेशन के शंकर सम्मान से विभूषित किया गया है।

मिश्र जी की कुछ प्रमुख पुस्तकें हैं — ***साहित्य की चेतना, रीति विज्ञान, महाभारत का काव्यार्थ, निज मुख मुकुर, लागो रंग हरी, तुलसी मंजरी, भाव पुरुष श्री कृष्णा, परंपरा बंधन नहीं, द इंडियन क्रिएटिव माइंड, सोहम्, कबीर वचनामृत, नदी, नारी और संस्कृति, फागुन हुई रे दिना, शिरीष की याद आई, भारतीय चिंतनधारा*** *तथा* ***सपने कहाँ गए।***

प्रस्तुत पाठ श्री मिश्र द्वारा लिखा गया एक संपादकीय है। इस पाठ में लेखक ने तीन पर्वों – विजयादशमी, कोजागरी और दीपावली का उल्लेख किया है और उनके सांस्कृतिक महत्त्व तथा सार्थकता पर प्रकाश डाला है। विजयादशमी के प्रसंग में रावण पर राम की विजय को, अन्याय के ऊपर न्याय की विजय दिखाते हुए लेखक ने संकेत दिया है कि आज ऐसी ही विजय-यात्रा की आवश्यकता है जिसमें अन्याय को नष्ट करने का संकल्प लिया जाए।

विजयोत्सव

यह अंक जिस महीने में निकल रहा है उस महीने में विजयादशमी, कोजागरी और दीपावली तीन-तीन पर्व पड़ रहे हैं। विजयादशमी के दिन राम ने रावण पर विजय प्राप्त की। अन्याय के युग के अंत का अर्थ यह पर्व है। यह पर्व आश्विन शुक्ल की दशमी को पड़ता है। कोजागरी आश्विन शुक्ल पूर्णिमा को मनाई जाती है। इस दिन रात भर लक्ष्मी घर-घर झाँकने जाती हैं, इसी को शरद पूर्णिमा भी कहते हैं। इस रात्रि में लोग खीर पकाकर छत पर रखते हैं और चाँदनी की वर्षा में खीर रात भर सिंचती रहती है। यही खीर सवेरे लोग इस भाव से ग्रहण करते हैं कि अमृत से यह सिक्त हो गई है। कार्तिक कृष्ण अमावस्या को दीपावली पड़ती है। इसे लोग इस भाव से मनाते हैं कि इस दिन राम का अयोध्या में राज्याभिषेक हुआ था और वहाँ घर-घर दीप जलाए गए थे। इस खुशी में आज भी घर-घर दीप जलाए जाते हैं।

हम विजय की बात करते हैं। उसका अर्थ क्या है? क्या यह आधिपत्य है, अथवा यह कोई अपने लिए किसी वैभव की प्राप्ति है? यदि हम ध्यान से प्राचीन दिग्विजयों का वर्णन पढ़ें तो तीन बातें स्पष्ट होती हैं। एक तो, इन दिग्विजयों का उद्देश्य आधिपत्य स्थापित करना नहीं रहा है। कालिदास ने एक शब्द का प्रयोग किया है – 'उत्खात- प्रतिरोपण' यानी उखाड़कर फिर से रोपना। जैसे धान के बीज बोए जाते हैं, और पौधे होने पर उखाड़कर पास के खेत में रोपे जाते हैं। ऐसा करने से धान की फ़सल बोए हुए धान की अपेक्षा दुगुनी होती है। इसमें दुर्बल पौधे अपने-आप नष्ट हो जाते हैं और सबल पौधे अधिक सबल होते हैं। यह उस क्षेत्र के हित में होता है जिसको जीतकर पुनः उसी क्षेत्र के सुयोग्य शासक को सौंपा जाता है। इससे उस क्षेत्र की दुर्बलताएँ अपने आप नष्ट हो जाती हैं और उसकी शक्ति और अधिक उभर कर आ जाती है।

इसमें दूसरी बात यह निहित थी कि किसी सामान्य जन को सताया नहीं जाए, उसकी खेती न नष्ट की जाए। युद्ध उस भूमि पर हो जो ऊसर हो– और युद्ध से केवल सैनिक प्रभावित हों, साधारण जन को कोई हानि न हो। उन दिनों युद्ध में मारे गए सैनिकों को जीतने वाला पक्ष पूरा सम्मान देता था। विभीषण किसी भी प्रकार रावण की चिता में अग्नि देने के लिए तैयार नहीं हो रहे थे। राम ने कहा कि वैर मरने के साथ समाप्त हो जाता है। रावण तुम्हारे बड़े भाई थे, इसीलिए मेरे भी बड़े भाई थे, इनका उचित सम्मान के साथ अंतिम संस्कार करो।

तीसरी बात यह थी कि दिग्विजय का उद्देश्य उपनिवेश बनाना नहीं था, न अपनी रीति-नीति आरोपित करना था। भारत के बाहर जिन देशों में भारत का विजय अभियान हुआ उन देशों को भारत में मिलाया नहीं गया, उन देशों की अपनी संस्कृति समाप्त नहीं की गई, बल्कि उस संस्कृति को ऐसी पोषक सामग्री दी गई कि उस संस्कृति ने भारत की कला और साहित्य को अपनी प्रतिभा में ढालकर उसको कुछ और सुंदरतर रूप में खड़ा किया। 'कंपूचिया में अंकोरवाट' और 'हिंदेशिया में बोरोबुदुर' तथा 'प्रामवनम्'– इसके जीवंत प्रमाण हैं, जहाँ पर अपनी संस्कृति के अनुकूल उन देशों के लोगों ने भारतीय धर्म-संस्कृति को नया रूप प्रदान किया। एक उद्देश्य यह अवश्य था कि नाना प्रकार के रंगों से इंद्रधनुष की रचना हो। चक्रवर्ती होने का अर्थ यही था कि एक चक्र के अनेक अरे मिलकर गतिशील हों और एक-दूसरे की सहायता करें, एक-दूसरे के साथ सामंजस्य रखें।

प्रश्न है कि केवल राम का ही विजयोत्सव क्यों इतना महत्त्वपूर्ण है? उसके बाद अनेक विजय-अभियान हुए। वे इतने महत्त्वपूर्ण क्यों नहीं हुए? उनका उत्सव इस तरह क्यों नहीं मनाया जाता? इसका समाधान यही है कि राम की विजय यात्रा में राम की सहायक वन की वानर व भालू जातियाँ थीं। अयोध्या से कोई सेना नहीं आई थी। यह अकेले 'एक निर्वासित का उत्साह' था, जिसने राक्षसों से आक्रांत अत्यंत साधारण लोगों में आत्मविश्वास भरा और रथहीन होकर भी रथ पर चढ़े रावण के विरुद्ध लड़ाई लड़ी। ऐसी यात्रा से ही प्रेरणा लेकर गांधीजी ने स्वाधीनता के विजय-अभियान में जिन चौपाइयों का उपयोग किया वे 'रामचरितमानस' की हैं – "रावनु रथी बिरथ रघुबीरा, देखि विभीषन भयउ अधीरा।" ऐसी

विजय में किसी का पराभव नहीं होता, राक्षसों का पराभव नहीं हुआ, केवल रावण के अहंकार का संहार हुआ। अंग्रेज़ों की सभ्यता को नेस्तनाबूद करने का कोई प्रयत्न भी नहीं हुआ, केवल उनका प्रभुत्व समाप्त करके जनता का स्वराज्य स्थापित करने का लक्ष्य रहा। इसलिए विजयादशमी आज विशेष महत्त्व रखती है।

हम खेतिहर संस्कृति वाले भारतवासी आज भी नए जौ के अंकुर अपनी शिखा में बाँधते हैं और उसी को हम जय का प्रतीक मानते हैं। आने वाली फ़सल के नए अंकुर को हम अपनी जय यात्रा का आरंभ मानते हैं। हमारे लिए विजय-यात्रा समाप्त नहीं होती, यह फिर से शुरू होती है, क्योंकि भोग में अतृप्ति, भोग के लिए छीनाझपटी, भय और आतंक से दूसरों को भयभीत करने का विराट अभियान, दूसरों की सुख-सुविधा की उपेक्षा, अहंकार, मद, दूसरों के सुख में ईर्ष्या— ये सभी जब तक होंगे, चाहे कम हों या अधिक, 'बिरथ रघुवीर' को विजय यात्रा के लिए निकलना ही पड़ेगा। आत्मजयी को इन शत्रुओं के ऊपर विजय प्राप्त करने के लिए नया संकल्प लेना ही होगा।

विजयादशमी के दिन लोग नीलकंठ पक्षी देखना चाहते हैं। नीलकंठ सुंदर-सा पक्षी है। गला उसका नीला होता है। उस पक्षी में लोग विषपायी शिव का दर्शन करना चाहते हैं। आत्मजयी जब विजय के लिए निकलेगा तो उसे बहुत-सा गरल पीना पड़ेगा। यह गरल अपयश का है, लोक-निंदा का है और सबसे अधिक अलोकप्रियता का है। आज इस गरल को पीने के लिए कोई तैयार नहीं है।

विजयादशमी का उत्सव सार्थक होता है दक्षिण से उत्तर की राम की वापसी यात्रा से। इसमें राम रास्ते में अपने मित्र ऋषि भरद्वाज से मिलते हैं और अपने मित्र निषादराज से मिलते हैं, गंगा फिर से पार करते हैं। अंत में पहले भरत से मिलते हैं फिर अयोध्या में प्रवेश करते हैं और वे सिंहासन पर आसीन होते हैं। वस्तुतः जन-जन के मन में वनवासी राम तो राजा ही थे। केवल सिंहासन पर आसीन नहीं हुए थे। किंतु सिंहासन पर उनकी पादुका आसीन हुई थी। उनके प्रतीक चिह्न से शासन चल रहा था। भरत तो अपने को न्यासधारी मानते थे। महात्मा गांधी उसी प्रकार की स्थिति में जनता के शासक को देखना चाहते थे। शासन तो

सनातन राम का है। उनकी तरफ़ से प्रतिनिधि होकर, धरोहरी होकर शासन चलाना ही जनतंत्र के शासन का लक्ष्य होना चाहिए। राम का राज्याभिषेक सत्य का राज्याभिषेक है, सात्त्विक ज्ञान का राज्याभिषेक है।

अमावस्या की रात्रि सबसे घनी अँधेरी रात्रि होती है। उस दिन पावस के चार महीनों का सारा तम असंख्य-असंख्य कीट-पतंग बनकर एक बार छोटे-छोटे दीयों के प्रकाश से अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति के भीतर में जगती हुई रोशनी से जूझना चाहता है और जूझते-जूझते ही समाप्त हो जाता है।

पूर्वी भारत में दीपावली का यह पर्व कालीपूजा के रूप में मनाते हैं। काली, मोह और मद को मूल से उच्छिन्न करनेवाली देवी हैं। इसीलिए यह पर्व ज्ञान के जागरण का पर्व है। हज़ारों वर्षों से इसी दिन भारत की अर्थव्यवस्था सँभालने वाले लोग हिसाब-किताब पूरा करते थे और आज भी कर रहे हैं। यह आर्थिक वर्ष की समाप्ति की तिथि हुआ करती थी। यह आज भी आनुष्ठनिक रूप में है। आज भी यह तिथि व्यवसाय की सच्चाई की नाप-जोख की तिथि है। यह अलग बात है कि नाप-जोख भी अब सच्ची नहीं रह गई है। अब दो-दो बहियाँ काम में आने लगी हैं – एक खुली, एक पोशीदा। शायद दीपावली के ये दीये, विशेष रूप से मिट्टी के दीये और स्नेह से बल पाकर रोशनी देनेवाले दीये,,अपनी लौ– अपनी काँपती हुई लौ से स्मरण दिलाना चाहते हैं कि सच्चाई का कोई आवरण नहीं होता। होता भी है तो वह टिकता नहीं है। उसको दूर करने के लिए आवाहन होता रहता है। प्रकाश के देवता सत्य का मुँह सुनहले ढक्कन से ढका हुआ है। उसे उतार दो। उसे अपने आप चमकने दो। इस दीपावली के एक दिन पहले नरक चतुर्दशी होती है और नरकासुर की कैद से हज़ारों राजाओं की बेड़ियाँ खोलने की खुशी भी मनाई जाती है।

दीपावली के दिन आज भी मिट्टी के खिलौने, मिट्टी के गणेश, मिट्टी की लक्ष्मी, मिट्टी की टुन-टुन बजती घंटियाँ, पटाखों के हाहाकार से कहीं अधिक सुंदर मधुर और प्रीतिकर लगती हैं। अतिभोग के दिखावे में, खोखले ऐश्वर्य के दिखावे में इन सबको किनारे करने की साज़िश की गई है और इस साज़िश ने बच्चों से लेकर बूढ़ों तक का मन वश में

कर रखा है। पर आज भी हिंदुस्तान की नारी अपने घर में अनाज से भरे बरतन प्रयोग करती है, मिट्टी का ही दीया जलाती है, धान की खीलों से मिट्टी के ही लक्ष्मी-गणेश की पूजा करती है। लगता है संस्कृति का कोई एक कोना अभी सुरक्षित है, जहाँ मन की पवित्रता, सच्चाई और कलासृष्टि के प्रति संवेदना बची हुई है। विजयोत्सव की यही शुभ परिणति होनी चाहिए और ऐसी भावनाओं से भरे विजयोत्सव की हम अपने पाठकों को बधाई देते हैं।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. लेखक ने किन तीन पर्वों का उल्लेख किया है?
2. कोजागरी पर्व की क्या विशेषता है?
3. 'उत्खात-प्रतिरोपण' किसलिए किया जाता है?
4. प्राचीन दिग्विजयों का क्या उद्देश्य था? ठीक उत्तर के सामने सही (√) का चिह्न लगाइए–
   (क) सामान्य जन को हानि न पहुँचाना।
   (ख) आधिपत्य स्थापित करना।
   (ग) दूसरों की संस्कृति को बनाए रखना।
   (घ) अपनी रीति-नीति लागू करना।
5. चक्रवर्ती होने का क्या अर्थ है?
6. विजयादशमी के दिन लोग नीलकंठ पक्षी क्यों देखना चाहते हैं?

लिखित

1. राम की विजय यात्रा की तुलना में अन्य विजय अभियान इतने महत्त्वपूर्ण क्यों नहीं हुए?
2. 'एक निर्वासित का उत्साह' में निर्वासित किसे कहा गया और क्यों?
3. रावनुरथी बिरथ रघुवीरा – रावण पर राम की विजय से महात्मा गांधी को स्वतंत्रता संग्राम के लिए क्या प्रेरणा मिली?
4. आत्मजयी को किन शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनी होती है?

5. महात्मा गांधी के अनुसार जनतंत्र के शासक को कैसा होना चाहिए?
6. दीपावली को ज्ञान के जागरण का पर्व क्यों कहा गया है?
7. दीपावली के दीयों की काँपती लौ क्या स्मरण दिलाती है?
8. निम्नलिखित कथन को पढ़िए और पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए —
   'अमावस्या की रात्रि सबसे घनी अंधेरी रात्रि होती है। उस दिन पावस के चार महीनों का सारा तम असंख्य-असंख्य कीट-पतंग बनकर एक बार छोटे-छोटे दीयों के प्रकाश से प्रत्येक व्यक्ति के भीतर में जलती हुई रोशनी से जूझना चाहता है और जूझते-जूझते समाप्त हो जाता है।'
   (क) अमावस के दिन पावस का सारा तम क्या रूप धारण कर लेता है?
   (ख) लेखक ने व्यक्ति के अंतर्मन के प्रकाश की उपमा किससे दी है?
   (ग) यह तम किससे संघर्ष करता है?
   (घ) इस संघर्ष में तम की पराजय क्यों होती है?
9. आशय स्पष्ट कीजिए —
   (क) आने वाली फ़सल के नए अंकुर को हम अपनी जय यात्रा का आरंभ मानते हैं।
   (ख) लगता है संस्कृति का कोई कोना अभी सुरक्षित है।

भाषा-अध्ययन

1. नीचे कुछ तत्सम एवं तद्भव शब्द दिए गए हैं। तत्सम शब्दों के तद्भव और तद्भव शब्दों के तत्सम रूप लिखिए —
   दशमी, अँधेरा, सुनहला, पूर्णिमा, अग्नि, महीना, दीपावली, मिट्टी, रात्रि, दीया।
2. निम्नलिखित शब्दों के संधिविच्छेद कीजिए —
   राज्याभिषेक, उच्छिन्न, विजयोत्सव, दिग्विजय।

योग्यता -विस्तार

1. *लेखक के अनुसार 'कंपूचिया में अंकोरवाट' और 'हिंदेशिया में बोरोबुदुर' तथा 'प्रामवनम्' इस बात के जीवंत प्रमाण हैं कि इन देशों के लोगों ने भारतीय संस्कृति को अपनी संस्कृति के अनुकूल बनाकर नया रूप प्रदान किया। इस संदर्भ में अतिरिक्त जानकारी प्राप्त कीजिए।*
2. *इस पाठ में विजय यात्रा के संदर्भ में दो प्रसंगों 'बिरथ रघुबीरा' और 'एक निर्वासित का उत्साह' का उल्लेख हुआ है। ये प्रसंग क्रमशः तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' और जयशंकर प्रसाद रचित 'चंद्रगुप्त' नाटक से लिए गए हैं। इन प्रसंगों से संबंधित अंशों को पढ़कर प्रस्तुत पाठ में इनकी उपयुक्तता पर कक्षा में चर्चा कीजिए।*

3. भारतीय महीनों के नाम और उन महीनों में मनाए जाने वाले प्रमुख पर्वों की जानकारी प्राप्त कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

आधिपत्य	—	प्रभुत्व, पूर्ण नियंत्रण
उपनिवेश	—	वह विजित देश जिसमें विजेता देश के लोग आकर बस गए हों
(अर) अरे	-	चक्र (पहिये) की तीलियाँ
सामंजस्य	—	तालमेल
निर्वासित	—	देश से निकाला हुआ
पराभव	—	हार
नेस्तनाबूद	—	समूल नष्ट, पूरी तरह समाप्त करना
आत्मजयी	—	जिसने स्वयं पर विजय पा ली हो
गरल	—	विष
पादुका	—	खड़ाऊँ
न्यासधारी	—	धरोहर रखनेवाला, जिसे विश्वासपूर्वक संपत्ति सौंपी जाए
उच्छिन्न	—	नष्ट
आनुष्ठानिक	—	विधि-विधान से कोई कार्य संपन्न करना
(बही) बहियाँ	—	खाता, हिसाब-किताब लिखने का रजिस्टर
पोशीदा	—	गुप्त
आवरण	—	परदा, ढाल
आवाहन	—	पुकार, बुलाना
साज़िश	—	षडयंत्र
संवेदना	—	अनुभूति
परिणति	—	अंत, परिणाम
नरकासुर	—	एक असुर जिसका वध श्रीकृष्ण ने किया था

उषाकिरण खान

उषाकिरण खान का जन्म सन 1945 में दरभंगा (बिहार) के लहेरिया सराय में हुआ। प्राचीन इतिहास और पुरातत्व में एम.ए., पीएच.डी. तक शिक्षा प्राप्त कर मगध विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया और प्राचीन इतिहास विभाग के विभागाध्यक्ष पद को सुशोभित किया।

लेखन में उषाकिरण की रुचि प्रारंभ से ही रही। अध्यापन के साथ-साथ ये लेखन में भी सक्रिय रहीं। हिंदी के अतिरिक्त इन्होंने मैथिली को भी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया और दोनों भाषाओं की चर्चित कथा-लेखिका हैं। आपकी प्रख्यात कृतियाँ हैं– ***विवश विक्रमादित्य, दूब-धान, गीली पाँक, कासवन****। ये सभी कथा-संग्रह हैं। 'फागुन के बाद' आपका चर्चित उपन्यास है। आपकी कहानियाँ 'धर्मयुग', 'सारिका' और 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' में भी प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अतिरिक्त* ***दूर्वाक्षत, अनुत्तरित*** *एवं* ***हसीना मंज़िल*** *इनकी मैथिली कृतियाँ हैं।*

उषाकिरण खान का लेखन सोद्देश्य लेखन है। समाज से बटोरे गए अनुभव, विकास की धीमी प्रक्रिया से भी अधिक धीमी गति से सरकने वाली शिक्षा के कारण वंचित मानवता एवं अधकचरी अर्थव्यवस्था का दुष्परिणाम भोग रही ग्रामीण जनता के भावों की अभिव्यक्ति इनके लेखन का आधार हैं। उषाकिरण खान की कथाओं में आंचलिक शब्दों की मधुरिमा और सहज भावाभिव्यक्ति है। उनके पात्र इसी समाज और परिवेश के हैं। नारी पात्रों के चित्रण में वे सिद्धहस्त हैं। उनकी कथाओं की संवेदना पाठक को बाँध लेती है।

दूब-धान *भी बिहार के आंचलिक परिवेश की पृष्ठभूमि में लिखी गई कहानी है। महानगरीय औपचारिक बोझिलता और आधुनिकता से नायिका ऊब जाती है। वह बचपन की स्मृतियों से जुड़े गाँव को फिर से देखना चाहती है। उन्मुक्त ग्रामीण परिवेश, सहज, सरल आत्मीय रिश्ते और प्रकृति की गोद में की गई अठखेलियाँ उसे गाँव की ओर खींचते हैं।*

गाँव जाने का अवसर मिलता है। किंतु वहाँ स्मृतियों में बसा गाँव नहीं मिलता। शहरी आधुनिकता वहाँ भी डेरा डाल चुकी है। केतकी निराश होकर लौटने लगती है। अचानक उसे सबुजनी की याद आती है। वह लौटते समय रास्ते में गाड़ी रोककर गाँव में सबुजनी से मिलने के लिए जाती है। वह सबुजनी से क्या मिलती है कि उसे अपना वह पुराना गाँव मिल जाता है जिसकी चाह उसे गाँव खींच लाई थी। पुरानी रस्मों की महक, आत्मीयता की गरमाहट और अपनत्व का सुख उसकी यात्रा को सार्थक कर देता है।

दूब-धान

मंज़िल पर पहुँचने से पहले गाड़ी की रफ़्तार तेज़ हो गयी थी, और अब एक तीखी आवाज़ सीटी की आ रही थी, अर्थात् स्टेशन नज़दीक है। वैसे तो केतकी ने जब से गाँव आने का कार्यक्रम बनाया तभी से उसकी नींद उड़ गयी थी, लेकिन छोटी लाइन की गाड़ी पर चढ़ते ही आँखों ने थकान का अनुभव भी भुला दिया था। प्रसन्नता के अतिरेक में केतकी बावरी हो गयी थी। रात के लगभग एक बज रहे थे जब गाड़ी स्टेशन पर लग रही थी। कितने वर्षों के बाद केतकी अपने गाँव की दहलीज पर आ रही थी। यह अवसर बड़ी मुश्किल से मिला था। चार भाइयों की ड्योढ़ी में अकेली लड़की केतकी अपनी भतीजियों-भतीजों की हमउम्र थी। पिता के दो विवाह हुए थे। पहली पत्नी से चार लड़के थे और दूसरी से थी केतकी। जब केतकी गर्भ में थी तभी उसके पिता का स्वर्गवास हो गया था और किशोरी माता के संबंध में सुनने में आता है कि विधवा होने के बाद वे केतकी को जन्म देने मात्र के लिए ही जीवित थीं। बड़ी भाभी ने केतकी को अपनी बेटी की तरह पाला था। पालन-पोषण में कोई त्रुटि नहीं आने दी थी। पंद्रह वर्ष की केतकी ब्याह कर ससुराल चली गयी थी। उसके श्वसुर महानगर में रहते थे, गाँव-घर से कोई मतलब ही नहीं था। केतकी भी वहाँ चली गई थी। गाँव के एक-एक पंछी से बिछुड़ते केतकी का हृदय फटता था, किंतु नए वातावरण का आकर्षण उसे जीवित रखे था।

इस बीच में कितने परिवर्तन आए। केतकी के भाइयों का मकान शहरों में बन गया। सभी भाई नगराभिमुख हो गए। सबसे बड़े भाई चीफ़ इंजीनियर के पद तक पहुँच गए हैं। सभी के शादी-ब्याह शहरों में ही हुए। मुहल्ले की शादियों की तरह केतकी आती और ब्याह का

न्यौता पूरा कर चली जाती। पशु-पक्षियों और ग्रामीण जन से अधिक घुली-मिली यह दीवानी लड़की यदि गाँव के संबंध में कुछ पूछती भी तो माकूल उत्तर नहीं मिल पाता। एक बार बड़ी भाभी से कहा भी था इसने, "भाभी, गाँव में कोई समारोह करिए, काफ़ी दिन गए हो गए।" तो भाभी ने उत्तर दिया था, "गाँव में सड़कें बन रही हैं, घर तैयार हो रहे हैं, फिर देखूँगी।" केतकी ने यूँ ही कई बार अपने पति से भी कहा था, "एक बार अपने गाँव जाने का मन करता है।" तो उन्होंने यह कहकर टाल दिया था, "गाँव में कौन रहता है?" केतकी क्या कहे कि गाँव में कौन रहता है उसका! भाई-भाभी और भतीजे-भतीजियाँ नहीं रहते हैं तो क्या, पूरा-का-पूरा गाँव उसका अपना है। वह एक क्षण के लिए भी गाँव को भूल नहीं पाती है। बच्चों की छुट्टियों में संपूर्ण भारत का भ्रमण भी उसे संतुष्ट नहीं करता, महानगर के पास के साफ़-सुथरे कंक्रीट की सड़क वाले गाँव उसका खालीपन नहीं भर पाते। आभिजात केतकी को गाँव के लोगों के द्वारा केतिकी पुकारना याद आता, और याद आता कोसी का मिट्टी-पानी, कोर-कछार, उसके समय में जो नवगछुली बंबई और मालदह आम का लगा था, वह कितना विस्तृत हो गया होगा, यह सोच कर केतकी प्रसन्न होती। थोड़ा-सा भी समय मिलेगा तो वह ज़रूर उस पर झूला लगवा लेगी। क्या हुआ माघ है, तो अब झूला लगाने के लिए कोई सावन का इंतजार तो नहीं करने देगा केतकी को। "देखा तुमने, बड़ी भाभी की चिट्ठी आई है कि अब की समीर के बेटों का जनेऊ गाँव में ही करेंगी," केतकी ने कहा था। "अच्छा तो है, अब उनके गाँव तक सड़कें चली गई हैं। घर भी ठाठ का बन गया है।"

"क्या ऐसी ही सड़कें?"

"और नहीं तो क्या, पगली?" केतकी क्षण-भर को उदास हो गई थी। फिर सोचा था, अच्छा ही तो है, अब गाड़ी सीधे घर के दरवाज़े पर पहुँचेगी। पहले बैलगाड़ी और नाव की सवारी करनी पड़ती थी। उसे याद आया, कैसे गौने के बाद उसकी बारादरी उठाकर नाव पर रखी गई थी और वह नदी पार कर अपनी ससुराल के घर में देवी को शीश नवाने पहुँची थी। चार दिन की विधि पूरी करते ही उसकी सास उसे लेकर महानगर चली गई थीं। तब से केतकी ने कभी इधर का मुख नहीं किया। अपने दरवाज़े से नीचे उतर कर सामने कोसी नहीं

देखी, सुनहरी-रुपहली अबरकों वाली सिकता नहीं देखे, काश और पटेर के जंगल नहीं देखे, आम की पीपें घिसकर सीटी नहीं बजाई। केतकी ने सीकी की डलिया में मूढ़ी-लाई नहीं खाए और ना ही सीकी के बने कंगन, बाजूबंद खेल-खेल में सबुजनी से बनवा कर पहने। क्या सबुजनी ज़िंदा होगी? केतकी सोचती है और उसका मन दौड़कर धुनिया टोली पहुँच जाता है। गोरे-चिट्टे धुनिया मज़ूदर और गुलाबी रंगतोंवाली उनकी औरतें। केतकी उन्हें देखती ही रह जाती। और यह सबुजनी कितनी सुंदर थी! गाँव की बेटी थी, गाँव में ही बस गई थी। सो वह घर-घर मुँह उघार कर घूमती रहती थी, गहरे नीले-हरे-बैंजनी मारकीन के चूने लिखे चूनर, गोरे मुखड़े पर लाल कान और कान में ऊपरी छोर से क्रम से लटकती पाँच-पाँच चाँदी की बालियाँ। छम-छम करते गहने जौसन-बाजू तक और रुपैया का छड़। जहाँ बैठती, झन-झन बजता। सबुजनी की बड़ी पूछ बड़े घरों में थी। वह सीको की रंग-बिरंगी सुंदर-सुंदर डलिया बनाती थी। उससे सीखने वालों का तांता लगा रहता। सबुजनी की दो बेटियाँ फूल और सत्तो ब्याह कर ससुराल जाने-आने लगी थीं और बेटा रहीम कुदाल कंधों पर रखने लगा था। उसी से केतकी सीकी का बाला-झुमका बनवाकर पहनती थी और फिर तोड़कर फेंक देती थी। सबुजनी लाड़भरी झिड़की देकर फिर रँगी सीकी से केतकी के लिए कंगना बनाने लगती थी। केतकी को सबुजनी का ज़ोर से केतकी ई ई पुकारना याद आता है। कैसी रची-बसी थी गाँव की सहिष्णु संस्कृति उसमें। वह विधर्मी होने पर भी जीतिया और छठ करती। छठ की डलिया में सिर्फ़ फल-फूल देख कर एक बार केतकी ने टोका तो उसने कहा था, 'मेरे हाथ का पकाया हुआ भोजन सूर्य देवता कैसे करेंगे, इसलिए फल-फूल लेकर अर्घ्य चढ़ाती हूँ।'

"ऐसे देवता को क्यों अर्घ्य चढ़ाती हो, छूत मत चढ़ाओ।" केतकी ने आवेश में कहा था। जीभ काट कर कान पकड़ते हुए सबुजनी ने ऐसा बोलने से मना किया। और डाँट भी बतायी। कहा, "छिमा माँग लो, देवता-पितर के बारे में ऐसा नहीं कहते।" तब लाख यह समझाने पर कि वह कैसे जानती है भगवान किसका खाते हैं, किसका नहीं, वह कुछ सुनने को तैयार नहीं थी। जैसे निर्मल सौंदर्य की स्वामिनी थी वह, वैसा ही उसका हृदय भी था। जाने अब यदि वह जीवित होगी भी तो कैसे होगी। होगी भी या नहीं, कौन जाने? उसके पास कोई

अपनी ज़मीन तो होती नहीं थी कि एक स्थान पर टिके रहें। जहाँ रोजी मिली होगी, वहीं चली गई होगी। नैहर की मिट्टी खाकर कोई जी सकता है क्या? खाएगा तो अनाज ही। ज़मीन वाले ही कौन अब ज़मीन पकड़ कर बैठे रहते हैं? उससे असीमित आवश्यकताएँ कहाँ पूरी पड़ती हैं? केतकी के ही एक भाई चीफ़ इंजीनियर हैं, दूसरे डॉक्टर और बाकी दो बड़े ठेकेदार। सबकी कोठियाँ राजधानी में बनी हैं। बच्चों की शादियाँ भी वैसी ही हुई हैं। और केतकी के पति भी तो उतनी बड़ी संस्था के विज्ञापन मैनेजर हैं। मोटी तनख्वाह, गाड़ी, महानगर में अपना मकान। मैट्रिक पास केतकी ने महानगर में ही रह कर एम.ए., पीएच. डी. कर लिया। देश-विदेश घूमने से ही फुरसत नहीं मिलती। छुई-मुई-सी केतकी, फूल की तरह कोमल, अब गदरा कर भव्य महिला हो गई है। गाँव जाना है, यह सुन कर ही उतावली हो गयी थी केतकी। अपने वार्डरोब में देखा— एक भी सूती प्रिंट या तांत की साड़ी नहीं थी वहाँ, सिंथेटिक के सिवा कोई सूती पहनता भी नहीं। गहरी भी सूती साड़ियाँ धोना-कलफ़ देना नहीं जानती। हाउसकोट तक केतकी के पास इंपोर्टेड थे। पति के ऑफिस जाने के बाद सीधी वह राजस्थान इंपोरियम चली गयी और कुछ सूती रंग-बिरंगी चुनरें खरीद लाई। बड़े स्टील के तहवाले बक्से के नीचे रखी हुई थी उसकी वह पीली विष्णुपुरी साड़ी, उसे निकाल कर बहुत देर तक हाथ फेरती रही उस पर। लगा कैशोर्य के कोमल सपनों को सहला रही है। इसे ही जनेऊ के दिन पहनेगी केतकी। *आलता-बिछुआ और लौंग पहन कर कैसी लगेगी इस विष्णुपुरी साड़ी में*— कल्पना में देर तक डूबी रही थी केतकी।

गाड़ी स्टेशन पर आ गई है। चाँदनी रात है लेकिन घनी धुंध जमी है। स्टेशन की इमारत भव्य लगती है। पहले यूँ ही-सी थी। नई बनी लगती है। इस इलाके के कई प्रभावशाली नेता मंत्री बनते रहे हैं, तो यह भी न हो? गाड़ी लेकर एक चचेरा भाई आया है। कुछ वर्ष पहले यही फटी चादर और धोती के सहारे जाड़ा काटता था, किंतु अब ऊनी कोट-पैंट पहने है। गाड़ी में सामान रख कर उसने पूछा कि क्या इतनी रात को गाँव चलना ठीक होगा? केतकी चाहे तो सर्किट हाउस भी रिज़र्व कराया गया है, वहीं रह जाए। लेकिन केतकी तो उतावली थी, उसने बेसाख्ता कहा, "नहीं, नहीं, अभी गाँव जाऊँगी, गाड़ी है, कितनी देर लगेगी।" गाँव

पहुँच कर देखा, एक कतार में एक ही डिज़ाइन के चार मकान हैं। चारों मकानों को चारों ओर से ऊँची दीवार ने घेर रखा है और बड़ा-सा लोहे का दरवाज़ा है, जहाँ ठीक शहरी तरीके का दरबाननुमा जीव बैठा है। रात और धुंध के कारण और अधिक कुछ न देख सकी थी। चचेरे भाई ने पहले मकान का कोने वाला कमरा स्वयं खोला और केतकी का सामान रख दिया।

"तुम लोग सो जाओ, सुबह सबसे मुलाकात होगी," कह कर वह चला गया। केतकी ठगी-सी रह गई। गौने के बाद यह दूसरी बार गाँव आयी है। गाँव में इतना परिवर्तन? बड़ा चचेरा भाई स्वयं कमरा खोल कर बहन और जीजा जी को सो जाने को कह रहा था, बेटी के आने पर प्रतीक्षारत बैठे कहाँ गये स्वजन-पुरजन, कहाँ है जुड़ाने को रखा हुआ बड़ी-भात और कहाँ गयी वह परंपरा, जिसमें पहले देवी की विनती किए बिना किसी घर में पैर नहीं रखा जा सकता था? पथराई-सी खड़ी केतकी पति के टोकने पर सामान्य हुई। कई दिनों-रातों का जागरण और मकड़ी की तरह स्वयं के सत्व द्वारा बुने जाते तारों का खंडित दंश केतकी को बेहद थका गया था। वह जो सोई सो काफ़ी दिन उग आने के बाद जग सकी। जल्दी-जल्दी कमरे के अटैच्ड बाथरूम में स्नान कर बाहर निकली। "वाह, साले लोगों ने तो मकान बड़ा कंफर्टेबुल बनवा लिया है। इसमें तो रवि, हनी भी आकर रह सकते हैं।" पति ने प्रशंसात्मक नज़रों से चारों ओर देखते हुए कहा।

"हाँ, बिलकुल सही, बल्कि ज़्यादा अच्छा है। इतना खूबसूरत टाइलों और ग्रिलोंवाला मकान शहरों में भी कम ही देखने में आता है।"

"खुद इंजीनियर साहब का कमाल है," हँसते हुए पति भी बाथरूम की ओर बढ़ गए। भैया ने सारी सुविधाएँ दे रखी हैं इस कमरे में, सोचती है केतकी। यह तो सर्किट हाउस या डाक बँगले से कम नहीं है। उसे अब संकोच हो रहा था कैसे अंदर की ओर जाए। किधर से जाए। उसे लिवाने कोई नहीं आ रहा है। तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उठ कर देखा तो बारह-तेरह साल की एक बच्ची थी, "आप ही केतकी दीदी हैं?" सुंदर चटख रंगों का जाँघों से ऊपर फ्राक और उलझे बाल। यह शायद काम करने वाली है कोई। उसे देख कर केतकी मुसकराई, "हाँ!"

"तो चलिए, बड़ी काकी बुला रही हैं।" लगा पक्षियों का कलरव सुन रही है केतकी।

"चल," झट से खड़ी होकर लगभग दौड़ती हुई उस बालिका के पीछे चल पड़ी वह। ग्रिल से घेरे हुए बरामदे को पार करती हुई केतकी ने देखा, बड़े से हॉलनुमा कमरे में भाभियाँ बैठी थीं। केतकी ने बारी-बारी से सबों के पैर छुए। चाय पीते हुए उसने गौर किया, जाड़े में भी घर की नवीन सदस्याएँ कम कपड़े पहने हुए हैं, ऊपर से शरीर शाल से ढका हुआ है, यही गनीमत।

"तुम रात देर से आई। मैंने रामविलास से कह दिया था कि तुम लोगों को गेस्टरूम में ठहरा दे। कोई परेशानी तो नहीं हुई? नींद तो आई?" बड़ी भाभी ने औपचारिक आत्मीयता से पूछा।

"आपके राज में कोई कमी नहीं भाभी," कह कर केतकी नए लोगों से परिचय पाने में व्यस्त हो गई। गाजा-बाजा, रोशनी, सब कुछ था। कहीं कोई झंझट नहीं। कोई काम किया जा रहा था, ऐसा नहीं लग रहा था, ऐसा लगता था मानो सारा काम आपसे आप हो रहा हो। सागर की लहरें जैसे आती हैं, और चली जाती हैं, वैसे ही सारे रस्म-रिवाज़, संस्कार।

"यह केतकी है?" एक वृद्धा ने नज़दीक आकर पूछा।

"हाँ, अभी मैंने पैर छुए थे आपके," केतकी ने सफ़ाई दी।

"कम दीखता है बेटी," उसने कहा, "बेटी", "तुम्हें जमाय बाबू मानते हैं न?" उसकी आँखों में संदेह लहरा रहा था। वह चुटकियों में केतकी की साड़ी पकड़े हुए थी।

"हाँ, क्यों?" केतकी अचंभित हो उठी।

"तूने कैसी साड़ी पहन रखी है। देख तो वे सब कैसी पहने हैं। फिर तू तो बड़े घर-वर से ब्याही थी।" अब केतकी को लगा कि उसने सचमुच ग़लती की जो भड़कदार आधुनिक साड़ियाँ नहीं लाई। भाभी लोगों के सामने तो आँखें चुरा ही रही थी, गाँव की इन वृद्धा के सामने भी लज्जित हो गयी।

शुभ-शुभ कर यज्ञोपवीत का कार्यक्रम समाप्त हुआ। केतकी अपने गाँव को देखने की लालसा को न्योत लाई। "भाभी, जरा गाँव देखती।" केतकी ने बड़ी भाभी से पूछे बिना कभी घर से पैर बाहर नहीं निकाला था। वे मुसकराईं, "ठीक है, देख आओ, तुम बदली नहीं जरा भी।" केतकी ने उसी छोटी लड़की को साथ लिया और चल पड़ी। बड़ी-सी चारदीवारी के बाहर भी चौड़ी कंक्रीट की सड़क। चंद कदमों पर पनबिजली निकालने वाला विशाल यंत्र, विद्युत-ग्राम। अब उसे यज्ञोपवीत के दिन की वह शहरी पार्टी भी याद आयी। उसे सचमुच उस दिन उतनी सारी कॉस्मोपोलिटन स्त्रियों को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था, और काँटे-छुरी से भरी उस पार्टी को देखकर मन जाने कैसा-कैसा हो गया था। यह सब शो गाँव में नहीं होना चाहिए था, उसने सोचा। लेकिन एक प्रश्न मन में बना ही रहा था कि इतने सारे कॉस्मोपोलिटन लोग कहाँ से आए, यहाँ गाँव में?

"दीदी, यहाँ बिजली बनाते हैं। देखती हैं न, सब जगह गाँव में बिजली है।" साथ की लड़की पुलकित थी।

"तुझे बिजली अच्छी लगती है?"

"हाँ, बहुत! खूब इजोत होता है।"

"अच्छा?" और केतकी मेंड़ों के सहारे खेत में उतर गई। मटर और तीसी के खेत। सफ़ेद, नीले और गहरे गुलाबी खेत। आगे सरसों और तोड़ी के खेत, पीले-पीले फूलों वाले खेत। केतकी कुछ सोचती हुई नीचे उतरती रही। प्रकृति के पास सबसे अनूठे रंग हैं।

"केतकी दीदी, इधर गाँव नहीं है, फुलवारी है।" साथ की लड़की ने कहा।

"मैं फुलवारी ही जाऊँगी।" और थोड़ी देर में केतकी पुरानी अमराई में पहुँच चुकी थी। फुलवारी कई चारदीवारियों में बँटी थी। कई नए वृक्ष लगे थे। लड़की ने बताया कि चारों भाइयों की फुलवारी है। चलती हुई केतकी बीच में पहुँच गई। एक पुराना महुआ का पेड़ कटा पड़ा था। पास ही आम का एक विशाल छायादार पेड़ था।

"दीदी, यह आप ही का पेड़ है," लड़की ने याद दिलाया।

"तुझे कैसे मालूम?" केतकी ने पूछा।

"सभी कहते हैं कतिकी दाई का पेड़।"

"ओ, अच्छा!" इसी पेड़ के नीचे केतकी, संज्ञा, कालिंदी, बुच्ची और रमा खेला करती थीं। लड़कों का झुंड बगलवाले महुए के पास जमता था। अकसर लड़कों से इन लोगों का झगड़ा ही रहता था। यही समीर कितना शैतान था। एक बार महुए का ताज़ा फल लेकर केतकी की नाक में रगड़ दिया था, केतकी बेहोश हो गयी थी। बाद में इसी बात पर चिढ़ाया भी करता था समीर कि केतकी महुए की गंध से ही बेहोश हो गई थी। पेड़ कितना ऊँचा और छायादार है, केतकी सोच रही थी। यह पेड़ सबसे पहले फलता है। लाल-लाल सेन्हुरिया आम पक-पक कर आप ही चूने लगते हैं। अधिक पके आम धरती पर गिरते ही फट जाते हैं, छिलका और बीज अलग-अलग। ज़ोर की आवाज़ से ध्यान भंग हुआ। चारदीवारी से निकल कर देखने लगी केतकी। कौन दहाड़ा इतनी ज़ोर से? देखा, सरसों, तीसी, मटर के खेतों के पारवाले खेत में ट्रैक्टर चल रहा है। दूर-दूर तक कहीं हल-बैल नहीं दीखते।

"बड़का काका का खेत है, मकई के लिए तैयार हो रहा है। मेरा बाबू डिरेवर है।" लड़की ने गर्व से बताया। अचानक वातावरण मशीन की दहाड़ से भर गया। कलेजा धक-धक कर उठा केतकी का। अपने को संभालते हुए उसने पूछा उस लड़की से, "तुम किसकी बेटी हो?"

"रामप्रीत की।"

"बैजू तुम्हारा दादा था?"

"हाँ।" केतकी को स्मरण हो आया। बैजू उन लोगों का अगला हलवाहा था। सिरपंचमी के दिन पसेरी-भर धान के बिना हल ही नहीं उठाता था। उसके लिए अइपन का थड़ बड़ा बनाना पड़ता। पीठ पर पिठार सिंदूर का थप्पा लिये दिन-भर घूमता रहता। कहता, केतकी

दाई का असिरबांदी है। मन में आया, पूछें कि क्या ट्रैक्टर भी सिरपंचमी में अइपन चढ़ता है? फिर स्वयं ही अपने आप पर हँसी आ गई। वह मन-ही-मन नचारी गुनगुनाने लगती है–

"अमिय चूबिय भूमि खसत, बाघंबर जागत हे।
आहे होयत बाघंबर बाघ, बसहा धरि खायत हे।"

शिव को पार्वती नृत्य करने के लिए कहती हैं, फिर अपना डर पार्वती से बताते हैं कि उनके नाचने से अमृत बूँदें बाघंबर पर गिरेंगी, बाघंबर बाघ बन जायेगा और बसहा बैल को खा जाएगा।

विज्ञान का शिव-तांडव। अमृत बूँद से जमा यंत्र-व्याघ्र गरज रहा है खेतों में। लौट पड़ती है केतकी।

"कल चलते हैं न हम लोग?" रात को पति से कहा।

"क्यों, तुम तो कुछ दिन और रुकने वाली थीं?" पति ने प्रतिप्रश्न किया।

"नहीं, चलूँगी।"

"ठीक है। मुझे क्या एतराज हो सकता है!"

दूसरे दिन केतकी के जाने की सारी तैयारी हो गई। भाई-भाभियों के चरण छू सूखी आँखों से वह गाड़ी में बैठ गई। रामविलास आगे था, केतकी और उसके पति पीछे। गाड़ी थोड़ी देर में हवेली छोड़ कर आगे बढ़ गई। गाँव पास आ पहुँचा। कंक्रीट की ऊँची सड़क के किनारे मिट्टी के टीले पर बसा गाँव। ओखल-मूसल चलाती औरतें। अधनंगे, नाक बहाते बच्चे।

लाल रंग डोलिया सबुज रंग ओहरिया
अचके में लगलै कहार
– गोर-लागी-पैया-पड़ी भैया कहरिया
पल एक दियउ बिलमाए।

"रामविलास भैया, गाड़ी रोकिए न," केतकी उतावली होकर कह उठी। गाड़ी रोककर रामविलास पीछे देखने लगा।

"मैं ज़रा गाँव में जाऊँगी," वह झट से उतर कर सड़क से जुड़ी पगडंडी से उतर गई। पीछे-पीछे रामविलास मुसकराता हुआ चला। पहला ही घर तो सबुजनी दीदी का है। सामने खजूर की चटाई पर बैठी थी सबुजनी।

"के है?" मोतियाबिंद उतरी आंखों पर तलहथी देकर देखने लगी वह।

"दीदी, मुझको नहीं पहचाना?"

"दीदी, केतकी है," रामविलास ने कहा, "जरा भी नहीं बदली।"

केतकी के मन में तूफ़ान उठ खड़ा हुआ। इन्हीं से मिलने तो वह आई थी, इन्हीं के लिए मन व्याकुल था।

"बाबू, केतिकी समीर बौआ के बेटा के जनेऊ में आई है?"

केतकी बोल नहीं पा रही थी। रामविलास ने ही कहा, "हाँ, अभी लौटकर जा रही है।" सबुजनी के गोरे झुर्रीदार चेहरे पर हर्ष की लहर दौड़ गई।

"अच्छा हुआ, ग्राम-समाज को देखने आ गई। तू बिना माँ की बेटी हम सबकी बेटी थी। अरे, कहाँ गई सुलेमान की कनियां? ज़रा सोना सिंदूर ले आ। केतकी की माँग भर। एक चुटकी धान-दूब ले आ, खोंइछा भर दे।" भीड़ जैसा समां हो गया था। एक बहू दौड़कर अंदर से सारा सामान ले आई। भाभी तो खोंइछा देना भी भूल गई थीं। रेशमी आँचल की खूँट आप-से-आप खुल गई। इसी दूब-धान के लिए मन उदास था, लगता है।

"मेहमान कहाँ है बेटी?" सबुजनी ने पूछा।

"गाड़ी में हैं," अब रामविलास चिढ़ने लगा था, "ट्रेन छूट जाएगी!"

"अच्छा, अच्छा, जैनबी जा, तूने जो नया सीकी का पौती बुना है, ले आ..."

"और सुन। गिलास माँज कर पानी और गुड़ की भेली भी ले आ।" कमर से निकालकर दो रूपए का मुड़ा-तुड़ा नोट पौती में बंद कर केतकी के हाथों में थमा दिया। "यह

मेहमान का सलामी है। दे देना। गुड़ खा ले बेटा, पानी पी ले। ज़रा ठीक से। हाँ, जा, गाड़ी को देर हो रही है। देख लिया तुझे, सुख-चैन से मरूँगी।" आगे बढ़कर सबुजनी गले मिलने को हुई कि उद्भ्रांत-सी केतकी ने सिर टेक दिया और इतने दिनों का जमा आँसुओं का बाँध टूट पड़ा। सबुजनी हौले-हौले पीठ सहलाती जा रही थी— बेटी तो पंछी होती है...

"रो ले बेटी, रो ले, मन में कुछ न रखना, कहा-सुना छिमा करना। बेटी है, गाँव–जवार को असीसती जाना।"

केतकी बड़ी मुश्किल से अलग हुई। खूँट से बँधे चुटकी भर दूब-धान को मुट्ठियों में भींचे पगडंडी पार करने लगी।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. गाँव आने का कार्यक्रम बनते ही केतकी की नींद क्यों उड़ गई?
2. केतकी को अपने भाई-भाभियों से गाँव के संबंध में पूछे गए प्रश्नों का यथोचित उत्तर क्यों नहीं मिल पाता था?
3. गाँव तक सड़कों के बन जाने की बात सुन केतकी पल भर के लिए उदास क्यों हो गई?
4. केतकी स्टेशन पहुँचते ही गाँव जाने को उतावली क्यों हो उठी थी?
5. बड़े चचेरे भाई द्वारा केतकी को रात्रि विश्राम करने के लिए कहने पर केतकी स्तब्ध क्यों रह गई?
6. कहानी का शीर्षक दूब-धान प्रतीक है:
   (क) किसानों के परिश्रम का।
   (ख) सुख सौभाग्य एवं अनश्वरता का।
   (ग) लहलहाती वनस्पति और फ़सल का।
   (घ) ग्राम-जीवन के प्रति लगाव का।

लिखित

1. गाँव के लिए यात्रा शुरू करते ही केतकी को गाँव की किन-किन सुखद स्मृतियों ने घेर लिया?
2. 'जैसे निर्मल सौंदर्य की स्वामिनी थी वह, वैसा ही उसका हृदय भी था।' इस पंक्ति के आधार पर सबुजनी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
3. गाँव जाते समय केतकी ने सूती साड़ी ही क्यों पहनी और गाँव में उसे सूती साड़ी पहने देख क्या प्रतिक्रिया हुई?
4. केतकी के मन में रची-बसी गाँव की छवि गाँव पहुँचकर धूमिल क्यों हो गई?
5. गाँव से लौटती हुई व्यथित केतकी को यह अनुभव कब हुआ कि गाँव की आत्मीयता आज भी बाकी है?
6. सबुजनी ने ससुराल से आई बेटी केतकी एवं उसके पति की आवभगत में किन-किन प्रथाओं का निर्वाह किया?
7. गाँव पहुँचकर अपनी भाभियों से मिलने का अनुभव सबुजनी से मिलने के अनुभव से किन अर्थों में भिन्न है और इससे दोनों की किस मानसिकता का पता चलता है।
8. 'यह कहानी गाँव से जुड़ी बालिका (केतकी) के मोहभंग की कहानी है।' पक्ष अथवा विपक्ष में तर्क दीजिए।
9. लेखिका की ग्राम-जीवन से जुड़ी स्मृतियों में गाँव के अनेक रीति-रिवाज, संस्कार रचे-रमे हैं। पाठ में उल्लिखित ऐसे कुछ रीति-रिवाजों, संस्कारों आदि का चयन कीजिए।
10. आशय स्पष्ट कीजिए—
    (क) भाई-भाभी और भतीजे-भतीजियाँ नहीं रहते हैं तो क्या, पूरा-का-पूरा गाँव उसका अपना है।
    (ख) सागर की लहरें जैसे आती हैं, और चली जाती हैं, वैसे ही सारे रस्म-रिवाज, संस्कार।

भाषा-अध्ययन

1. नीचे दिए गए समस्त पदों का विग्रह कीजिए और समास का नाम बताइए—
   फल-फूल, स्वर्गवास, नगराभिमुख, रस्म-रिवाज, शिव-तांडव, बाघंबर।
2. पाठ में प्रयुक्त कुछ विशिष्ट भाषा-प्रयोग दिए गए हैं, उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए।

नींद उड़ जाना, हृदय फटना, जीभ काटना, सपने सहलाना, बेसाख़्ता कह उठना, ठगी-सी रह जाना, आँखें चुराना।

3. इस पाठ में अनेक स्थानों पर शुद्ध आँचलिक वाक्य प्रयुक्त हुए हैं यथा—
'केतकी ने सीकी की डलिया में मूढ़ी-लाई नहीं खाए और ना ही सीकी के बने कंगन, बाजूबंद खेल-खेल में सबुजनी से बनवाकर पहने।' — ऐसे ही कुछ अन्य वाक्य चुनिए।

योग्यता-विस्तार

'गाँव चले शहर की ओर' विषय पर एक निबंध लिखिए।

ग्राम्य अंचल की कुछ अन्य कहानियाँ पढ़िए और उन्हें कक्षा में सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

दूब-धान	—	दूब पवित्रता का प्रतीक है तथा समृद्धि का प्रतीक धान है
नगराभिमुख	—	नगर की ओर मुख कर लेना, नगरवासी हो जाना
ड्योढ़ी	—	घर का प्रवेश कक्ष, पौरी
माकूल	—	उपयुक्त
नवगधुली	—	पौधा, अंकुर
मालदह	—	पश्चिमी बंगाल के एक नगर मालदा के प्रसिद्ध आम
सिकता	—	रेत
बारादरी	—	डोली
काश	—	एक प्रकार की झाड़ी जिसमें सफेद फूल खिलते हैं
पटेर	—	झाड़ीनुमा वृक्ष
पीपें	—	आम की गुठली को घिसकर बनाई जाने वाली सीटी
मूढ़ी-लाई	—	मुरमुरे और गुड़ के लड्डू
सीकी	—	एक प्रकार की मुलायम घास जिससे डलिया और आभूषण बनते हैं
मारकीन	—	एक मोटा कपड़ा
बाजूबंद	—	बाँह पर पहनने का गहना
आलता	—	पैर में लगाने का लाल रंग
बिछुआ	—	पैर की उंगलियों में पहना जाने वाला आभूषण

अइपन-एपन –	चावल और हल्दी एक साथ पीस कर बनाया हुआ लेप जो मांगलिक कार्यों, पूजन आदि में काम आता है
पुरइन के थड़ –	कमल का पत्ता और नाल
जीतिया –	संतान की मंगल कामना के लिए किया जाने वाला व्रत
छठ –	सूर्य देव के लिए किया जाने वाला व्रत
कंक्रीट (अंग्रेज़ी) –	कंकड़, सीमेंट, बालू के मिश्रण से बना हुआ भवन-निर्माण के काम आने वाला मसाला
अबरक –	चमकदार खनिज, अभ्रक धातु
इजोत –	प्रकाश
तीसी –	तिलहन
बिलमाए –	विस्मृत
तलहथी –	आँख के ऊपर हथेली रखकर देखना
खोइछा –	नवविवाहिता के आँचल में दूब-धान, हल्दी, सुपारी तथा सिक्के आदि रखकर दिया जाने वाला आशीर्वाद।
पौती –	छोटी टोकरी
जौसन बाजू तक –	बाँह गहनों से इस प्रकार लदी है जैसे रुपयों की छड़ी हो, रुपयों का छड़।

जयंत विष्णु नार्लीकर

प्रो. जयंत विष्णु नार्लीकर का जन्म कोल्हापुर, महाराष्ट्र में सन 1938 में हुआ। उन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा वाराणसी में प्राप्त की, तत्पश्चात् उच्च शिक्षा के लिए वे कैंब्रिज गए। कैंब्रिज विश्वविद्यालय में वे 1959 में रैंगलर बने तथा 1960 की अंतिम परीक्षाओं में उन्होंने विशेष योग्यता हासिल की। उन्हें खगोल विज्ञान के लिए टाइसन पदक भी मिला। 1960 में ही वे विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो. फ्रेड हॉयल के मार्गदर्शन में अनुसंधान करने लगे।

कैंब्रिज में पंद्रह वर्षों तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद नार्लीकर को 1976 में उनके विशिष्ट अनुसंधान के लिए कैंब्रिज विश्वविद्यालय से डाक्टर ऑफ साइंस की उपाधि प्रदान की गई। 1963 में उनका चयन किंग्स कालेज के फेलो के रूप में हुआ था तथा 1967 में वे कैंब्रिज विश्वविद्यालय के इंस्टीट्यूट ऑफ थिअरेटिकल एस्ट्रोनामी के सदस्य बन गए। कैंब्रिज विश्वविद्यालय में कार्यकाल के दौरान उन्हें स्मिथ पुरस्कार (1962) और एडम पुरस्कार (1967) से सम्मानित किया गया।

प्रो. नार्लीकर 1972 में टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च (टी.आई.एफ.आर.) में प्रोफ़ेसर के रूप में भारत आए, जहाँ वे सैद्धांतिक खगोल विज्ञान ग्रुप की अध्यक्षता करते रहे हैं। 1973 - 75 में वे जवाहरलाल नेहरू फेलो थे। 1979-80 में वे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के राष्ट्रीय प्रवक्ता थे।

वे भारतीय भौतिक संगठन और भारतीय खगोलीय सोसायटी के सदस्य हैं। उन्हें विज्ञान संस्थान, मुंबई द्वारा 1973 में गोल्डन-जुबली स्वर्ण पदक तथा 1975 में पद्मभूषण

द्वारा सम्मानित किया गया। 1978 में उन्हें भौतिक विज्ञान के लिए 'शांतिस्वरूप भटनागर' पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। 1983 में इनका चुनाव रॉयल एस्ट्रोनामिकल सोसायटी, लंदन के एसोशिएट के रूप में हुआ।

*विज्ञान तथा साहित्य के आप सिद्धहस्त लेखक हैं। आप अपनी मातृभाषा मराठी में लिखते हैं। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं — **आगंतुक, वामन नहीं लौटा** तथा **यक्षोपहार**।*

***तारों की दुनिया** में नामक इस लेख में तारों से संबंधित जानकारी को अत्यंत सरल, सुबोध एवं रोचक भाषा में प्रस्तुत किया गया है। इस पाठ में विद्वान लेखक ने एक ओर तो सूर्य से भी अधिक प्रकाशवान होने पर भी दिन में तारों के न दिखने के पीछे वैज्ञानिक कारणों एवं तारों और ग्रहों के अंतर तथा ग्रहों से संबंधित अंधविश्वासों और भ्रामक धारणाओं पर प्रकाश डाला है, तो दूसरी ओर ध्रुवतारे की अटलता के संबंध में पौराणिक कथा का विज्ञान-सम्मत स्पष्टीकरण करने का प्रयास किया है। निश्चय ही प्रस्तुत पाठ खगोल-विज्ञान के संबंध में हमारे ज्ञान को सार्थक दिशा देगा।*

तारों की दुनिया में

खुले आकाश में सूर्यास्त के बाद हमें तारे दिखाई देने लगते हैं। सूर्य के क्षितिज के नीचे जाने पर भी कुछ समय तक आकाश पर हलका सा प्रकाश छाया रहता है। जब वह प्रकाश भी लुप्त होने लगता है तब क्रमशः तारे आकाश के पर्दे पर दिखलाई देने लगते हैं। वे कहाँ से आते हैं? तारे किसी एक जगह से नहीं आते हैं और न ही वे एकाएक आकाश में प्रकट होते हैं। वे अंतरिक्ष में मौजूद रहते हैं पर सूर्य की चमक-दमक के आगे उनका तेज फीका पड़ जाता है और वे दिन में दिखाई नहीं देते। इतना ही नहीं– चंद्रमा के धीमे प्रकाश में भी कई तारे लुप्त हो जाते हैं। एक संस्कृत सुभाषित है :

वंरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खः शतानपि।
एकः चंद्रस्तमोहंति न तु तारागणः शतम्।।

अर्थ है : सौ मूर्ख पुत्रों से एक गुणवान पुत्र बेहतर है। देखो, एक चंद्रमा अंधकार दूर कर सकता है जिस काम को सैकड़ों तारे नहीं कर पाते।

वास्तव में कवि ने इस श्लोक में तारों के प्रति अन्याय किया है। तारे बहुत प्रकाशवान होते हैं। सूर्य भी एक तारा ही है। केवल निकट होने के कारण वह बहुत तेजस्वी लगता है। जैसे सौ वाट पॉवर के बल्ब को एक फुट की दूरी से देखने का अगर हम दुस्साहस करें तो हमारी आँखें चकाचौंध हो जाएँगी, किन्तु वही बल्ब सौ मीटर की दूरी से देखने पर कितना मंद लगेगा। इसी प्रकार आकाश में दिखाई देने वाले तारों में कई तारे सूर्य से भी कई गुना प्रकाशवान हैं, लेकिन बहुत दूर होने के कारण वे मंद लगते हैं। और चन्द्रमा? उसका प्रकाश तो खुद उसका अपना नहीं है बल्कि सूर्य का बिखराया प्रकाश है।

प्राचीन काल से तारों का अध्ययन करने वालों ने कई महत्त्व की बातें देखीं। उन्होंने देखा कि अधिकांश तारे सूर्य की तरह पूरब से उदय होकर पश्चिम दिशा में अस्त होते हैं। इसलिए यदि तुम कैमरे का शटर रात भर खुला रखकर आकाश का फ़ोटो खींचोगे तो तुम्हारे फ़ोटो में तारे नज़र नहीं आएँगे। वहाँ नज़र आएँगी गोलाकार कक्षाएँ।

यदि फ़ोटो उत्तरी गोलार्ध में खींचा जाए तो तुम देखोगे कि एक तारा ऐसा है जो कक्षा में घूमने के बजाय स्थिर नज़र आएगा। वही है ध्रुव तारा जिसको हमारी पौराणिक कथाओं में महत्त्व का स्थान प्राप्त है। ध्रुव की कहानी संक्षेप में इस प्रकार है:

राजा उत्तानपाद की दो रानियाँ थीं – सुनीति और सुरुचि, जिनमें सुरुचि उन्हें अधिक प्रिय थी। एक दिन सुरुचि के पुत्र उत्तम को अपने पिता की गोद में बैठे देखकर सुनीति के पुत्र ध्रुव ने भी वहाँ बैठना चाहा, परंतु सुरुचि ने उसे वहाँ से ज़बरदस्ती हटा दिया। इस घटना से क्षुब्ध होकर बालक ध्रुव ने भगवान शंकर की कड़ी तपस्या की। आखिर भगवान प्रसन्न होकर बोले, "बेटा वर माँगो।" तो ध्रुव ने ऐसे स्थान की माँग की जहाँ से उसे हटाया न जा सके। वही ध्रुव आकाश में आज भी अटल मालूम पड़ता है।

किसी खास प्राकृतिक घटना को, जिसका कारण विज्ञान द्वारा नहीं मिलता, ऐसी लोक कथाओं में गढ़ लिया जाता है। लेकिन जैसे-जैसे विज्ञान उन्नति करता जाता है, कारण-मीमांसा भी आगे चलकर हो ही जाती है। और फिर लोक कथा केवल एक मनोरंजक कहानी के रूप में ही रह जाती है।

ध्रुव तारा अटल क्यों प्रतीत होता है? ये सभी कक्षाएँ गोलाकार क्यों हैं? दो हज़ार साल पहले यूनानी निरीक्षकों की यह धारणा थी कि पृथ्वी के चारों ओर ब्रह्मांड एक गेंद के रूप में फैला हुआ है और यह गेंद एक धुरी पर घूमती है। इस धारणा के अनुसार तारे इस गेंद पर चिपके प्रकाश स्रोत हैं जो गेंद के साथ-साथ घूमते हैं। ध्रुव तारा गेंद की धुरी पर होने के कारण नहीं घूमता। (एक गेंद को किसी भी व्यास के चारों ओर घुमाकर देखो। गेंद की सतह पर दो बिंदु ऐसे मिलेंगे जो सदा स्थिर रहते हैं।)

पाँचवी सदी में जन्मे भारतीय ज्योतिर्विद आर्यभट्ट ने इस धारणा का खंडन किया था। अपने ग्रंथ 'आर्यभटीय' में उन्होंने यह दलील दी :

जिस प्रकार नदी के तट पर स्थित स्थिर वस्तुओं (पेड़, मकान, आदि) को नाव में बैठा व्यक्ति उलटी दिशा में जाते देखता है उसी प्रकार स्थिर तारे पृथ्वी से देखने पर पश्चिम दिशा में जाते दिखाई देते हैं। इसलिए आर्यभट्ट का यह दावा सही है कि ब्रह्मांड के तारे स्थिर हैं और हमारी पृथ्वी ही अपनी उत्तर-दक्षिण धुरी पर घूमती है। घूमती पृथ्वी से देखने पर भी तारे घूमते नजर आते हैं। लेकिन तत्कालीन एवं आर्यभट्ट के बाद के विद्वानों ने सही दलील का समर्थन नहीं किया और दुर्भाग्य से इस विचार-धारा को दस शताब्दियों तक उपेक्षित रहना पड़ा। सोलहवीं सदी में कोपर्निकस के विचारों का प्रभाव जैसे-जैसे बढ़ने लगा वैसे-वैसे स्थिर पृथ्वी की कल्पना दोलायमान होती गई।

आज हम यह जानते हैं कि पृथ्वी एक लट्टू की तरह अपनी धुरी पर चारों ओर घूमती है और यह धुरी उत्तर दिशा में ध्रुव तारे की ओर है। हाँ, इस लट्टू के उदाहरण में एक और तथ्य भी छिपा है। जब तुम एक लट्टू को घुमाते हो तो क्या उसकी धुरी स्थिर रहती है? नहीं। वह भी धीरे-धीरे शंकु बनाते हुए घूमा करती है। इसी तरह पृथ्वी की धुरी भी अंतरिक्ष में स्थिर नहीं है। वह भी धीरे-धीरे घूमती हुई लगभग 20,000 वर्षों में एक चक्कर पूरा करती है। इसका मतलब यह हुआ कि सर्वदा यह धुरी ध्रुवतारे की ओर नहीं रहेगी। करीब 5,000 वर्ष पहले पृथ्वी वासियों को ध्रुव तारा भी घूमता नज़र आता होगा क्योंकि उस समय अटल स्थान था थुबैन तारे का। इसी प्रकार भविष्य में 11,000 वर्षों के उपरान्त ध्रुव के बजाय वेगा अटल तारा होगा।

यदि हम आकाश के तारों को ध्यान से देखें और कई महीने अपने निरीक्षणों को जारी रखें तो हमें एक और बात दिखाई देगी। वह यह कि सामान्यतः हर तारा अपने पड़ोसी तारों की पृष्ठभूमि में स्थिर दिखाई देगा। यानी तारों के पटल पर कुछ इने-गिने अपवाद छोड़कर सभी तारे स्थिर रहते हैं। केवल पृथ्वी के घूमने के कारण यह तारा-पटल पूर्व से पश्चिम को सरकता नज़र आता है।

जो इने-गिने अपवाद हैं उन्हें ग्रह कहते हैं। यूनानी निरीक्षकों ने ग्रहों को 'प्लेनेट' यानी घुमक्कड़ कहा, क्योंकि उन्हें इनकी गति में अनियमितता दिखाई दी। तारा पटल पर, या सूर्य की दिशा से तुलना करने पर ग्रह कभी आगे कभी पीछे जाते दिखाई देते हैं।

मानव स्वयं को विचारवान जीव समझता है किंतु प्रत्यक्ष आचरण में अपनी विचारशीलता को सर्वदा काम में नहीं लाता। खासकर जब वह सृष्टि की घटनाओं में विचित्रता पाता है तब वह अक्सर अंधविश्वासों का शिकार हो जाता है, जैसे ग्रहों की विचित्र गति को देखकर सामान्य मानव ने यह धारणा बना ली कि इन ग्रहों में कुछ विशेष शक्ति होती है जिसके बल पर वे इधर-उधर भटकते हैं।

फिर इसी धारणा ने फलित ज्योतिष को प्रोत्साहित किया। "यदि ग्रहों में कोई खास शक्ति है तो हो सकता है उसका प्रभाव मानव जीवन पर भी पड़ता हो"— इस प्रकार की कल्पना से मानव को लगने लगा कि उसके जीवन का नियंत्रण इन ग्रहों के प्रभाव से होता है।

ग्रहों के घूमने की पहेली सुलझी सत्रहवीं सदी में जब योहान केप्लर ने ग्रहों के निरीक्षणों का विश्लेषण करके यह सिद्ध किया कि ग्रह मनमाने नहीं भटकते बल्कि वे नियमित कक्षाओं में सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। अपने तीन नियमों द्वारा केप्लर ने ग्रहों की गति का पूरा-पूरा विवरण दिया और उसी सदी में आइज़क न्यूटन ने उन तीनों नियमों का संबंध सूर्य के गुरुत्वाकर्षण से जोड़ा। इस प्रकार अब हम जानते हैं कि ग्रह शक्तिवान एवं स्वेच्छाचारी न होकर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण द्वारा नियमित कक्षाओं में घूमते हैं। अतः जिस भ्रामक धारणा ने फलित ज्योतिष को प्रोत्साहित किया उसका अब कोई सबूत नहीं रहा।

ग्रह और तारों का फ़र्क अब स्पष्ट हो चुका है। हमारे सूर्य के चारों ओर घूमने वाले ग्रह, तारों की अपेक्षा हमारे काफ़ी निकट हैं परंतु तारों की भाँति स्वयं प्रकाशित न होने के कारण दूसरे तारों के ग्रहों को देखना मुश्किल है। यह संभव है कि अन्य तारों की भी ग्रहमालाएँ हों।

ग्रह पास हैं, तारे दूर हैं, लेकिन ये दूरियाँ हैं कितनी लंबी?

सन 1838 में बेसल नामक एक जर्मन ज्योतिर्विद ने तारों की दूरियाँ नापने के लिए पैरलैक्स विधि को सफलतापूर्वक अपनाया। इस विधि से आसपास के लगभग सात सौ तारों

की दूरियाँ आज हम नाप सकते हैं। किंतु आकाश में हम जिन तारों को अपनी आँखों से देख पाते हैं उनमें से अधिकांश तारों की दूरियाँ इतनी अधिक है कि उन्हें नापने के लिए पैरलैक्स प्रणाली भी कामयाब नहीं होती है। आज ऐसी स्थिति है कि जो तारा हम देख सकते हैं उसकी दूरी पैरलैक्स विधि से नाप नहीं सकते और जिसकी दूरी हम नाप सकते हैं उसे देख नहीं सकते।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. तारे दिन में क्यों दिखाई नहीं पड़ते?
2. कैमरे के शटर को रात भर खुला रखकर आकाश का फोटो खींचने पर उसमें तारे नज़र नहीं आते क्योंकि
   (क) वे एक दिशा से उदय होकर दूसरी दिशा में अस्त होते हैं।
   (ख) वे पृथ्वी से बहुत दूर होते हैं।
   (ग) उनका प्रकाश बहुत मंद होता है।
   (घ) वे चंद्रमा के प्रकाश में लुप्त हो जाते हैं।
3. लेखक के अनुसार संस्कृत श्लोक में तारों के प्रति क्या अन्याय हुआ है?
4. यूनानी निरीक्षकों ने ग्रहों को प्लेनेट क्यों कहा है?
5. नीचे लिखे शब्दों का उच्चारण कीजिए –
   दुस्साहस, ज्योतिर्विद, दोलायमान, पृष्ठभूमि, गुरुत्वाकर्षण।

लिखित

1. सूर्य स्वयं एक तारा होने पर भी इतना प्रकाशवान क्यों है?
2. ध्रुवतारा आकाश में आज भी अटल है। इसके पीछे कौन सी लोककथा है?
3. आर्यभट्ट ने तारों से संबंधित किस धारणा का खंडन किया और क्यों?
4. फलित ज्योतिष क्या है? इसे किस धारणा ने प्रोत्साहित किया था?
5. ग्रहों और तारों में अंतर स्पष्ट कीजिए।

भाषा-अध्ययन

1. निम्नलिखित शब्दों में प्रयुक्त प्रत्ययों को लेकर दो-दो शब्द और बनाइए –
   यशस्वी, प्रकाशवान, प्राकृतिक, भारतीय, उपेक्षित, दोलायमान, तत्कालीन।
2. नीचे दिए गए प्रत्येक शब्द के दो अर्थ हो सकते हैं। ऐसे वाक्य बनाइए जिनसे शब्दों के दोनों अर्थ स्पष्ट हो जाएँ –
   कक्षा, वर, दर्शन।

योग्यता-विस्तार

1. विज्ञान जिस घटना का कोई कारण नहीं दे पाता, वे घटनाएँ लोक कथाएँ बनकर रह जाती हैं। लेखक ने ऐसी एक लोक कथा का उल्लेख किया है। कुछ अन्य ऐसी लोक कथाएँ चुनिए और कक्षा में सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

तेजस्वी – चमकीला
कक्षा – घूमने का एक निश्चित पथ
गोलार्ध – घूमने का आधा भाग जो एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक रेखा खींचने से बने
वेधशाला – यंत्रों की सहायता से ग्रहों आदि की गतियों को देखने की जगह
क्षुब्ध – दुखी
मीमांसा – विचार करना
ज्योतिर्विद – ज्योतिषी
दलील – तर्क
निरीक्षण – जाँच
अपवाद – सामान्य नियम के विरुद्ध नियम
गुरुत्वाकर्षण – भार के कारण वस्तु का पृथ्वी के केंद्र की ओर खींचा जाना
फलित ज्योतिष – ग्रह-नक्षत्रों आदि के शुभ-अशुभ फल बताने वाला शास्त्र,
विश्लेषण – तथ्यों आदि को अलग-अलग करके छानबीन करना
योहान केप्लर – एक वैज्ञानिक का नाम
पैरलैक्स – तारों की दूरी नापने की एक विधि।

पद्य खंड

कविता का अध्ययन और अध्यापन

प्रस्तुत संकलन का उद्देश्य केवल कविताओं के अध्ययन तक ही सीमित नहीं है बल्कि उनके माध्यम से हिंदी काव्य-साहित्य की सामान्य जानकारी देना और काव्य के पठन-पाठन के प्रति रुचि उत्पन्न करना भी है । शिक्षण कार्य करते समय इस मूल उद्देश्य को ध्यान में रखना है ।

कविता का अध्ययन मुख्यत: आनंदानुभूति के लिए किया जाता है और कविता का आनंद स्वयं कविता पढ़कर लिया जाता है। कविता-अध्ययन की अपेक्षा रखती है और अध्ययन द्वारा कविता के आनंद के अभिवृद्धि होती है। अपने परिवेश और जीवन को समझने के लिए कविता अंतर्दृष्टि देती है। कविता के अध्ययन का उद्देश्य भाषा-ज्ञान, सूचना-संग्रह या उपदेश न होकर सौंदर्य की अनुभूति द्वारा भावात्मक विकास करना है। कविता सद्वृत्तियों को जगाती है, प्रकृति से तादात्मय स्थापित करने के साथ मानवता का भाव विकसित करती है। मन और हृदय को उदार और संवेदनशील बनाती है। कुछ कविताएँ मनुष्य को तनावहीन करती हैं तो कुछ आंदोलित, उत्तेजित अथवा क्षुब्ध भी करती हैं।

शिक्षण की सुविधा की दृष्टि से काव्य सौंदर्य को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है– अभिव्यक्ति का सौंदर्य, भाव-सौंदर्य और विचार-सौंदर्य ।

अभिव्यक्ति के सौंदर्य का अर्थ है, नाद और चित्रात्मकता का सौंदर्य। चित्रात्मकता भी कविता का एक प्रमुख सौंदर्य विधायक तत्त्व है। कवि भावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति के लिए ऐसे शब्दों का चयन करता है कि पाठक को सहज ही उनका मानस-प्रत्यक्ष हो जाता

है। कविता का आनंद स्वयं पाठक की अपनी संवेदनशीलता, संस्कार, सुरुचि और सहज-बुद्धि पर ही निर्भर है किंतु किसी सीमा तक काव्य शिक्षण के द्वारा उसकी सहज बुद्धि को जाग्रत और रुचि को परिष्कृत किया जा सकता है। अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, प्रतीक आदि के सहारे वस्तु-व्यापारों के चित्र प्रस्तुत किए जाते हैं। रसखान का पद 'गोरज बिराजै भाल' पढ़िए। उसमें आपको भाव-सौंदर्य के साथ-साथ नाद सौंदर्य और चित्रात्मकता के यथेष्ठ उदाहरण मिलेंगे ।

भाव-सौंदर्य के अंतर्गत हर्ष, विषाद, उत्साह, प्रेम, भक्ति, वात्सल्य आदि भावों के वर्णन आते हैं । भाव-सौंदर्य को ही काव्य समीक्षकों ने रस की संज्ञा दी है और अधिकांश विद्वानों ने रस को ही काव्य की आत्मा माना है। श्रृंगार, वीर, करुण, शांत, रौद्र, भयानक, अद्भुत, हास्य तथा वीभत्स रस कविता में माने जाते हैं। इनके अतिरिक्त भक्ति और वात्सल्य को भी कुछ आचार्य रस स्वीकार करते हैं। प्रस्तुत संकलन में सूरदास का पद 'बिनु गोपाल बैरिनि भई कुंजै' तथा रसखान का पद 'सोहत है चँदवा सिर मौर के' प्रेम भाव के उदाहरण हैं।

विषय और विचार की उच्चता से कविता में गरिमा आती है। स्थायी काव्य प्रायः वे ही हैं जिनका विषय महान और श्रेष्ठ है। बहुत-सी ऐसी रचनाएँ हैं जिनमें कवित्व नहीं के बराबर है किंतु व्यक्त विचारों के कारण वे लोकप्रिय और स्थायी बन गई हैं। विचार सौंदर्य के अंतर्गत जीवन दर्शन तथा नीति संबंधी रचनाएँ आती हैं। कबीर और रहीम के नीति के दोहों में विचारों की प्रधानता है। प्रस्तुत संकलन में जीवन-दर्शन की दृष्टि से मैथिलीशरण गुप्त की कविता 'विश्वराज्य', सुमित्रानंदन पंत की कविता 'कातो अंधकार तन मन का', रामकुमार वर्मा की कविता 'ग्राम देवता', अज्ञेय की 'मेरे देश की आँखें' और नागार्जुन की 'उनको प्रणाम' विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

कविता के सामान्य अध्ययन के लिए आवश्यक है कि पढ़ी जाने वाली कविता का एक से अधिक बार सस्वर वाचन किया जाए। कविता के अर्थबोध, रसास्वादन और सौंदर्यानुभूति के लिए लय के साथ भावपूर्ण वाचन आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। कविता की

लय, यति, गति, विराम, बलाघात और मात्रा की व्यवस्था पर निर्भर है। अतएव छंदबद्ध और छंदमुक्त सभी रचनाओं में लय-विशेष को ध्यान में रखते हुए कविता पाठ किया जाना चाहिए। शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण, विषय और भाव के अनुसार वाणी-भंगिमा और आरोह-अवरोह प्रभावपूर्ण कविता पाठ के लिए आवश्यक है। एक बार के वाचन से ही कविता का मर्म और सौंदर्य आत्मसात नहीं किया जा सकता। अतः कविता का एक से अधिक बार वाचन आवश्यक है।

कविता का सौंदर्य उसके अर्थ में निहित रहता है। प्रसंगानुकूल प्रयुक्त शब्द अपेक्षित अर्थ को व्यक्त करता है। कवि का सारा कौशल उपयुक्त अर्थ की व्यंजना करने वाले शब्दों के चयन और व्यवस्था पर रहता है ताकि अल्पतम शब्दों में अधिक से अधिक, गंभीर से गंभीर तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म अर्थ की व्यंजना कर सकें।

अर्थबोध के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले कविता का वाच्यार्थ स्पष्ट कर लिया जाए। उसके बाद वाच्यार्थ से भिन्न या संलग्न अन्य लक्षित अथवा व्यंजित अर्थों का यथासंभव स्पष्टीकरण किया जाए। क्योंकि केवल वाच्यार्थ-बोध से कविता के मर्म को आत्मसात नहीं किया जा सकता। वह तो रसानुभूति और सत्य से साक्षात्कार करने का पहला चरण है। उसके लिए कविता में विद्यमान लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ का उद्घाटन किया जाना चाहिए।

कविता का समग्र प्रभाव कहीं रस के रूप में होता है, कहीं भाव के रूप में और कहीं विचार के रूप में। जिन कविताओं में रस, भाव और विचार स्पष्ट रूप से कथित या व्यंजित रहते हैं, उनकी स्पष्ट पहचान आवश्यक है किंतु कुछ कविताएँ ऐसी भी होती हैं जिनमें कवि जानबूझकर अपने भाव या विचार को अस्पष्ट छोड़ देता है। ऐसी कविताओं में अनेक अर्थों की संभावनाएँ होती हैं और उन संभावनाओं की दिशा में पाठक के अंतर्मन को दौड़ाना ही कविता का मुख्य प्रयोजन होता है। इसलिए यहाँ कल्पना की पूरी छूट होती है और इसी तरह का प्रयास यहाँ अपेक्षित भी है। ऐसी कविताओं में स्पष्टता के नाम पर किसी एक निश्चित अर्थ को थोप देना उस कविता के साथ अन्याय होगा।

कक्षा-शिक्षण में निम्नांकित क्रम अपनाया जा सकता है:

(क) सुपाठ–शिक्षक द्वारा।

(ख) मुख्य भाव ग्रहण।

(ग) शब्दार्थ तथा सूक्ष्म भाव–विद्यार्थियों की सहभागिता द्वारा।

(घ) व्याख्या एवं सराहना।

(ङ) विद्यार्थियों द्वारा सुपाठ।

(च) मूल्यांकन– कविता कंठस्थ करना, सुवाचन एवं सराहना आदि।

कविता के प्रभावपूर्ण शिक्षण के लिए कवि के सामान्य परिचय के साथ-साथ उसकी भाषा शैली तथा अन्य काव्यगत विशेषताओं की ओर भी विद्यार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। विद्यार्थियों को कवि की अन्य रचनाओं को पढ़ने के लिए भी प्रेरित और प्रोत्साहित करना चाहिए।

कबीरदास

कबीरदास का जन्म लगभग सन 1398 में काशी में हुआ। व्यवसाय से वे जुलाहे थे। सुप्रसिद्ध संत स्वामी रामानंद उनके गुरु थे। कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे, किन्तु उन्होंने साधु-संगति और अपने अनुभव से जीवन और जगत का जो ज्ञान तथा मर्म प्राप्त किया वह अद्भुत था।

कबीर का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज बड़े परिवर्तन के दौर से गुज़र रहा था। उन्होंने समाज के संघटन के लिए समस्त बाह्याचारों का अंत करने और प्रेमपूर्वक समान धरातल पर रहने का एक सर्वमान्य सिद्धांत प्रतिपादित किया। वे काशी में रहे, अतः वहाँ पंडितों के आडंबरों को उन्होंने निकट से देखा था। वे मुसलमान परिवार में पले-बढ़े, अतः इस्लाम की कमज़ोरियों से भी वे परिचित थे। उन्होंने इन दोनों धर्मों की संकीर्णता और कट्टरता का खंडन करके मानव-प्रेम की सामान्य भूमि पर दोनों के मेल-मिलाप का पथ प्रशस्त किया। कबीर मूलतः कवि नहीं संत थे। उनकी कविता गहरी सामाजिक चेतना से उद्भूत है। प्रेम के क्षेत्र में राजा-प्रजा, ऊँच-नीच, जाति-पाँति का भेद उन्हें सहन नहीं था। उनका दृढ़ विश्वास था कि 'सहज समाधि' सहज प्रेम से ही सिद्ध होती है। वे 'कागद की लेखी' की बजाय 'आँखिन की देखी' को अधिक प्रामाणिक मानते थे। लगभग सन 1518 में कबीरदास की मृत्यु हुई।

कबीर की रचनाएँ मुख्यतः ***कबीर ग्रंथावली*** *में संग्रहीत हैं, किंतु कबीर पंथ में बीजक ही मान्य है। उनकी कुछ रचनाएँ सिखों के धर्म-ग्रंथ गुरु-ग्रंथ साहब में भी संकलित हैं। कबीर की साखियों की भाषा राजस्थानी-पंजाबी-मिश्रित बोली है, जिसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सधुक्कड़ी कहा है। रमैनी और सबद में गेय पद हैं, जिनमें ब्रजभाषा और कहीं-*

कहीं पूरबी हिंदी का भी प्रयोग है। उनकी भाषा ऊबड़-खाबड़ अवश्य है, किन्तु सूक्ष्म-से-सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने की उसमें अद्‌भुत क्षमता है। उनका प्रमुख उद्‌देश्य अपने भावों, विचारों और अनुभूतियों को वाणी प्रदान करना था, जिसमें उन्हें पूरी सफलता मिली है।

कबीर के व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्‌विवेदी ने लिखा है:"ऐसे थे कबीर, सिर से पैर तक मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के सामने प्रचंड, दिल के साफ़, दिमाग के दुरुस्त, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय। वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधने वाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे। सच पूछा जाए तो हिंदी में ऐसा जबर्दस्त व्यंग्य लेखक पैदा ही नहीं हुआ।"

*यहाँ दिए गए **प्रथम पद** में कबीर ने जाति-धर्म के भेदभाव और बाह्‌य आडंबरों पर चोट की है। उनका कहना है कि हिंदू-मुसलमान व्यर्थ ही आपस में लड़ रहे हैं। वे जप, माला, तिलक आदि बाह्‌य आडंबरों में फँसे हैं और माया के अभिमान में स्वयं को छल रहे हैं। अंत में ऐसे लोगों को पछताना पड़ेगा क्योंकि वे प्रपंचों में फँसे हैं और उस परम सत्ता को नहीं पहचानते।*

***दूसरे पद** में कबीरदास ने कमलिनी और जल के प्रतीकों के माध्यम से जीवात्मा और परमात्मा के संबंधों का उल्लेख किया है और परमात्मा का अंश होने के बावजूद जीवात्मा का अन्यत्र (सांसारिक माया के साथ) हित जुड़ जाने के कारण उसके उदास होने और मुरझाने पर चिंता व्यक्त की है।*

(क) सांधो, देखो जग बौराना

साधो, देखो जग बौराना।
साँची कहौ तौ मारन धावै, झूठे जग पतियाना।।
हिंदू कहत है राम हमारा, मुसलमान रहमाना।
आपस मैं दौऊ लड़े मरतु हैं, मरम कोई नहिं जाना।।
बहुत मिले मोहिं नेमी धर्मी प्रात करै असनाना।
आतम-छोड़ि पषानै पूजैं, तिनका थोथा ज्ञाना।।
आसन मारि डिंभ धरि बैठे, मन में बहुत गुमाना।
पीपर -पाथर पूजन लागे, तीरथ –बर्त भुलाना।।
माला पहिरे, टोपी पहिरे, छाप-तिलक अनुमाना।
साखी सब्दै गावत भूले, आतम खबर न जाना।।
घर-घर मंत्र जो देन फिरत हैं, माया के अभिमाना।
गुरुवा सहित सिष्य सब बूड़े, अंतकाल पछिताना।।
बहुतक देखे पीर-औलिया, पढ़ै किताब-कुराना।
करै मुरीद, कबर बतलावैं, उनहूँ खुदा न जाना।।
हिंदू की दया, मेहर तुरकन की, दोनों घर से भागी।
वह करै जिबह; वाँ झटका मारे, आग दोऊ घर लागी।।
या बिधि हँसत चलत है हमको, आप कहावैं स्याना।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, इनमें कौन दिवाना।।

(ख) काहे री नलनी तूँ कुम्हलाँनी

काहे री नलनी तूँ कुम्हलाँनीं।
तेरे ही नालि सरोवर पानी।।

जल मैं उतपति, जल में बास।
जल में नलनी तोर निवास।।
ना तलि तपति न ऊपरि आगि।
तोर हेतु कहु कासनि लागि।।
कहै कबीर जे उदिक समान।
ते नहिं मुए हँमरें जान।।

प्रश्न-अभ्यास

(क) साधो, देखो जग बौराना

मौखिक

1. कबीर ने जग को पागल क्यों कहा है?
2. 'साँची कहौ तौ मारन धावै, झूठे जग पतियाना' से लोगों की किस प्रवृत्ति का पता चलता है?
3. कबीर ने इस पद में किन-किन पाखंडों का उल्लेख किया है?
4. कबीर के विचार में पीर-औलिया भी खुदा को क्यों नहीं जान पाते?
5. 'इनमें कौन दिवाना' में 'इनमें' शब्द का प्रयोग किनके लिए हुआ है?

लिखित

1. कबीर की दृष्टि में किन लोगों को आत्मबोध नहीं हो पाता?
2. कबीर को क्यों कहना पड़ा– 'आग दोऊ घर लागी'?
3. 'आप कहावैं स्याना' कहकर कबीर ने किन लोगों पर व्यंग्य किया है?
4. भाव स्पष्ट कीजिए–
   (क) मरम कोई नहिं जाना
   (ख) साखी सब्दै गावत भूले, आतम खबर न जाना
   (ग) गुरुवा सहित सिष्य सब बूड़े

योग्यता-विस्तार

1. कबीर की कुछ ऐसी साखियाँ याद कीजिए जिनमें उन्होंने सामाजिक कुरीतियों और बाह्य आडंबरों का विरोध किया है।
2. आडंबरों का विरोध करने वाले कुछ अन्य कवियों की कविताओं को खोजकर पढ़िए।
3. 'कबीर आज भी प्रासंगिक हैं' इस विषय पर एक परिचर्चा आयोजित कीजिए।

(ख) काहे री नलनी तूँ कुम्हलाँनीं

मौखिक

1. नलनी और जल के प्रतीकों को स्पष्ट कीजिए।
2. कवि की दृष्टि से कमलिनी को क्यों नहीं कुम्हलाना चाहिए?

लिखित

1. 'तोर हेतु कहु कासनि लागि' कथन में कासनि (किससे) के द्वारा कवि ने किस ओर संकेत किया है —
   (क) जीव की ओर
   (ख) ब्रह्म की ओर
   (ग) सांसारिक माया की ओर
   (घ) ज्ञान की ओर

2. 'जे अदिक रामान' के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
3. कबीर की दृष्टि मे मुन्ष्य को कौन नहीं प्राप्त होते और क्यों?
4. भाव स्पष्ट कीजिए :
   जल में उतपति, जल में बास,
   जल में नलनी तोर निवास।

योग्यता-विस्तार

1. कबीर के कुछ अन्य पद अथवा साखियों को खोजकर पढ़िए, जिनमें आत्मा-परमात्मा के संबंधों का चित्रण हुआ है।

शब्दार्थ और टिप्पणी

(क) साधो, देखो जग बौराना

पषान — पाषाण, पत्थर
पतियाना — विश्वास करना
मरम — मर्म, भेद, रहस्य
डिंभ — दंभ, आडंबर
बूड़े — डूब गए
मेहर — दया, कृपा
जिबह — हत्या करना, कलमा पढ़ते हुए पशु का धीरे-धीरे वध करना
झटका — एक ही वार में (झटके में) पशु का वध करना
स्याना — चतुर
पीर-औलिया — सिद्ध पुरुष और फ़कीर
करैं मुरीद — भक्त बनाना, अनुयायी बनाना
कब्बर बतलावै — कब्र की पूजा करने को कहते हैं
दिवाना — दीवाना, सनकी, विक्षिप्त

छाप -तिलक	---	धर्माचरण के बाहरी लक्षण, जैसे : राम-नामी, दुपट्टा पहनना, माथे पर भिन्न-भिन्न प्रकार के तिलक लगाना आदि

(ख) काहे री नलनी तूँ कुम्हलाँनीं

नलनीं	---	कमलिनी
नालि	---	निकट, पास, कमल की डंडी
तलि	---	नीचे
तपति	---	ताप, गरमी
कारनि	---	किससे
हेतु	---	लगन, प्रेम
उदिक	---	जल
मुए	---	मरे
हँमरे जान	---	हमारे विचार से।

सूरदास

विद्वानों का मत है कि सूरदास का जन्म दिल्ली के निकट, वल्लभगढ़ से लगभग तीन किलोमीटर दूर 'सीही' नामक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में सन 1478 के आसपास हुआ था। तथा सन 1583 के लगभग इनका स्वर्गवास हुआ। किशोरावस्था में ही ये संसार से विरक्त होकर मथुरा चले गए और बाद में आगरा-मथुरा के बीच गऊघाट पर साधु के रूप में रहने लगे। यहीं महाप्रभु वल्लभाचार्य से इनकी भेंट हुई। इन्होंने अपना एक पद गाकर महाप्रभु को सुनाया, जिससे वे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने सूरदास को अपना शिष्य बना लिया। उन्हीं की आज्ञा से सूरदास ने 'श्रीमद्भागवत' के आधार पर कृष्ण-लीला का विस्तारपूर्वक पद-शैली में गान किया।

सूरदास के विषय में प्रसिद्ध है कि ये जन्मांध थे, परंतु इनके काव्य के वर्ण्य-विषयों को देखते हुए इस बात पर विश्वास नहीं होता। इन्होंने अपनी कविता में विविध रंगों, बालकों की स्वाभाविक चेष्टाओं तथा प्राकृतिक दृश्यों का जैसा सजीव और यथार्थ चित्रण किया है, वह वस्तुओं को देखे बिना संभव नहीं।

महाकवि सूरदास श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। कृष्ण के मनोहारी रूपों का वर्णन करने में सूर की कला निखर उठी है। बाल-लीला-वर्णन में जैसी तन्मयता इनकी वाणी में मिलती है वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। इनके काव्य में यद्यपि सभी रसों का समावेश हुआ है, फिर भी वात्सल्य और शृंगार की प्रधानता है। इन दो रसों के चित्रण में तो सूरदास अद्वितीय हैं। इनकी कविता ब्रजभाषा में है जो साहित्यिक होते हुए भी बोलचाल की भाषा के बहुत निकट है।

*सूरदास के रचे पाँच ग्रंथ कहे जाते हैं – **सूरसागर, सूर सारावली, साहित्य लहरी, नल-दमयंती, ब्याहली**। इनमें से अंतिम दो पुस्तकें अप्राप्य हैं और उनका सूर-कृत होना भी अधिकांश विद्वानों को मान्य नहीं है। **सूरसागर** इनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है और यही सूर की अमर कीर्ति का आधार है। इसके विषय में प्रसिद्ध है कि इसमें सवा लाख पद थे, किंतु अभी तक उसके लगभग पाँच हज़ार पद ही प्राप्त हो सके हैं।*

*'सूरसागर' के **भ्रमरगीत** प्रसंग से दो पद दिए गए हैं। पहले पद में कृष्ण के वियोग में वे सभी वस्तुएँ गोपियों को पीड़ा दे रही हैं जो कृष्ण के साथ होने पर आनंददायक थीं। दूसरे पद में गोपियाँ उद्धव को अपनी विवशता के बारे में बता रही हैं कि वे अपने एकमात्र मन को श्रीकृष्ण को सौंप चुकी हैं, उनसे मिलने की आशा से ही जीवित हैं। श्रीकृष्ण के अतिरिक्त उनका अन्य कोई नहीं है। इसीलिए वे निर्गुण ईश्वर को मन में बसा नहीं सकतीं।*

भ्रमरगीत

बिनु गोपाल बैरिनि भई कुँजैं।
तब वै लता लगति तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं।।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजैं।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं।।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग-जोवत, अँखियाँ भई छुंजैं।।1।।

उधौ मन न भए दस बीस।
एक हुतौ सो गयौ स्याम संग, को अवराधै ईस।।
इंद्री सिथिल भई केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वासा, जीयहिं कोटि बरीस।।
तुम तो सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
सूर हमारे नंद-नंदन बिनु, और नहीं जगदीस।।2।।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. यमुना तट के जो कुंज गोपियों के लिए आनंददायक थे, वे अब बैरी-से क्यों लगते हैं?

2. निर्गुण ईश्वर की उपासना करने में गोपियाँ अपने को असमर्थ क्यों पा रही हैं?
3. श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा करती गोपियों की दशा कैसी हो गई है?

लिखित

1. 'बिनु गोपाल बैरनि भई कुंजैं' पद के अनुसार उन वस्तुओं/स्थितियों को बताइए जो संयोग में आनंददायक थीं और वियोग में कष्टदायक हो गई।
2. 'मन न भए दस बीस' कहकर गोपियाँ क्या समझाना चाहती हैं?
3. भाव सौंदर्य स्पष्ट कीजिए :
   (क) दधि-सुत किरनि भानु भई भुंजैं।
   (ख) एक हुतो सो गयो स्याम संग, को अवराधै ईस।

योग्यता-विस्तार

जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' के भ्रमरगीत संबंधी कवित्त को पढ़िए और सूरदास से उनकी तुलना कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

ज्वाल की पुंजैं — आग की लपटें
अलि गुंजैं — भौंरे गुंजार करते हैं
घनसार — कपूर
दधि सुत — चंद्रमा
सजीवन — संजीवनी बूटी, जीवनदायिनी वनस्पति
हुतो — था
मदन — कामदेव
लुंजैं — लुंज-पुंज, लूला-लँगड़ा
गुंजैं — घुँघची, (आँखें गुंजा-सी लाल हो गई)
पुरवौ — पूरा करें।

रसखान

हिंदी की सेवा करने वाले मुसलमान कवियों में रसखान अन्यतम हैं। उनका जन्म दिल्ली के एक संपन्न पठान परिवार में सन 1533 के लगभग हुआ। कृष्ण-भक्ति ने रसखान को ऐसा मुग्ध कर लिया था कि वे गोकुल जा बसे। वहाँ उन्होंने गोस्वामी बिट्ठलनाथ से दीक्षा ग्रहण की और जीवन भर वे वृंदावन में ही रह गए।

रसखान का वास्तविक नाम सैयद इब्राहीम था। वे बड़े प्रेमी स्वभाव के थे। वैष्णवों के उपदेश और साधुओं की संगति से उनका लौकिक प्रेम भगवान कृष्ण के प्रति अलौकिक प्रेम में बदल गया। श्रीकृष्ण की भक्ति के रस में डूबा हुआ देखकर लोग उन्हें रसखान कहने लगे और वे स्वयं भी भक्ति-भावना वाले पदों में अपने को 'रसखान' नाम से ही व्यक्त करने लगे।

कृष्ण-प्रेम की गहराई और निष्ठा के कारण गोस्वामी बिट्ठलनाथ के 252 प्रधान शिष्यों में रसखान की भी गणना होती है। सन 1614 के लगभग रसखान की मृत्यु हुई।

रसखान की केवल दो पुस्तकें उपलब्ध हैं ***सुजान रसखान*** *और* ***प्रेमवाटिका***। ***सुजान रसखान*** *में कवित्त-सवैये हैं।* ***प्रेमवाटिका*** *में उनके दोहे हैं। रसखान-साहित्य का मुख्य विषय कृष्ण-प्रेम और भक्ति है। उनकी कविता कृष्ण-प्रेम एवं ब्रज-प्रेम से ओत-प्रोत है।*

रसखान की भाषा सरस और सरल ब्रजभाषा है। ऐसी मधुर आडंबर से मुक्त ब्रजभाषा के दर्शन बहुत कम कवियों में होते हैं। मुहावरों ने उनकी भाषा को बड़ा जीवंत बना दिया है। अनुप्रास की अनोखी छटा भी बड़ी मनोहारिणी है।

रसखान ने दोहा, कवित्त और सवैया छंदों में ही काव्य-रचना की है।

यहाँ रसखान के दो पद दिए जा रहे हैं। ***प्रथम पद*** *में श्रीकृष्ण के रूप-सौंदर्य का मनोरम चित्रण है।* ***दूसरे पद*** *में मुरलीवादन का गोपियों पर ऐसा अद्भुत प्रभाव दर्शाया गया है कि वे अपनी सुध-बुध खो बैठती हैं।*

कृष्णभक्ति

सोहत है चँदवा सिर मोर के, जैसिये सुंदर पाग कसी है।
तैसिये गोरज भाल बिराजति, जैसी हिये बनमाल लसी है ।
रसखानि बिलोकत बौरी भई, दृग मूँदि कै ग्वालि पुकारि हँसी है।
खोलि री घूँघट, खोलौं कहा, वह मूरति नैनन मांझ बसी है।।1।।

गोरज बिराजै भाल लहलही बनमाल
आगे गैया पाछे ग्वाल गावै मृदु तान री।
तैसी धुनि बाँसुरी मधुर मधुर तैसी ,
बंक चितवनि मंद-मंद मुसकानि री।।
कदम बिटप के निकट तटनी के आग
अटा चढ़ि चाहि पीतपट फहरानि री।
रस बरसावै तन तपनि बुझावै नैन
प्राननि रिझावै वह आवै रसखानि री।।2।।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. गोपी के बावरी हो जाने का क्या कारण है?
2. गोपी अपने नेत्र क्यों नहीं खोलना चाहती?
3. गोपी अपनी सखी से अटारी पर चढ़कर क्या देखने को कह रही है?
4. गोपी के विचार में कृष्ण का रूप-माधुर्य उस पर क्या प्रभाव उत्पन्न करता है?

लिखित

1. गोपियों के नेत्रों में बसी कृष्ण की मूर्ति का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
2. 'गोरज विराजै भाल' पद के आधार पर गाय चराकर लौटते हुए कृष्ण की छवि का शब्द-चित्र प्रस्तुत कीजिए।
3. कृष्ण के रूप सौंदर्य के प्रस्तुत दो चित्रों में से आपको कौन-सा चित्र अधिक अच्छा लगा और क्यों?

योग्यता-विस्तार

रसखान के कुछ अन्य सवैये याद कीजिए और कक्षा में उनका सस्वर वाचन कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

मोर	-	मौर, एक प्रकार का मुकुट
गोरज	-	गायों के खुरों से उड़ी धूल
बंक चितवनि	-	तिरछी नज़र
कदम विटप	-	कदंब का पेड़
तटनी	-	नदी (यमुना)
अटा	-	अटारी, छत।

मैथिलीशरण गुप्त

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म सन 1886 में चिरगाँव, ज़िला झाँसी (उत्तर प्रदेश) में हुआ और निधन सन 1964 में हुआ। इनके पिता सेठ रामचरण गुप्त अच्छे कवि थे। अतः इनको भी यह कला पिता से विरासत के रूप में मिली थी। इनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय विद्‌यालय में हुई। तत्पश्चात् ये झाँसी के मेकडॉनल हाई स्कूल में प्रविष्ट हुए। इसी बीच इनका संपर्क मुंशी अजमेरी जी से हो गया। उनसे काव्य-रचना संबंधी आवश्यक बातों का ज्ञान हुआ और ये काव्य-रचना के क्षेत्र में उतर आए।

मैथिलीशरण गुप्त की प्रारंभिक रचनाएँ कोलकाता से प्रकाशित हुआ करती थीं। बाद में आचार्य महावीर प्रसाद द्‌विवेदी के संपर्क में आने पर 'सरस्वती' पत्रिका में भी प्रकाशित होने लगीं। द्‌विवेदी जी के प्रोत्साहन से इनकी काव्यकला में पर्याप्त निखार आया।

हिंदी कविता के क्षेत्र में इनके काव्य को बहुत लोकप्रियता मिली है। इनकी रचनाओं में स्वदेश प्रेम का स्वर अनेक रूपों में मुखरित और गुंजरित हुआ है। इसीलिए इन्हें 'राष्ट्रकवि' कहकर सम्मानित किया गया। सन 1957 में इनको साकेत महाकाव्य पर मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार दिया गया। सन 1946 में हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलहाबाद ने इन्हें साहित्य वाचस्पति की उपाधि प्रदान की। अनेक वर्षों तक ये राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे।

गुप्त जी ने हिंदी साहित्य को दो महाकाव्य और उन्नीस खंडकाव्य प्रदान किए। ***भारत-भारती,*** *गुप्त जी की अमर कृति है। राष्ट्रीयता के प्रचार एवं प्रसार का श्रेय इसी*

कृति को जाता है। तुलसीदास के रामचरितमानस के बाद हिंदी में राम काव्य की दूसरी महत्त्वपूर्ण कृति ***साकेत*** *है। इस महाकाव्य में इन्होंने कवियों द्वारा उपेक्षित उर्मिला को नायिका बनाया है।* ***जयद्रथ वध, यशोधरा, पंचवटी*** *आदि इनकी अन्य प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।*

पंचवटी में प्रकृति प्रेम का चित्रण बहुत ही सुंदर ढंग से किया गया है। गुप्त जी ने अन्य धर्मों के उदात्त तत्त्वों का भी वर्णन किया है। जैसे 'अर्जन और विसर्जन' में ईसाई संस्कृति, 'काबा और कर्बला' में इस्लाम, 'कुणाल' में बौद्ध संस्कृति तथा 'अनघ' में जैन संस्कृति की छाप है।

विश्वराज्य *कविता हमें प्रांत, देश आदि की सीमाओं से परे एक संपूर्ण विश्व के संदर्भ में सोचने की प्रेरणा देती है। गुप्त जी का विश्वास है कि प्रकृति के सभी उपादानों पर मानवमात्र का अधिकार है। सभी लोग एक ही मानव-परिवार के अंग हैं, परस्पर पूरक हैं। इसलिए हमें जन्मभूमि की मान्यता की व्यापकता विश्वराज्य के रूप में करनी होगी।*

विश्वराज्य

कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
भिन्न -भिन्न यदि देश हमारे तो किसका संसार?
        धरती को हम काटें छाँटें,
        तो उस अंबर को भी बाँटें,
एक अनल है, एक सलिल है, एक अनिल-संचार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
        एक भूमि है, एक व्योम है,
        एक सूर्य है, एक सोम है,
एक प्रकृति है, एक पुरुष है, अगणित रूपाकार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
        ठौर-ठौर का गुण अपना है,
        ऋतुओं का कंपना - तपना है,
समशीतोष्ण एकरस हमको, होना है अविकार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
        अलग-अलग हैं सभी अधूरे,
        सब मिलकर ही तो हम पूरे,
एक दूसरे का पूरक है, एक मनुज परिवार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?

स्वर्ण-भूमि यदि अलग तुम्हारी,
तो हम भी लौहायुधधारी,
कैसे हो सकता है फिर इस विग्रह का परिहार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
परित्राण का एक मंत्र है,
विश्वराज्य, जो लोकतंत्र है,
सब वर्णों का, सब धर्मों का, जहाँ एक अधिकार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?
एक देह के विविध अंग हम,
दुख-सुख में सब एक संग हम,
लगे एक के क्षत पर सबका स्नेह लेप सौ बार।
कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. कविता में उल्लिखित पाँच तत्वों के नाम बताइए।
2. कवि के अनुसार हम अधूरे क्यों लगते हैं?
3. भिन्न-भिन्न ऋतुओं में हमें कैसा बने रहने का अधिकार है?
4. कवि के अनुसार रक्षा का एकमात्र मंत्र क्या है?

लिखित

1. 'कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार?'
   इस प्रश्न को बार-बार पूछकर कवि क्या संदेश देना चाहता है?

2. किन पंक्तियों में कवि पाँच तत्त्वों का उल्लेख करते हुए केवल एक तत्त्व के आधार पर ही देशों में विभाजन संभव मानता है?
3. आपके विचार में मानव समाज किस प्रकार एक-दूसरे का पूरक है?
4. दो राष्ट्रों में फूट पड़ने का कारण कवि ने क्या माना है?
5. कवि ने किस रूप में विश्वराज्य की कल्पना की है?
6. भाव सौंदर्य स्पष्ट कीजिए:
   (क) एक प्रकृति है, एक पुरुष है, अगणित रूपाकार।
   (ख) लगे एक के क्षत पर सबका स्नेह लेप सौ बार।

योग्यता-विस्तार

1. 'अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना' विषय पर एक निबंध लिखिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त और माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा लिखित 'स्वदेश प्रेम' की कुछ कविताएँ याद कीजिए और सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

स्वर्णभूमि	—	संपन्न देश
लौहायुधधारी	—	लोहे को धारण करने वाला, शक्तिशाली
विग्रह	—	फूट, झगड़ा
परिहार	—	समाधान, हल
परित्राण	—	रक्षा
क्षत	—	घाव, चोट

एक प्रकृति है, एक पुरुष है, अगणित रूपाकार— भारतीय दर्शन के अनुसार प्रकृति और पुरुष से ही अनेक रूपों में सृष्टि का अस्तित्व हुआ है। वेद, उपनिषद, गीता आदि में यही उल्लेख मिलता है—

— एकोहं बहुस्याम (अनेक रूपों में एक मैं ही हूँ)
— पुरुष एवेदं सर्वम् (यह सब पुरुष ही है)
— अहं सर्वस्य प्रभवो, मत्तः सर्वं प्रवर्तते-
(मुझसे ही सबका जन्म और विकास होता है)।

सुमित्रानंदन पंत

सुमित्रानंदन पंत का जन्म सन 1900 में अल्मोड़ा ज़िले के कौसानी गाँव में एक संपन्न परिवार में हुआ। जन्म के छह घंटे बाद ही उनकी माता का देहावसान हो गया। उनका बचपन का नाम गुसाईं दत्त था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा अल्मोड़ा में हुई। सन 1919 में पंतजी इलाहाबाद आए और म्योर सेंट्रल कालेज में भरती हुए। असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर बिना परीक्षा दिए ही उन्होंने पढ़ना छोड़ दिया और स्वाध्याय में लग गए।

पंतजी ने छंद रचना चौथी कक्षा में ही आरंभ कर दी थी, पर उनका वास्तविक कवि-कर्म कालेज में प्रारंभ हुआ। उन्होंने सन 1938 में 'रूपाभ' पत्रिका निकाली, जिसकी प्रगतिशील साहित्य के विकास और प्रचार में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। सन 1950 से 1957 तक वे आकाशवाणी के हिन्दी परामर्शदाता रहे। पंतजी को सोवियत भूमि का नेहरू पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पंत जी का निधन सन 1977 में हुआ।

पंतजी छायावाद के कवियों में सबसे अधिक रोमांटिक तथा व्यक्तिवादी माने जाते हैं। एक तरह सेउनका सारा व्यक्तित्व ही गीतिमय है। उनकी साहित्यिक यात्रा के तीन सोपान हैं— प्रथम में वे छायावादी, दूसरे में समाजवादी आदर्शों से प्रेरित प्रगतिवादी तथा तीसरे में अरविंद दर्शन से प्रभावित अध्यात्मवादी हैं। उनकी काव्य यात्रा के सन 1921-28 के कालखंड को ***वीणा-पल्लव काल*** *कहा जाता है।* ***गुंजन*** *छायावाद की प्रौढ़ कृति है, जिसमें प्रकृति और मानव-सौंदर्य के प्रति नवीन उन्मेष है। गांधी-मार्क्स के प्रभाव से उन्हें नवीन जीवन-दृष्टि मिली जो* ***युगांत*** *से* ***ग्राम्या*** *तक व्याप्त है। सन 1945-59 तक के*

काल को कवि ने नवमानवतावाद का स्वप्नकाल कहा है। **स्वर्ण धूलि** से लेकर **उत्तरा** तक की कविताओं में अरविंद की चेतनावादी काव्य-धारा के दर्शन होते हैं।

पंत छायावाद के सबसे सुकुमार कवि माने जाते हैं। उनका संपूर्ण साहित्य हिंदी साहित्य की आधुनिक चेतना का प्रतीक है। उन्होंने आधुनिक हिन्दी काव्य को श्रेष्ठ अभिव्यंजना, व्यक्तिमत्ता, भाषा-सामर्थ्य तथा नई छंद दृष्टि देकर नई शक्ति और स्फूर्ति से अनुप्राणित किया।

उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं-- **वीणा, ग्रंथि, पल्लव, गुंजन, युगांत, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्ण किरण, उत्तरा, कला और बूढ़ा चाँद, चिदंबरा तथा लोकायतन**। काव्य के अतिरिक्त उन्होंने आलोचना, कहानी, आत्मकथा आदि गद्य विधाओं में भी रचनाएँ कीं।

गाता खग कविता में बताया गया है कि प्रकृति के विविध स्वरूप मनुष्य के कल्याण और उत्थान के लिए कुछ-न-कुछ संदेश देते हैं।

कातो अंधकार तन-मन का में कवि समाज में व्याप्त बुराइयों को नष्ट करने के लिए नए सद्गुणों को स्थापित करने का आग्रह करता है। धुनने-कातने और बुनने से संबंधित शब्दावली का प्रयोग कर कवि शील, स्नेह और सुरुचि का नवीन वस्त्र तैयार करने को कहता है, जिससे कि विश्वभर में मानवता की स्थापना हो सके।

(क) गाता खग

गाता खग प्रातः उठकर —
सुंदर, सुखमय जग-जीवन !
गाता खग संध्या -तट पर —
मंगल, मधुमय जग-जीवन !

कहती अपलक तारावलि
अपनी आँखों का अनुभव,
अवलोक आँख आँसू की
भर आतीं आँखें नीरव !

हँसमुख प्रसून सिखलाते
पल भर है, जो हँस पाओ,
अपने उर की सौरभ से
जग का आँगन भर जाओ !

उठ-उठ लहरें कहतीं यह —
हम कूल विलोक न पाएँ,
पर इस उमंग में बह-बह
नित आगे बढ़ती जाएँ !

कँप-कँप हिलोर रह जाती–
रे मिलता नहीं किनारा !
बुद्‌बुद् विलीन हो चुपके
पा जाता आशय सारा !

(ख) कातो अंधकार तन-मन का

कातो अंधकार तन-मन का !
नव प्रकाश के रजत -स्वर्ण से
बुनो तरुण पट नव जीवन का !

युग -युग के बहु भेदों को धुन
बर्बरता, पाशवता को चुन,
नव मानवता से ढँक दो हे,
कुत्सित नग्न रूप जन-जन का !

दिशिपल के ताने-बाने भर
धूपछाँह रच संस्कृति सुंदर,
बीनो स्नेह सुरुचि संयम से
शील वसन नव भव यौवन का !

सजा पुरातन को, कर नूतन,
देश-देश का रंग अपनापन,
निखिल विश्व की हाट-बाट में
लेन-देन हो मानवपन का !

प्रश्न-अभ्यास

(क) गाता खग

मौखिक

1. पक्षी प्रातः उठकर क्या गाता है?
2. 'तारावलि की आँखों का अनुभव' क्या है?
3. फूल हमें क्या संदेश देते हैं?
4. लहरें किस उमंग में आगे बढ़ती जाती हैं?
5. हिलोरें काँप-काँप कर क्यों रह जाती हैं?

लिखित

1. प्रकृति से मानव जीवन को क्या-क्या अनुभव प्राप्त होते हैं? किन्हीं तीन का उल्लेख कीजिए।
2. बुद्बुद् शांत क्यों हो जाता है?
3. भाव स्पष्ट कीजिए :

   (क) अवलोक आँख आँसू की
   भर आतीं आँखें नीरव ।

   (ख) बुद्बुद् विलीन हो चुपके
   पा जाता आशय सारा !

योग्यता-विस्तार

सुमित्रानंदन पंत द्वारा लिखित प्रकृति सौंदर्य की कुछ कविताएँ याद कीजिए और सुनाइए।

(ख) काली अंधकार तन-मन का

मौखिक

1. नई मानवता के वस्त्र से किन-किनको ढाँपने की आवश्यकता है?

2. नवयौवन को सजाने के लिए कैसे वस्त्र की कल्पना की गई है?
3. कवि किस प्रकार के ताने-बानों से 'सुंदर संस्कृति' की रचना करना चाहता है?

लिखित

1. कवि नए जीवन का नया वस्त्र कैसे निर्मित करने को कहता है?
2. 'सजा पुरातन को, कर नूतन' कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।
3. संसार भर में मानवता का ही आदान-प्रदान हो— इसके लिए क्या-क्या होना आवश्यक है।
4. भाव स्पष्ट कीजिए :

   (क) नव प्रकाश के रजत-स्वर्ण से
   बुनो तरुण पट नवजीवन का !

   (ख) बोनो स्नेह सुरुचि संयम से
   शील वसन नव भव यौवन का !

योग्यता -विस्तार

- नई मानवता के निर्माण के लिए क्या-क्या होना आवश्यक है? इस पर चर्चा कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

(क) गाता खग

मधुमय	–	आनंदपूर्ण
अवलोक	–	देखकर
नीरव	–	शांत
प्रसून	–	फूल
सौरभ	–	सुगंध
कूल	–	तट
बुद्बुद	–	बुलबुला

(ख) काली अंधकार तन-मन का

रजत-स्वर्ण – चाँदी और सोना

तरुण पट – नया वस्त्र

पाशवता – पशुता

शील वसन – सदाचार रूपी वस्त्र

निखिल – पूर्ण ।

रामकुमार वर्मा

रामकुमार वर्मा का जन्म सन 1905 में मध्य प्रदेश के सागर ज़िले में हुआ। इनके पिता का नाम लक्ष्मी प्रसाद वर्मा और माता का नाम राजरानी देवी था। इनके पिता डिप्टी कलक्टर थे और माता कवयित्री थीं। रामकुमार वर्मा को बचपन में 'कुमार' नाम से पुकारा जाता था। बचपन से ही ये प्रतिभाशाली थे, अपनी कक्षा में सदैव प्रथम आते थे। पढ़ने-लिखने के अतिरिक्त ये विद्यालय के अन्य क्रिया-कलापों में भी सक्रिय रहते थे। इन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन में अनेक नाटकों में अभिनय किया था। जब ये दसवीं कक्षा के विद्यार्थी थे तो इन्होंने असहयोग आंदोलन में भी भाग लिया था। धीरे-धीरे इन्होंने पुनः अपना अध्ययन आरंभ किया और सफलता की सीढ़ियाँ पार करते हुए इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। तदुपरांत नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी साहित्य के इतिहास पर पीएच. डी. की डिग्री प्राप्त की। अनेक वर्षों तक रामकुमार वर्मा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष रहे। सोवियत सरकार के विशेष आमंत्रण पर मास्को विश्वविद्यालय में भी इन्होंने एक वर्ष तक अध्यापन कार्य किया।

डॉ. रामकुमार वर्मा बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार थे। ये सुप्रसिद्ध एकांकीकार, लोकप्रिय कवि और सशक्त आलोचक थे। **चित्ररेखा** काव्य कृति पर इन्हें देव पुरस्कार मिला था। एकांकी संकलन **सप्त किरण** पर 'अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन पुरस्कार' तथा **विजय पर्व** नाटक पर इन्हें मध्य प्रदेश सरकार द्वारा सम्मानित किया गया था। रामकुमार वर्मा का निधन सन 1990 में हुआ।

अंजलि, अभिशाप, रूपराशि, चित्ररेखा, चंद्रकिरण, संकेत, जौहर *आदि उनकी प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ हैं।*

रामकुमार वर्मा की काव्य कृतियों में काल्पनिकता, संगीतात्मकता तथा रहस्यमय सौंदर्य-दृष्टि पाई जाती है। इनकी रहस्यवादी काव्य कृतियों में प्रकृति और मानवीय हृदय के सूक्ष्म तत्त्वों का संकेत और विवेचन है। प्रकृति के रहस्यों का भी बड़ी सफलता से उद्घाटन हुआ है।

ग्राम देवता *कविता में किसान के अतुलनीय त्याग, परिश्रम और कर्मठता का चित्रण करते हुए उसे शत-शत नमन किया गया है। वह विषम से विषम परिस्थितियों को झेल कर भी स्वयं अभावग्रस्त रहता है और दूसरों को धन-धान्य से परिपूर्ण करता है। किसान सबका पोषक है, इसलिए कवि ने उसे धरती का सच्चा स्वामी बतलाकर महिमामंडित किया है।*

ग्राम-देवता

हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !
सोने-चाँदी से नहीं किंतु
तुमने मिट्टी से किया प्यार।
हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !

जन कोलाहल से दूर
कहीं एकाकी सिमटा-सा निवास,
रवि-शशि का उतना नहीं
कि जितना प्राणों का होता प्रकाश,

श्रम वैभव के बल पर करते हो
जड़ में चेतन का विकास,
दानों-दानों से फूट रहे
सौ-सौ दानों के हरे हास,
यह है न पसीनों की धारा,
यह गंगा की है धवल धार,
हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !

अधखुले अंग जिनमें केवल,
हैं कसे हुए कुछ अस्थि-खंड

जिनमें दधीचि की हड्डी है,
यह वज्र इंद्र का है प्रचंड !
जो है गतिशील सभी ऋतु में
गर्मी-वर्षा हो या कि ठंड
जग को देते हो पुरस्कार
देकर अपने को कठिन दंड !
झोंपड़ी झुकाकर तुम अपनी
ऊँचे करते हो राज - द्वार !
हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !

ये राम-श्याम के सरल रूप,
मटमैले शिशु हँस रहे खूब,
ये मुन्ना, मोहन, हरे कृष्ण,
मंगल, मुरली, बच्चू, बिठूव,
इनको क्या चिंता व्याप सकी,
जैसे धरती की हरी दूब
थोड़े दिन में ही ठंड, झड़ी,
गर्मी सब इनमें गई डूब,
ये ढाल अभी से बने
छीन लेने को दुर्दिन के प्रहार !
हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !

तुम जन-मन के अधिनायक हो
तुम हँसो कि फूले - फले देश
आओ, सिंहासन पर बैठो
यह राज्य तुम्हारा है अशेष !

उर्वरा भूमि के नये खेत के
नये धान्य से सजे वेश,
तुम भू पर रहकर भूमि-भार
धारण करते हो मनुज - शेष,
अपनी कविता से आज तुम्हारी
विमल आरती लूँ उतार !
हे ग्राम-देवता ! नमस्कार !

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. कविता में 'ग्राम-देवता' किसे कहा गया है?
2. कवि ग्राम-देवता को नमस्कार क्यों करता है?
3. जड़ में चेतन का विकास करने का क्या आशय है?
4. किसान-मज़दूर की हड्डियों को इंद्र का वज्र कहने में कवि का क्या संकेत है?
5. कवि की दृष्टि में किसान-मज़दूर जन-मन अधिनायक कैसे हैं?

लिखित

1. किसान-मज़दूर किसके बल पर जड़ में चेतन का विकास करते हैं —
   (क) बुद्धि-चातुर्य
   (ख) श्रम
   (ग) सहनशीलता
   (घ) प्रार्थना।
2. 'इनको क्या चिंता व्याप सकी, जैसे धरती की हरी दूब' पंक्ति की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए।

3. भाव स्पष्ट कीजिए:

(क) रवि-शशि का उतना नहीं, कि जितना प्राणों का होता प्रकाश,

(ख) झोंपड़ी झुकाकर तुम अपनी, ऊँचे करते हो राज-द्वार।

4 'किसान-मज़दूर का पसीना, पसीना नहीं गंगा की धार है।' इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

योग्यता-विस्तार

(क) 'भारतीय किसान और मज़दूर' विषय पर एक निबंध लिखिए।

(ख) सुमित्रानंदन पंत की 'ग्राम श्री' और 'यह धरती कितना देती है' तथा देवराज दिनेश की 'मज़दूर' कविताओं को पढ़िए और प्रस्तुत कविता से उनकी तुलना कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

हास	–	प्रसन्नता
हरे-हास	–	खेती-बाड़ी का आनंद, हरी-भरी फ़सल का आनंद
दधीचि	–	एक ऋषि, पुराणों के अनुसार वृत्रासुर नामक दैत्य के विनाश के लिए दधीचि की हड्डियों से वज्र नाम का अस्त्र बनाया गया था।
इंद्र	–	देवताओं के राजा। इंद्र ने ही दधीचि से हड्डियाँ दान करने की प्रार्थना की थी।
अशेष	–	संपूर्ण
दुर्दिन	–	बुरे दिन।

बालकृष्ण राव

बालकृष्ण राव का जन्म सन 1913 में उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर मे हुआ। सी. बी. राव के नाम से ये अधिक लोकप्रिय रहे हैं। इनके पिता देश प्रसिद्ध उदारवादी नेता सर सी.वाइ. चिंतामणि थे। ये बचपन से ही प्रतिभाशाली छात्र थे। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद सन 1937 में बालकृष्ण राव ने आई.सी.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इन्होंने इस प्रतियोगिता परीक्षा में सारे भारत में प्रथम स्थान प्राप्त किया था। अनेक महत्त्वपूर्ण एवं वरिष्ठ पदों को सँभालने के बाद इन्होंने सन 1954 में आई.सी.एस. से त्यागपत्र देकर राजकीय सेवा से निवृत्ति ले ली थी।

बालकृष्ण राव को बचपन से ही काव्य और साहित्य के प्रति अनुराग और रुचि थी। इनकी पहली कविता तत्कालीन श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिका 'माधुरी' में प्रकाशित हुई। सन 1931 में इनकी लिखी कविताओं का एक संग्रह 'कौमुदी' नाम से प्रकाशित हुआ। वरिष्ठ सरकारी पद पर प्रतिष्ठित होने के कारण इनकी काव्य साधना अंतर्मुखी-सी हो गई थी। इनकी कविताओं का दूसरा संग्रह 'कवि और छवि' सन 1947 में प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह में 'छायावाद' की छाप नज़र आती है। सन 1950-55 तक वे नयी कविता के साथ जुड़ गए थे। हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ निरंतर प्रकाशित होती रहीं। इनकी भाषा सरल, सहज, और हृदय पर स्पष्ट छाप छोड़ने वाली है।

बालकृष्ण राव के साहित्यिक योगदान में 'कवि भारती' का संपादन तथा प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि मिल्टन की काव्य रचना का अनुवाद 'विक्रांत सैम्सन' विशेषरूप से उल्लेखनीय

हो। वे अंग्रेजी साहित्य से संबंधित अनेक विषयों और संदर्भों पर निरंतर लिखते रहे हैं। आकाशवाणी के महानिदेशक पद पर रहकर इन्होंने हिंदी के अनेक साहित्यकारों को आकाशवाणी से जोड़ा और उनका सहयोग प्राप्त किया। यह इनके निजी सौजन्य और सूझ का परिचायक था। सन 1960 में इलाहाबाद से [illegible] पत्रिका प्रकाशित हुई, जिसके वे प्रधान संपादक थे। बालकृष्ण राव हिंदी की साहित्यिक गतिविधियों से अनेक रूपों में संबद्ध रहे। वे 'सुकवि समाज' के मंत्री, हिंदुस्तानी अकादमी के मंत्री, हिंदी साहित्य संघ, लखनऊ के अध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा के अध्यक्ष, हिंदी साहित्य सम्मेलन के शासी निकाय के सदस्य, तथा साहित्यिक पत्रिका 'माध्यम' के संपादक रहे। सन 1970-72 में वे गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर भी रहे। इनका व्यक्तित्व बहुमुखी था। सन 1975 में इनका देहावसान हुआ।

कौमुदी, आभास, कवि और छवि, रातबीती, हमारी राह, विक्रांत सैम्सन आदि इनकी प्रसिद्ध काव्य-कृतियाँ हैं।

बालकृष्ण राव ने **सावधान जन-नायक** कविता में जन-नायक से अपने प्रशंसकों की झूठी प्रशंसा से बचने का आग्रह किया है, क्योंकि इसमें उसके मनुष्य न रहकर जड़ और पत्थर की मूर्ति बनने का खतरा विद्यमान है।

सावधान, जन-नायक

सावधान, जन-नायक सावधान !
यह स्तुति का साँप तुम्हें डस न ले।

बचो इन बढ़ी हुई बाँहों से
धृतराष्ट्र मोह- पाश
कहीं तुम्हें कस न ले।

सुनते हैं कभी, किसी युग में
पाते ही राम का चरण-स्पर्श
शिला प्राणवती हुई।

देखते हैं किंतु आज
अपने उपास्य के चरणों को छू-छूकर
भक्त उन्हें पत्थर की मूर्ति बना देते हैं।

सावधान, भक्तों की टोली आ रही है
पूजा - द्रव्य लिए !
बचो अर्चना से, फूलमाला से,
अंधी अनुशंसा की हाला से,
बचो वंदना की वंचना से, आत्म रति से,
बचो आत्मपोषण से, आत्मा की क्षति से।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. जननेता को किससे सावधान रहने को कहा गया है? और क्यों?
2. 'स्तुति का साँप' किसे कहा गया है?
3. कविता में धृतराष्ट्र और अहल्या के संदर्भ क्यों दिए गए हैं?

लिखित

1. राम और अहल्या के प्रसंग आज के नेता और उसके चाटुकारों के प्रसंग से किस प्रकार भिन्न हैं।
2 'वंदना की वंचना', 'आत्मपोषण' और 'अंधी अनुशंसा' कथनों से कवि का क्या आशय है?
3. भाव स्पष्ट कीजिए :
   (क) अपने उपास्य के चरणों को छू-छूकर
   भक्त उन्हें पत्थर की मूर्ति बना देते हैं।
   (ख) बचो वंदना की वंचना से, आत्म रति से,
   बचो आत्मपोषण से, आत्मा की क्षति से।

योग्यता-विस्तार

'आज के युग में सफलता पाने के लिए चाटुकारिता आवश्यक गुण है।' इस विषय पर वाद-विवाद आयोजित कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

मोहपाश – मोह का बंधन
उपास्य – उपासना के योग्य
पूजा द्रव्य – पूजा के लिए सामग्री
अनुशंसा – प्रशंसा
आत्मरति – अपने आपको प्यार करना

वंदना की वंचना	–	वंदना के माध्यम से किसी को छलना या धोखा देना
अंधी अनुशंसा की हाला	–	गुण -अवगुण, योग्यता-अयोग्यता समझे बिना की गई प्रशंसा का नशा
हाला	–	शराब
पोषण	–	देखभाल, पालन
क्षति	–	हानि
धृतराष्ट्र मोह-पाश	–	धृतराष्ट्र हस्तिनापुर का राजा था। अपने दुराचारी पुत्र दुर्योधन के प्रति मोह के कारण वह उसके प्रतिद्वंद्वी भीम को आलिंगन करने के बहाने बाँहों में कसकर चूर-चूर कर देना चाहता था। इसे भाँपकर कृष्ण ने लोहे की मूर्ति का आलिंगन करवाया। अंधे धृतराष्ट्र ने उसे भीम समझकर उसका आलिंगन किया और मूर्ति चूर-चूर हो गई।
पाते ही राम का चरण स्पर्श शिला प्राणवती हुई	–	शाप के कारण अहल्या पत्थर बन गई थी। राम के चरणों का स्पर्श पाकर वह पुनः जीवित हो गई।

भवानी प्रसाद मिश्र

भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म सन 1914 में मध्य प्रदेश में होशंगाबाद के टिमरिया ग्राम में हुआ। सन 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार ने उन्हें तीन वर्ष के लिए कारावास का दंड दिया। इस कारावास का सदुपयोग उन्होंने स्वाध्याय में किया और अंग्रेज़ी के कवि वर्डसवर्थ तथा ब्राउनिंग की रचनाओं का विशेष अध्ययन किया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओं से भी वे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने राष्ट्रभाषा प्रचार समिति में कार्य किया और सन 1952-55 तक हैदराबाद से प्रकाशित हिन्दी की लोकप्रिय साहित्यिक पत्रिका 'कल्पना' का संपादन किया। सन 1955-58 के बीच आकाशवाणी के हिंदी कार्यक्रमों से संबद्ध रहे। उन्होंने संपूर्ण गांधी वाङ्मय का संपादन किया और वे गांधी स्मारक निधि से संबद्ध रहे। श्री मिश्र का निधन सन 1985 में हुआ।

मिश्र जी की कविताओं में ऐसी सहजता, सादगी और ताज़गी है, जो पाठकों का हृदय छू लेती है और उन्हें समरस बना देती है। उनके काव्य में बोलचाल का लहज़ा, नाटकीय उतार-चढ़ाव और भाषा का ऐसा प्रवाह है, जो उनकी रचनाओं को सहज संवेद्य बना देता है। उनकी निम्नलिखित पंक्तियों से उनके काव्यादर्श का आभास मिलता है :

जिस तरह हम बोलते हैं, उस तरह तू लिख,
और उसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख।

*मुख्य रचनाएँ— **गीत-फ़रोश, खुशबू के शिलालेख, चकित है दुख, अँधेरी कविताएँ, बुनी हुई रस्सी, कवितांतर, शतदल, गांधी-पंचशती, त्रिकाल-संध्या** आदि। **बुनी हुई रस्सी** पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है।*

*1942 के स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में कारावास में जीवन बिताते हुए मिश्र जी ने एक कविता लिखी थी— **घर की याद**। प्रस्तुत कविता **पिता** उसी का एक अंश है जिसमें पिता के भीतरी और बाहरी व्यक्तित्व का सुंदर चित्रण है। कवि सावन द्वारा पिता को संदेश भेज रहा है और आग्रह करता है कि वह पिता को उसके कष्टों के बारे में न बताए। उन्हें सांत्वना दे और ऐसा करे कि वे अपने इस पाँचवे बेटे के लिए तरसने न पाएँ।*

पिता

आज पानी गिर रहा है,
घर नज़र में तिर रहा है,
पिताजी भोले बहादुर,
वज्र - भुज, नवनीत-सा उर।

पिताजी जिनको बुढ़ापा,
एक क्षण भी नहीं व्यापा,
जो अभी भी दौड़ जाएँ,
जो अभी भी खिलखिलाएँ,

मौत के आगे न हिचकें,
शेर के आगे न बिचकें,
बोल में बादल गरजता,
काम में झंझा लरजता।

आज गीता पाठ करके,
दंड दो सौ साठ करके,
जब कि नीचे आए होंगे,
नैन जल से छाए होंगे।

पिताजी का वेश मुझको,
दे रहा है क्लेश मुझको,
देह एक पहाड़ जैसे,
मन कि बड़ का झाड़ जैसे,

एक पत्ता टूट जाए,
बस कि धारा फूट जाए,
एक हलकी चोट लग ले,
दूध की नदी उमग ले,

एक टहनी कम न हो ले
कम कहाँ, कि खम न हो ले
ध्यान कितना, फ़िक्र कितनी,
डाल जितनी जड़ें उतनी।

इस तरह का हाल उनका,
इस तरह का ख्याल उनका,
हवा, उनको धीर देना,
यह नहीं जी चीर देना,

हे सजीले हरे सावन,
हे कि मेरे पुण्य पावन,
तुम बरस लो, वे न बरसें,
पाँचवें को वे न तरसें।

मैं मजे में हूँ सही है,
घर नहीं हूँ बस यही है,
किंतु यह बस बड़ा बस है,
इसी बस से सब विरस है,

किंतु उनसे यह न कहना,
उन्हें देते धीर रहना,
उन्हें कहना लिख रहा हूँ,
उन्हें कहना पढ़ रहा हूँ,

कूदता हूँ, खेलता हूँ,
दुःख डट कर ठेलता हूँ,
और कहना मस्त हूँ मैं,
यों न कहना अस्त हूँ मैं,

कह न देना मौन हूँ मैं,
खुद न समझूँ कौन हूँ मैं,
देखना, कुछ बक न देना,
उन्हें कोई शक न देना,

हे सजीले हरे सावन,
हे कि मेरे पुण्य पावन,
तुम बरस लो, वे न बरसें,
पाँचवें को वे न तरसें।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. पिता की याद आने का तात्कालिक कारण क्या है?
2. उम्र बड़ी होने पर भी पिता को बुढ़ापा छू तक नहीं गया है— कवि ने इसके क्या प्रमाण दिए हैं?
3. कवि ने पिता के मन की तुलना किससे की है?
4. 'तुम बरस लो वे न बरसें' कथन का क्या आशय है?
5. कवि अपनी वास्तविक स्थिति को पिता से क्यों छिपाना चाहता है?

लिखित

1. पिता के मन की तुलना बरगद से करने का कारण स्पष्ट कीजिए।
2. कवि सावन से अपने बारे में क्या-क्या बताने का अनुरोध करता है?
3. 'देखना, कुछ बक न देना' के स्थान पर 'देखना कुछ कह न देना' कहा जाता तो कविता के सौंदर्य में क्या अंतर आ जाता?
4. कविता के आधार पर कवि के पिता के व्यक्तित्व का शब्दचित्र खींचिए।

योग्यता-विस्तार

महाकवि कालिदास के 'मेघदूत ' का हिंदी अनुवाद और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के 'प्रियप्रवास' का पवन दूती प्रसंग पढ़िए और भेजे गए संदेशों की तुलना प्रस्तुत कविता से कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

तिरना — तैरना
वज्रभुज — बलिष्ठ भुजाओं वाले, शक्तिशाली
नवनीत-सा — मक्खन-सा कोमल
बड़ का झाड़ — बरगद का वृक्ष
खम — टेढ़ापन
विरस — नीरस, बेस्वाद

नागार्जुन

नागार्जुन का जन्म दरभंगा (बिहार) के सतलखा गाँव में सन 1911 में हुआ। उनका पूरा नाम वैद्यनाथ मिश्र था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय संस्कृत पाठशाला में हुई। सन 1936 में वे श्रीलंका गए और वहाँ उन्होंने बौद्ध धर्म में दीक्षा ली। सन 1938 में वे स्वदेश लौट आए।

नागार्जुन ने संपूर्ण भारत का कई बार भ्रमण किया। उनके व्यक्तित्व में घुमक्कड़ी और अक्खड़पन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वे एक स्थान पर टिककर काम नहीं कर पाए। नागार्जुन ने मैथिली और हिंदी दोनों भाषाओं में रचनाएँ कीं। वे अपनी मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से लिखते थे। बांग्ला और संस्कृत में भी उन्होंने कविताएँ लिखी हैं। उन्होंने सन 1935 में **दीपक** *(हिन्दी मासिक) और 1942-43 में* **विश्वबंधु** *(हिन्दी साप्ताहिक) का संपादन किया। नागार्जुन राजनीतिक गतिविधियों से भी जुड़े रहे और इस सिलसिले में उन्हें कई बार जेल-यात्रा भी करनी पड़ी। साहित्य-सेवा के लिए उन्हें कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।*

नागार्जुन साहित्य और राजनीति दोनों में समान रूप से रुचि रखने-वाले प्रगतिशील साहित्यकार थे। वे धरती, जनता और श्रम के गीत गाने वाले संवेदनशील कवि थे। कबीर की-सी सहजता उनके काव्य की विशेषता है। उनकी भाषा में ऊबड़-खाबड़पन और चट्टान की-सी मज़बूती है। सामयिक बोध उनकी कविता का प्रधान स्वर है। उनकी रचनाओं में तीखा व्यंग्य पाया जाता है। उनकी रचनाओं का जनता से जीवंत संपर्क है। उन्होंने कई

आंदोलन धर्मी कविताएँ भी लिखी हैं जिन्हें 'पोस्टर कविता' कहा जाता है। वे अच्छे उपन्यासकार भी थे। सन 1998 में उनका देहांत हो गया।

*मुख्य रचनाएँ– **युगधारा, प्यासी पथराई आँखें, सतरंगे पंखों वाली, तालाब की मछलियाँ, हज़ार-हज़ार बाँहों वाली, तुमने कहा था, पुरानी जूतियों का कोरस, ऐसा क्या कह दिया मैंने, रत्नगर्भा, ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या, भस्मांकुर** (खंड काव्य)।*

***फ़सल** कविता में संकेत है कि नदियों के पानी, लाखों किसानों के श्रम, मिट्टी के गुण-धर्म, सूरज की किरणों और हवा की थिरकन से ही फ़सल तैयार होती है।*

***उनको प्रणाम** कविता में कवि सफल महापुरुषों, वीरों को नहीं, बल्कि उन्हें प्रणाम करता है जिन्होंने संघर्ष किया, जो साधन चुक जाने पर भी डटे रहे, जो देश के लिए फाँसी के फंदे से झूल गए और जो प्रचार और विज्ञापनों से दूर एकाकी जीवन जीते रहे।*

(क) फ़सल

एक के नहीं
दो के नहीं
ढेर सारी नदियों के पानी का जादू:
एक के नहीं
दो के नहीं
लाख-लाख कोटि-कोटि हाथों-हाथों के स्पर्श की गरिमा:
एक के नहीं
दो के नहीं
हज़ार-हज़ार खेतों की मिट्टी का गुण-धर्म :

फ़सल क्या है?

और तो कुछ नहीं है वह
नदियों के पानी का जादू है
हाथों के स्पर्श की महिमा है
भूरी-काली-संदली मिट्टी का गुण-धर्म है
रूपांतर है सूरज की किरणों का
सिमटा हुआ संकोच है हवा की थिरकन का !

(ख) उनको प्रणाम !

जो नहीं हो सके पूर्ण-काम
मैं उनको करता हूँ प्रणाम !

कुछ कुंठित औ कुछ लक्ष्य-भ्रष्ट
जिनके अभिमंत्रित तीर हुए ;
रण की समाप्ति के पहले ही
जो वीर रिक्त तूणीर हुए !
— उनको प्रणाम !

जो छोटी-सी नैया लेकर
उतरे करने को उदधि-पार;
मन की मन में ही रही, स्वयं
हो गए उसी में निराकार !
— उनको प्रणाम !

जो उच्च शिखर की ओर बढ़े
रह-रह नव-नव उत्साह भरे;
पर कुछ ने ले ली हिम-समाधि
कुछ असफल ही नीचे उतरे !
—उनको प्रणाम !

एकाकी और अकिंचन से,
जो भू- परिक्रमा को निकले;
हो गए पंगु, प्रति-पद जिनके
इतने अदृष्ट के दाँव चले !
— उनको प्रणाम !

कृतकृत्य नहीं जो हो पाए,
प्रत्युत फाँसी पर गए झूल;
कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी
यह दुनिया जिनको गई भूल !
— उनको प्रणाम !

थी उग्र साधना, पर जिनका
जीवन नाटक दुखांत हुआ;
था जन्म-काल में सिंह लग्न
पर कुसमय ही देहांत हुआ !
— उनको प्रणाम !

दृढ़ व्रत औ दुर्दम साहस के
जो उदाहरण थे मूर्तिमंत;
पर निरवधि बंदी जीवन ने
जिनकी धुन का कर दिया अंत !
— उनको प्रणाम !

जिनकी सेवाएँ अतुलनीय,
पर विज्ञापन से रहे दूर;
प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके
कर दिए मनोरथ चूर-चूर !
— उनको प्रणाम !

प्रश्न-अभ्यास

(क) फ़सल

मौखिक

1. फ़सल को नदियों के पानी का जादू क्यों कहा गया है ?
2. फ़सल मिट्टी का गुण-धर्म कैसे है ?
3. हवा के चलने से फ़सल लाज से सिमटी प्रतीत होती है– यह भाव किस पंक्ति में व्यक्त हुआ है ?
4. फ़सल के तैयार होने में किन-किन का योगदान है ?

लिखित

1. कवि ने फ़सल को किन-किन के हाथों की महिमा-गरिमा कहा है और क्यों ?
2. फ़सल को सूरज की किरणों का रूपांतरण क्यों कहा गया है ?
3. भाव स्पष्ट कीजिए :
   रूपांतर है सूरज की किरणों का –
   सिमटा हुआ संकोच है हवा की थिरकन का !

योग्यता-विस्तार

केदारनाथ अग्रवाल की कविता 'बसंती हवा' पढ़िए और उन पंक्तियों को चुनिए जिनका भाव इस कविता के भाव से मिलता हो ।

(ख) उनको प्रणाम

मौखिक

1. युद्धक्षेत्र में संघर्ष करते हुए जो साधनों के अभाव में विजय से पूर्व ही मारे गए, कवि उनको प्रणाम करता है, क्यों ?
2. कवि उनको प्रणाम क्यों करता है जो सागर पार करने के प्रयत्न में उसी में डूब गए ?
3. उन पंक्तियों को बताओ जिनमें कवि ने देश के शहीदों को प्रणाम किया है ?
4. ऊँचे शिखरों पर चढ़ने में असफल लोगों को कवि क्यों प्रणाम करता है ?

लिखित

1. प्रायः सफल व्यक्तियों को ही प्रणाम किया जाता है परंतु कवि ने इस कविता में असफल व्यक्तियों को ही प्रणाम किया है, क्यों ?

2. भाव स्पष्ट कीजिए :

(क) एकाकी और अकिंचन से, जो भू-परिक्रमा को निकले,
हो गए पंगु, प्रति-पद जिनके, इतने अदृष्ट के दाँव चले !

(ख) दृढ़ व्रत औ दुर्दम साहस के, जो उदाहरण थे मूर्तिमंत,
पर निरवधि बंदी जीवन ने, जिनकी धुन का कर दिया अंत !

योग्यता-विस्तार

कुछ ऐसे व्यक्तियों के नाम बताइए–

(क) जो उच्च शिखर की ओर बढ़े, किंतु असफल रहे ।

(ख) जो देश के हित के लिए फाँसी पर झूल गए ।

(ग) जो दृढ़व्रत और दुर्दम साहस की प्रतिमूर्ति थे ।

(घ) जो उग्र साधना में लीन रहे और असमय ही मृत्यु को प्राप्त हुए ।

(ङ) जो राष्ट्र और समाज के सेवक थे, किंतु प्रचार से दूर रहे ।

शब्दार्थ और टिप्पणी

(क) फ़सल

गुणधर्म – विशेषता, लक्षण

संदली – चंदन के समान रंग वाली, चंदनवर्णी

(ख) उनको प्रणाम

पूर्णकाम – सफल, जिनकी कामनाएँ पूर्ण हो गई हों

कुंठित – अधूरी या दबी इच्छाओं से उत्पन्न मन की स्थिति

अभिमंत्रित – मंत्रों द्वारा पवित्र किया हुआ

रिक्त तूणीर – खाली तरकश

निरवधि बंदी जीवन – जिनके बंदी जीवन की कोई अवधि न थी

सिंह लग्न – ज्योतिष के अनुसार सिंह लग्न में जन्म लेने वाला स्वस्थ, वीर और दीर्घायु होता है

हिम-समाधि लेना – बरफ़ में दबकर मर जाना

अकिंचन – दरिद्र, साधनहीन

कृतकृत्य होना – अपना कार्य पूरा कर चुकने की भावना, सफल मनोरथ होना।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

'अज्ञेय' जी का वास्तविक नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन है। उनका जन्म कुशीनगर (उत्तर प्रदेश) में सन 1911 में हुआ। 'अज्ञेय' का बचपन लखनऊ, श्रीनगर और जम्मू में व्यतीत हुआ। प्रारंभ में वे विज्ञान के विद्यार्थी थे, किंतु बाद में साहित्य में रुचि होने के कारण अंग्रेज़ी विषय में एम.ए. की पढ़ाई करते समय क्रांतिकारी आंदोलन के सिलसिले में फ़रार हुए और उन्हें सन 1930 के अंत में पकड़ लिया गया। वे चार वर्ष जेल में और दो वर्ष नज़रबंद रहे।

उन्होंने अपने जीवन में अनेक नौकरियाँ कीं, जिनमें फौज की सेवा भी शामिल है। 'अज्ञेय' जी ने देश-विदेश की अनेक यात्राएँ कीं। 'सैनिक' में पत्रकार के रूप में उन्होंने कार्य किया। 'विशाल भारत', 'प्रतीक', 'दिनमान', 'नवभारत टाइम्स' तथा 'नया प्रतीक' का संपादन किया।

उनकी प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत, अंग्रेज़ी और हिंदी में हुई। इसीलिए वे संस्कृतनिष्ठ परंपरा में पले पाश्चात्य संस्कारों के अभिजातवर्गीय कवि माने जाते हैं। उनकी काव्य-वस्तु में ही नहीं, बल्कि उनके काव्य-शिल्प में भी सुरुचि और शालीनता प्रकट होती है। उनका काव्य और उनका व्यक्तित्व बहुत ही व्यवस्थित रहा है। वे हिंदी के प्रबुद्ध कवि थे। अज्ञेय का देहावसान सन 1987 में हुआ।

उनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं— ***भग्नदूत, चिंता, इत्यलम, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, इंद्रधनु रौंदे हुए, अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार,***

सागर मुद्रा, तार सप्तक, दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक *और* ***चौथा सप्तक*** *आदि। इनके अतिरिक्त अज्ञेय ने अनेक उपन्यास, कहानियाँ, ललित निबंध, यात्रा-विवरण आदि भी लिखे हैं जिनमें प्रमुख हैं*—***आत्मनेपद, विपथगा, नदी के द्वीप, शेखर : एक जीवनी, अरे यायावर याद रहेगा, एक बूँद सहसा उछली*** *आदि।*

अज्ञेय हिंदी में प्रयोगवाद और नयी कविता के प्रवर्तक माने जाते हैं। उनकी प्रारंभिक रचनाओं में वैयक्तिकता के स्वर की प्रधानता है और उनमें छायावादी आवेग की झलक भी मिलती है, किंतु धीरे-धीरे कवि वैयक्तिकता के घेरे को तोड़ता चलता है और यथार्थवादी भाव-बोध तथा निर्वैयक्तिकता को अपनी कविता का आदर्श बनाता है। अज्ञेय जीवन के विविध अनुभवों के धनी हैं, अतः उनकी रचनाओं में लौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति से लेकर प्रकृति के विविध रूपों के चित्रण के साथ बौद्ध दर्शन, महाशून्यवाद तक की अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने शब्दों को माँजकर उनमें सटीक अर्थ भरने का प्रयास किया है। निष्कर्षतः अज्ञेय उन साहित्य निर्माताओं में से हैं, जिन्होंने आधुनिक हिंदी साहित्य को एक नई दिशा दी, एक नया मान दिया।

मेरे देश की आँखें *कविता में कवि ग्रामीण और वनांचल के नैसर्गिक सौंदर्य को ही भारतीय सौंदर्य का प्रतिमान मानता है। तनाव, घृणा जैसे भावों को छिपाने के लिए प्रसाधन सामग्री से सजी आँखों को नहीं।*

मेरे देश की आँखें

नहीं, ये मेरे देश की आँखें नहीं हैं
पुते गालों के ऊपर
नकली भवों के नीचे
छाया प्यार के छलावे बिछाती
मुकुर से उठाई हुई
मुसकान मुसकराती
ये आँखें —
नहीं, ये मेरे देश की नहीं हैं..........

तनाव से झुर्रियाँ पड़ी कोरों की दरार से
शरारे छोड़ती घृणा से सिकुड़ी पुतलियाँ—
नहीं, वे मेरे देश की आँखें नहीं हैं .....

वन डालियों के बीच से
चौंकी अनपहचानी
कभी झाँकती हैं वे आँखें,
मेरे देश की आँखें,
खेतों के पार

मेड़ की लीक धारे
क्षिति-रेखा को खोजती
सूनी कभी ताकती हैं
वे आँखें ....

उसने
झुकी कमर सीधी की
माथे से पसीना पोंछा
डलिया हाथ से छोड़ी
और उड़ी धूल के बादल के

बीच में से झलमलाते
जाड़ों की अमावस में से
मैले चाँद-चेहरे सकुचाते
में टँकी थकी पलकें
उठाई –
और कितने काल-सागरों के पार तैर आई
मेरे देश की आँखें ....

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. 'मुकुर से उठाई हुई मुसकान' का क्या आशय है?
2. घृणा और तनाव से भरी आँखों को कवि अपने देश की आँखें क्यों नहीं मानता?
3. तरुशाखाओं के बीच झाँकती अनपहचानी-सी आँखें किसकी हैं?

4. 'क्षिति-रेखा' खोजती आँखों को 'सूनी' कहना क्या सूचित करता है?
5. कवि के अनुसार देश की आँखों की वास्तविक पहचान क्या है?

लिखित

1. कवि ने कैसी आँखों को अपने देश की आँखें नहीं माना है?
2. ग्रामीण या वनांचलों से झाँकती आँखों को 'चौंकी', 'अनपहचानी' क्यों कहा है?
3. युवतियों के कृत्रिम सौंदर्य का चित्रण कविता के आधार पर कीजिए।
4. कौन-सा कथन 'मेरे देश की आँखों' की विशेषता बताता है?
   - क. शरारे छोड़ती
   - ख. मुसकान बिखेरती
   - ग. क्षिति-रेखा को खोजती
   - घ. घृणा से सिकुड़ी

योग्यता-विस्तार

प्रसाधन-सामग्री से सज्जित सौंदर्य की अपेक्षा नैसर्गिक सौंदर्य कहीं अधिक मोहक होता है– इस विषय पर परिचर्चा कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

छलावा – भ्रम
मुकुर – दर्पण
शरारे – चिंगारियाँ
क्षिति-रेखा – क्षितिज।

केदारनाथ सिंह

केदारनाथ सिंह का जन्म सन 1934 में बलिया ज़िले के चकिया गाँव में हुआ। काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. करने के बाद उन्होंने वहीं से 1964 में 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान' विषय पर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। संप्रति वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में भारतीय भाषा केन्द्र में हिंदी के प्रोफ़ेसर के पद से अवकाश प्राप्त कर चुके हैं।

केदारनाथ सिंह मूलतः मानवीय संवेदनाओं के कवि हैं। अपनी कविताओं में उन्होंने बिंब-विधान पर अधिक बल दिया है। 'तीसरा सप्तक' के अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा है, "प्रकृति बहुत शुरू से मेरे भावों का आलंबन रही है। कछार, मक्का के खेत और दूर-दूर तक फैली पगडंडियों की छाप आज भी मेरे मन पर उतनी ही स्पष्ट है– समाज के प्रगतिशील तत्त्वों और मानव के उच्चतर मूल्यों की परख मेरी रचनाओं में आ सकी है या नहीं, मैं नहीं जानता पर उनके प्रति मेरे भीतर एक विश्वास, एक लालसा, एक लपट ज़रूर है जिसे मैं हर प्रतिकूल झोंके से बचाने की कोशिश करता हूँ, करता रहूँगा।"

केदारनाथ सिंह की कविताओं में शोर-शराबा न होकर, विद्रोह का शांत और संयत स्वर सशक्त रूप से उभरता है। संवेदना और विचारबोध उनकी कविताओं में साथ-साथ चलते हैं। जीवन के बिना प्रकृति और वस्तुएँ कुछ भी नहीं हैं– यह अहसास उन्हें अपनी कविताओं में आदमी के और समीप ले आया है। उनकी कविताओं में दैनिक जीवन के अनुभव परिचित बिंबों में बदलते दिखाई देते हैं। शिल्प में बातचीत की सहजता और अपनापन अनायास ही दृष्टिगोचर होता है। ***अकाल में सारस*** *कविता संग्रह पर उनको सन*

1989 में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया। सन 1994 में मध्य प्रदेश शासन की ओर से मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय सम्मान दिया गया । उन्हें अन्य कई सम्मानों से भी सम्मानित किया गया है।

अब तक केदारनाथ सिंह के छह काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं : ***अभी बिल्कुल अभी, जमीन पक रही है, यहाँ से देखो, अकाल में सारस, उत्तर कबीर तथा अन्य कविताएँ,*** *और* ***बाघ****।* ***कल्पना और छायावाद*** *उनकी आलोचनात्मक पुस्तक और* ***मेरे समय के शब्द*** *निबंध संग्रह है। हाल ही में उनकी चुनी हुई कविताओं का संग्रह* ***प्रतिनिधि कविताएँ*** *नाम से प्रकाशित हुआ है।*

अकाल में दूब *कविता में अकाल के विभिन्न दृश्यों के माध्यम से हताशा के बीच दूब के प्रतीक के ज़रिये आशावाद को अभिव्यंजित किया गया है। धरती में अपनी गहरी जड़ों के कारण जिस तरह दूब नहीं मरती, ठीक उसी तरह मनुष्य भी अपनी इच्छाशक्ति से एक न एक दिन संकट से उबर जाता है। धैर्य, साहस और विनम्रता इन तीन गुणों से मानव ने विपरीत स्थितियों में सदैव सफलता पाई है।*

अकाल में दूब

भयानक सूखा है
पक्षी छोड़कर चले गए हैं
पेड़ों को
बिलों को छोड़कर चले गए हैं चींटे
चींटियाँ
देहरी और चौखट
पता नहीं कहाँ-किधर चले गए हैं
घरों को छोड़कर

भयानक सूखा है
मवेशी खड़े हैं
एक-दूसरे का मुँह ताकते हुए

कहते हैं पिता
ऐसा अकाल कभी नहीं देखा
ऐसा अकाल कि बस्ती में
दूब तक झुलस जाए
सुना नहीं कभी

दूब मगर मरती नहीं —
कहते हैं वे
और हो जाते हैं चुप

निकलता हूँ मैं
दूब की तलाश में
खोजता हूँ परती-पराठ
झाँकता हूँ कुँओं में
छान डालता हूँ गली-चौराहे
मिलती नहीं दूब

मुझे मिलते हैं मुँहबाए घड़े
बाल्टियाँ लोटे परात
झाँकता हूँ घड़ों में
लोगों की आँखों की कटोरियों में
झाँकता हूँ मैं
मिलती नहीं
मिलती नहीं दूब

अंत में
सारी बस्ती छानकर
लौटता हूँ निराश
लाँघता हूँ कुँए के पास की
सूखी नाली
कि अचानक मुझे दिख जाती है
शीशे के बिखरे हुए टुकड़ों के बीच

एक हरी पत्ती
दूब है
हाँ-हाँ दूब है—
पहचानता हूँ मैं

लौटकर यह खबर
देता हूँ पिता को
अँधेरे में भी
दमक उठता है उनका चेहरा
'है— अभी बहुत कुछ है
अगर बची है दूब...'
बुदबुदाते हैं वे

फिर गहरे विचार में
खो जाते हैं पिता।

प्रश्न-अभ्यास

मौखिक

1. चींटियाँ और पक्षी अपने घरों को छोड़कर क्यों चले गए?
2. इस अकाल में ऐसी क्या बात थी कि पिता को कहना पड़ा— ऐसा अकाल कभी नहीं देखा?
3. कविता में दूब का उल्लेख बार-बार क्यों हुआ है?
4. कविता के किस अंश से ज्ञात होता है कि कठिन और विकट परिस्थितियों में भी जीवन बचा रह सकता है?

लिखित

1. अकाल की भयावहता का जो चित्र कवि ने प्रस्तुत किया है उसे अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।
2. शीशे के टुकड़े किन परिस्थितियों के द्योतक हैं?
3. निराशा के अंधकार में भी पिता का चेहरा क्यों दमकता है?
4. भाव सौंदर्य स्पष्ट कीजिए :

   (क) मुझे मिलते हैं मुँहबाए घड़े
   बाल्टियाँ लोटे परात
   झाँकता हूँ घड़ों में
   लोगों की आँखों की कटोरियों में

   (ख) 'है – अभी बहुत कुछ है
   अगर बची है दूब–'

योग्यता-विस्तार

'जीने की उत्कट इच्छा के सामने सभी कठिनाइयाँ छूमंतर हो जाती हैं।' इस विषय पर कक्षा में परिचर्चा कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

देहरी – दरवाज़े की चौखट का फ़र्श से लगा भाग, दहलीज़
परती-पराठ – सूखी बंजर और पथरीली भूमि
मुँहबाए – मुँह खोले हुए।

दुष्यंत कुमार

दुष्यंत कुमार का जन्म ज़िला बिजनौर (उ.प्र.) के राजपुर नवादा नामक ग्राम के एक कृषक परिवार में सन 1933 में हुआ था। उनके बचपन का नाम दुष्यंत नारायण था।

दुष्यंत कुमार ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. किया। उनके साहित्यिक जीवन का आरंभ इलाहाबाद से ही हुआ। उन्होंने 'परिमल' की गोष्ठियों में सक्रिय रूप से भाग लिया और 'नए पत्ते' जैसे महत्त्वपूर्ण पत्र से जुड़े रहे। दुष्यंत कुमार ने अपनी आजीविका के लिए आकाशवाणी में नौकरी की और देश के अनेक आकाशवाणी केंद्रों पर हिंदी कार्यक्रमों को सँभालने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। बाद में सहायक निदेशक के रूप में मध्य प्रदेश के भाषा विभाग से जुड़ गए। केवल तैंतालीस वर्ष की अल्पायु में सन 1975 में उनका देहावसान हो गया।

दुष्यंत कुमार का लेखन सहज और स्वाभाविक था, जिससे उन्हें लोकप्रियता प्राप्त हुई। हिंदी कविता में गीत और गज़ल लिखने में दुष्यंत कुमार का कोई सानी नहीं था। उन्होंने कविता के क्षेत्र में कई नए प्रयोग किए। किंतु उनकी विशिष्ट देन है, हिंदी गज़ल। अपनी गज़लों के बारे में उन्होंने लिखा है, 'मैं स्वीकार करता हूँ कि गज़ल को किसी भूमिका की जरूरत नहीं होती ..... मैं प्रतिबद्ध कवि हूँ .... यह प्रतिबद्धता किसी पार्टी से नहीं, आज के मनुष्य से है और मैं जिस आदमी के लिए लिखता हूँ, यह भी चाहता हूँ कि वह आदमी उसे पढ़े और समझे।'

*दुष्यंत कुमार मूलतः कवि थे किंतु उन्होंने उपन्यास और नाटक विधा में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। '**एक कंठ विषपायी**' दुष्यंत कुमार का एक महत्त्वपूर्ण गीति-नाट्य है।*

*मुख्य काव्य रचनाएँ-- **सूर्य का स्वागत, आवाज़ों के घेरे, साये में धूप, जलते हुए वन का वसंत** आदि।*

*उपन्यास– **छोटे-छोटे सवाल, आंगन में एक वृक्ष, दोहरी ज़िंदगी।***

गज़ल हिंदी कविता की नई विधा है। गज़ल का शेर तुक-तान में एक ही गज़ल का अंश होते हुए भी अपने आप में एक स्वतंत्र इकाई होता है। फिर भी पूरी गज़ल में एक संदेश होता है। दुष्यंत कुमार की इन दोनों गज़लों में वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया गया है। मनुष्य में अगर कुछ करने और समाज में बदलाव लाने की भावना हो तो वह अकेले भी बहुत कुछ कर सकता है। इस तरह वह बेहतर जीवन के लिए दूसरों को भी प्रेरणा दे सकता है। मनुष्य को सामाजिक बाधाओं से कभी हताश नहीं होना चाहिए। जीवन के यथार्थ को समझकर जो लोग बिना घबराए आगे बढ़ते हैं, वे ही सफल होते हैं। कवि कल्पनाओं में जीने की अपेक्षा सच्चाई का सामना करने का परामर्श देता है।

(क) मेरे गीत तुम्हारे पास

मेरे गीत तुम्हारे पास सहारा पाने आएँगे,
मेरे बाद तुम्हें ये मेरी याद दिलाने आएँगे।

थोड़ी आँच बची रहने दो, थोड़ा धुआँ निकलने दो,
कल देखोगी कई मुसाफ़िर इसी बहाने आएँगे।

उनको क्या मालूम विरूपित इस सिकता पर क्या बीती,
वे आये तो यहाँ शंख सीपियाँ उठाने आएँगे।

रह-रह आँखों में चुभती है पथ की निर्जन दोपहरी,
आगे और बढ़े तो शायद दृश्य सुहाने आएँगे।

मेले में भटके होते तो कोई घर पहुँचा जाता,
हम घर में भटके हैं, कैसे ठौर-ठिकाने आएँगे।

हम क्या बोलें इस आँधी में कई घरौंदे टूट गए,
इन असफल निर्मितियों के शव कल पहचाने जाएँगे।

(ख) दीवारें न देख

आज सड़कों पर लिखे हैं सैकड़ों नारे न देख,
घर अँधेरा देख तू, आकाश के तारे न देख।

एक दरिया है यहाँ पर दूर तक फैला हुआ,
आज अपने बाज़ुओं को देख, पतवारें न देख।

अब यकीनन ठोस है धरती हकीकत की तरह,
यह हकीकत देख, लेकिन खौफ़ के मारे न देख।

वे सहारे भी नहीं अब, जंग लड़नी है तुझे,
कट चुके जो हाथ, उन हाथों में तलवारें न देख।

दिल को बहला ले, इजाज़त है, मगर इतना न उड़,
रोज़ सपने देख, लेकिन इस कदर प्यारे न देख।

ये धुँधलका है नज़र का, तू महज़ मायूस है,
रोज़नों को देख, दीवारों में दीवारें न देख।

राख, कितनी राख है, चारों तरफ़ बिखरी हुई,
राख में चिनगारियाँ ही देख, अंगारे न देख।

प्रश्न-अभ्यास

(क) मेरे गीत तुम्हारे पास

मौखिक

1. प्रस्तुत कविता किसको संबोधित है?
2. किस शेर में यह भाव व्यंजित हुआ है कि लोगों को फल से सरोकार होता है फल पाने की प्रक्रिया की कठिनाइयों से नहीं।
3. सुहाने दृश्यों को देखने की इच्छा रखने वालों को किस बात की परवाह नहीं करनी चाहिए?
4. रचनाओं के अधूरे और असफल होने पर भी निराश होने की ज़रूरत नहीं है— यह भाव कविता की किन पंक्तियों से व्यक्त होता है?

लिखित

1. कवि जीवन में ऊष्मा और प्राणशक्ति शेष बचा रखने का आग्रह क्यों करता है?
2. शंख-सीपियाँ उठाने वाले को रेत-बालू द्वारा झेले गए कष्टों का पता नहीं है। ऐसा कवि ने क्यों कहा?.
3. 'मेले में भटके' और 'घर में भटके' से कवि का क्या आशय है?
4. 'घर में भटके' के लिए ठौर-ठिकाना पाना क्यों कठिन है?

योग्यता-विस्तार

'साये में धूप' पुस्तक में दुष्यंत की ग़ज़लों का संग्रह हुआ है। उसमें से अपनी पसंद की ग़ज़लों का चयन कीजिए और कक्षा में सुनाइए।

(ख) दीवारें न देख

मौखिक

1. कवि सड़कों पर लिखे नारों और आकाश के तारों को देखने को क्यों मना करता है?
2. *कविता की किन पंक्तियों में स्वावलंबी बनने की सलाह दी गई है?*
3. कवि किस सीमा तक सपने देखने की इजाज़त देता है?

लिखित

1. लोग ज़िंदगी की हकीकत से क्यों डरते हैं? जीवन की वास्तविकताओं का सामना कैसे किया जाना चाहिए?
2. कवि राख में चिनगारी ही देखने का आग्रह क्यों करता है, अंगारे देखने को क्यों मना करता है?
3. भाव स्पष्ट कीजिए :
   (क) रोज़नों को देख, दीवारों में दीवारें न देख।
   (ख) राख में चिनगारियाँ ही देख, अंगारे न देख।

योग्यता-विस्तार

हरिवंश राय बच्चन की 'पूर्व चलने के बटोही बाट की पहचान कर ले' कविता को पढ़िए और इस कविता से उसकी तुलना कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

(क) मेरे गीत तुम्हारे पास

विरूपित – शोभारहित, बिगड़े रूप-रंग वाली
निर्मिति – रचना

(ख) दीवारें न देख

मायूस – निराश
रोज़न – सूराख, रोशनदान।

stated the conclusion. So the counselor need not and should not "rub in" the conclusions that she has arrived at and that the pupil has probably agreed to

In one other case—that in which the teacher must interview every pupil, regardless of problems—the approach will be a bit different Here the teacher will take the attitude that this interview is something required of everyone and that she just wants to chat informally with the pupil in meeting the requirement After establishing rapport, she will ask the pupil if he has any problems that are bothering him She will not insist that every pupil have problems She will probably ask him questions on a number of fronts. extracurricular activities, scholastic success, work engaged in outside of school, his community activities, summer recreation or work activities, special interests and talents, etc. This interview should help to determine whether future conferences should be held and to give the teacher a hint as to how to approach the assignment

A type of counseling which is usually discussed in any modern consideration of counseling is that emphasized by Carl R. Rogers and known as "nondirective counseling" This method was tried out extensively in the Second World War and was found rather effective, particularly in situations in which the counselor had not had extended training. In this type of situation the counselor leads the counselee to discuss his problem as freely as possible and merely lays a smooth path, as it were, over which the counselee may travel to a degree of security through expressing his feelings When it is realized that 6¾ per cent of all men called for service in the armed forces in 1942–1943 were rejected because of emotional instability, it can be readily seen that a favorable opportunity for self-expression, even for the many who were not unstable and who were not rejected, would have been extremely helpful.

A listing of the counseling rules in the Western Electric Company, where nondirective counseling is practiced, will give a clear picture of this technique·

1 The interviewer should listen to the speaker in a patient and friendly, but intelligently critical, manner
2. The interviewer should not display any kind of authority.
3. The interviewer should not give advice or moral admonition
4. The interviewer should not argue with the speaker
5. The interviewer should talk or ask questions only under certain conditions.
   a. To help the person talk.
   b. To relieve any fears or anxieties on the part of the speaker which may be affecting his relation to the interviewer
   c To praise the interviewee for reporting his thoughts accurately.
   d. To veer the discussion to some topic which has been omitted or neglected.
   e To discuss implicit assumptions if this is advisable.

After what has just been said, it is not difficult to arrive at a description of the person who will do the best counseling. Since it is assumed here that every teacher is a counselor, the picture will be a very modest one. The counselor must like people, particularly children, and must be constantly thinking more about the comfort and happiness of others than of herself. She must be reasonably calm and able to keep still while the other fellow talks. She knows that any successful counselor must be able to listen much and talk little. She has to have the patience of Job and must be able to keep a calm exterior no matter how she feels *internally* A pupil or even a parent may come to her very angry Then, if ever, she must keep her composure. Two excited people are an absolute impossibility if one is a real counselor.

She will not attach values to anything a pupil has done.

She is "shockproof" and does not lift an eyelid at the most hair-raising story To all appearances, it is an everyday matter. She praises the pupil whenever possible She never threatens and is never excessively sympathetic She allows the pupil to arrive at his own conclusions and whenever desirable sees that a further appointment is arranged for.

Under what conditions is a counseling interview desirable? A few problems are listed below.

1 Misconduct
2 Poor school work in general
3. Difficulties with particular subjects
4 Change of curriculum
5 Health handicaps
6 Ambitions above a pupil's ability
7 Ambitions below a pupil's ability
8. Special aptitudes not being utilized
9. Intellectual ability not being utilized
10. Home difficulties affecting a pupil's work
11. Companions adversely affecting a pupil
12 Wasting leisure time
13. Inability to get along with others
14. Choosing a life work
15 Frustrations
16 Self-consciousness
17 Nonacceptance by others

Counseling Suggestions

Some principles of counseling which every teacher-counselor will find helpful are given below. While they are intended principally for professional counselors who have more time for counseling than the classroom teacher usually has, they are fundamental and should be examined by a teacher for the purpose of orienting herself in the art.

1. Individual counseling involves two people, one who has a problem which should be solved, and another who is in a position to assist in its solution
2. The counseling interview is devoted to (*a*) obtaining information, (*b*) giving information, and (*c*) changing attitudes and behavior.
3. The counselor should call the counselee by name when welcoming him to the interview
4. Counseling should begin with the establishment of rapport, that is, the counselee must feel comfortable
5. The counselor must himself be at ease if he expects the counselee to be at ease.
6. Whenever possible, a case should be studied carefully by the counselor before the interview
7. The counselee is helped by the knowledge that the counselor knows his problem This makes it easier for him to "open up."
8. Fears may prevent a counselee from "opening up."
9. The teacher who desires to be an effective counselor should take special training
10. The counselor must have a certain insight which shows him how to begin and how to end an interview
11. The counselee may realize that something is wrong but may not recognize his problem
12. The counselor should help the counselee to locate and define his problem.
13. The counselee must wish to solve his problem
14. The counselor should be an expert listener and should emphasize this in his technique
15. The counselor should avoid asking direct questions until the counselee is ready to volunteer the information
16. The counselor should confine his remarks chiefly to the questions which will enable the counselee to see his problem clearly and to formulate plans for its solution.
17. A maximum of leadership treatment and a minimum of executive treatment are desirable.

18. It is almost always possible for a counselor to wait till the facts are in before endeavoring to bring the counselee to a decision Occasionally this may not be true
19. The counselee must be provided with outlets—educational, vocational, avocational, and correctional.
20 The counselee must be made acquainted with many sources of aid.
21 The counselee must be willing to use such sources of aid as are provided.
22. Usually it is unwise to try to settle a problem in one interview.
23. The counselor should always keep a pad on the table on which he may write notes if he desires.
24. Every counselor should take time to write up a case fully after each interview. In fact, interview time should include this.
25 The counselor should usually take time to review a case and consult with other persons before dispensing advice.
26. A definite future appointment is usually desirable
27 The counselor must know how to induce the counselee to ask for another interview if such is needed
28. If a counselee does not return when arranged for, a card should be sent inviting him to come on a definite date
29. The staff clinic is desirable for difficult cases
30. A counselor should seldom consider a case *closed*, for a year or two later the counselee may return Then a review of the full notes is desirable
31 The counselor should study his own habits and peculiarities to see that they do not have an unfortunate effect on the counselee.
32 At times the counselor should dictate a complete statement of the case after the interview.
33 The counselor should study his own voice through recording, in order that he may be sure of its pleasantness. Also, he will do well to study his diction and emphasis

34. The counselor should have regular hours, where possible, and confine interviews to these hours except in emergencies.
35 A frank discussion of a problem is usually desirable.

INTERVIEW RECORD

Counselor——————————————————
Pupil——————————————————
Date——————Hour—— ——Length of interview———minutes
Problem——————————————————

Was pupil aware of his problem?——————————
Who sought the interview?——————————
Was the interview a routine required one?——————————
If so, was any problem discovered?——————————
How was the problem approached?——————————
What action was agreed upon?——————————
What feature of the situation requires special treatment?——————

——————————————————

Is a future interview desirable?——————————
Who asked for it?——————————
When will it be held?——————————

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Keep a sheet on your desk and tally every incident that you believe should be dignified with the term "individual counseling" Check with the principles of counseling suggested in this unit, and see if your techniques can be improved. If they cannot, score your work with a big *plus.*
2. It would be interesting for a faculty to keep records of times and places of individual counseling interviews.
3. Another helpful study would be one of the types of problems which pupils discuss with teachers.
4. After the above studies, teachers may wish to set up a program for individual counseling that will increase effi-

ciency and eliminate a good deal of interference and overlapping.

5. Set up a program of discussions of the various problems of counseling.
6. Write six suggestions for organization of your counseling (*a*) as a homeroom teacher and (*b*) as a classroom teacher.
7. You are a classroom teacher and a problem arises with a pupil in a class. The difficulty is one of (*a*) conduct, (*b*) learning, and (*c*) personality adjustment. How would you set up the interview in each case?

BIBLIOGRAPHY

COOK, KATHERINE M.: "The Place of Visiting Teacher Services in the School Program," U.S. Office of Education, *Bulletin* 6, Washington, D. C., 1945. The author presents the growth and present status of the visiting teacher and discusses desirable lines of future development in this important field.

CURRAN, CHARLES A.: *Personality Factors in Counseling*, Grune & Stratton, Inc., New York, 1945. This interesting study sets forth a scientific investigation of non-directive counseling by means of an objective analysis of the 20 phonographically recorded interviews held over a period of time with one client. The purpose was to discover how personality change was brought about.

ROGERS, CARL R., and JOHN L. WALLEN. *Counseling with Returned Servicemen*, McGraw-Hill Book Company, Inc., New York, 1946. By featuring exact reporting of interviews and by illustrating the use of tests and occupational information, the authors present a case for non-directive counseling with veterans.

SCOTT, IRA R: *Manual of Advisement and Guidance,* Government Printing Office, Washington, D. C., 1945 The author outlines in detail the procedures to be followed in the Veterans Administration Guidance centers

STRANG, RUTH "The High School Dean's Professional Day," *Journal of the National Association of Deans of Women,* Vol. 9, pp. 99–115, March, 1946. Miss Strang here surveys the work of 63 high school deans of girls, presents an analysis of time expenditure, and gives examples of various diaries of actual daily activities.

VASCHE, J B.: "Guidance Inventory: Individual Counseling Check List," *Clearing House,* Vol 20, pp. 478–479, April, 1946. With emphasis on letting the personal touch dominate all counseling interviews, the author presents a ten-point individual counseling check list which he maintains "holds a lot of possibilities for the high school teacher or counselor faced with the business of planning programs and evaluating performances of a large number of pupils."

WRIGHT, BARBARA H.: "Minneapolis School Counselors Analyze Their Jobs," *Occupations,* Vol. 24, pp 214–219, January, 1946. This study lists separate analyses of counselors' jobs in junior and senior high schools with "duties" and "knowledge and skills needed" presented in parallel columns Valuable for beginning counselors.

UNIT 17

Group Counseling

The algebra class had come in, and Miss Brown was about to open the lesson when she observed a special agitation among the pupils They didn't seem to be interested in algebra Something else had seized their attention, and they apparently wanted to discuss it. Miss Brown, being more interested in the development of the individuals in the class than in her subject, asked them what the special concern was about. The reply given by a half dozen at the same time was that Tom Simpson, a senior, had been declared by the faculty to be ineligible to play football in an important game the following day Tom was the star of the team. But he was not to be allowed to play because he had been caught cheating in an examination the day before, and the school was up in arms.

Miss Brown realized that very little algebra would be learned that period until this problem had been disposed of. Hence, the class was organized for a frank discussion of the problem. A committee of five was appointed to prepare some thoughtful questions for discussion, and after the first question had been stated, the teacher, acting as moderator,

opened the class discussion, while the committee continued to grind out further questions.

The entire class period was devoted to the discussion, with class members permitted to suggest any further questions. The vote of the class at the end of the period was in support of the school authorities

The above procedure is one example of what is known as "group counseling."

In group counseling a vast amount of necessary information can be considered both effectively and economically Furthermore, a condition of rapport is established between the counselor and the student; for the student in becoming well acquainted with the counselor in group activity feels freer to approach his counselor for a private interview Then, too, as Milor says, if there is not group counseling, there is great infrequency of contact with pupils in the office counselor's system. For example, under the latter system he questioned a boy who had seen his counselor once for 10 minutes in the preceding semester. This fact is further corroborated by the following quotation from Allen and Bennett.[1]

> One of the most important values of group guidance activities lies in the fact that they provide continuity of contacts between the teacher-counselor and his students for an appreciable period of time. Without the group activities, these contacts would be limited to scheduled or occasional interviews, and it would be impossible for a counselor really to know the students with whom he was attempting to counsel.
>
> Without a program of group activities, guidance would be largely remedial, repairing the machine after the damage had been done. It is only through group guidance that it is possible to

[1] Richard D. Allen and Margaret E. Bennett, "Guidance through Group Activities," in *Guidance in Educational Institutions,* 37th Yearbook of the National Society for the Study of Education, Public School Publishing Company, Bloomington, Ill., 1938.

select the problems with which all pupils are sure to be confronted and to prepare pupils *in advance* with the information and the procedures necessary for a wise solution of the problems when they occur.

Finally, every group guidance activity is an open invitation for pupils to come to the teacher-counselor for assistance with their individual problems When pupils bring their own problems to the counselor, an attitude of "guidance readiness" is ensured The group activities help them to develop awareness of the nature of their problems and to become interested in solving them

Group counseling may be defined as considering in groups vital problems that are common to a number of individuals in a group Examples would be the discussion of table etiquette, principles of good citizenship, qualifications of officers for the homeroom, student council, or local municipal council, sportsmanship, qualities needed for a particular job, how to study, how to choose a vocation or avocation, etc. In other words, *group* counseling differs from *individual* counseling mainly in that problems of a particular pupil are those of a number of others and the individual does not speak up and admit that a problem is his own. In no case is the discussion likely to be centered on the problem of a designated individual.

Group counseling is essential in any secondary education program. Teaching of high school subjects, necessary in any situation, is not sufficient for a well-rounded education

In many cases, the traditional subject is considered essential to a curriculum but does not appeal to the pupil as of vital interest to him, for the adolescent, much as he may *appear* to be having his needs met in the *regular high school subjects,* has problems that to him are much more significant. How to make himself attractive to the other sex, how to "make friends and influence people," what will help him to grow up rapidly, how to get a job and be able to buy

things he cannot now have—these and many other problems are live ones but are seldom considered in any organized fashion in regular school subjects. To satisfy these vital needs such problems must be given a specific time and place and must be handled by certain definite techniques, some of which follow.

Some Techniques in Group Counseling

The lecture method may be used in some situations in group counseling, particularly where dispensing information or developing ideals or attitudes is the purpose The term "lecture" is not particularly fitting in this situation. It too often implies something formal and possibly uninteresting It might be better to call it "direct teaching" or some other term descriptive of economical methods of informing or influencing people. The use of motion or still pictures, graphs and charts, excursions to business establishments or other establishments of interest, and many other similar procedures accompanied by oral explanation or description should consume most of the group counseling time listed under this head. It is essential that the lecturer be thoroughly prepared for his job His presentation must be interesting and worth while or results will be negligible.

Group counseling usually does not imply the *telling* of something to pupils, valuable as this is under certain conditions It is likely to be more successful if the pupils themselves are more active than is possible in the lecture situation. In many cases where group counseling is desirable, the teacher acts merely as a leader of discussions carried on by the pupils. This procedure is commonly called the "socialized recitation." It matters little how the teacher organizes the class. The central principle is that the pupils should think cooperatively on some problem that to them is significant.

It is important that guides to thinking be prepared before the socialized recitation is attempted These may be arranged by the teacher or by a committee consisting of pupils alone or pupils in cooperation with the teacher. The panel discussion, in which certain questions have been prepared beforehand and are asked by a leader of discussion who does not attempt to sway the direction of the thinking, is an excellent example of the socialized recitation. It is not difficult to handle, and it is usually successful. Three principles, however, must guide the use of this method. (1) The questions must be meaningful and carefully stated (2) The subject must be one in which opinions are acceptable and scientific exactness is not demanded. (3) The leader must be acquainted with the subject and capable of arousing the interest when it threatens to lag An important characteristic of such classroom procedure is that no pupil is put "on the spot" by being asked questions which he must answer or suffer the consequences He is allowed complete freedom to think without fear of the teacher's disapproval. He is never assigned a question or asked a direct question by the teacher. It is not suggested that this should always be the classroom situation, but it is maintained that pupils frequently should have the pressure for pleasing the teacher withdrawn and the opportunity for objective thinking substituted.

Dramatization is an excellent technique in group counseling. While the lesson is vividly taught, a number of the class members have the opportunity to participate in the activity. This technique is particularly useful in teaching such topics as etiquette, morals, and ethics. A dramatic or radio skit showing some common mistake frequently made in social situations is likely to be very effective.

Classes are frequently organized into committees for the consideration of some vital problem These committees pre-

pare their reports, and the chairmen present them at an entire class session. It is sometimes effective for the chairmen to sit as members of a panel for discussion of the problem or problems under consideration

A clinical approach to the solution of a group problem is that in which a case is presented for consideration by the group It differs from the panel discussion mainly in that the problem is presented as a *case* which might refer to one of the members of the class but never does; the individual involved should never be enough like any member of the class to be identified with that pupil A teacher preparing such cases should always remember this caution The late Dr Allen of Providence, R. I, wrote two books[2] on the subject and laid down a few rules for the conduct of such discussions The following suggestions are approximately what Dr. Allen recommends:

1 The case should be one of immediate concern to the members of the group but anonymously presented
2 The case should be presented in sufficient detail to permit all pupils to see it clearly
3. A number of significant questions should be prepared beforehand either by the teacher or by a committee of pupils, or by both working together.
4. The case should be read to the group or presented in mimeographed form with appropriate questions.
5 The leader should always remain in the background and should consider it his duty only to keep the discussion on the subject and to secure adequate summarization of the conclusions reached or general trends of thought
6. The leader should never express his own opinion, although he may occasionally ask questions intended to bring atten-

[2] Richard D Allen, Frances J. Stewart, and Lester J Schloerb, *Common Problems in Group Guidance*, Richard D Allen, *Case-conference Problems in Group Guidance*, Inor Publishing Company, Inc., New York, 1934. Volumes I and II of the Inor Group Guidance Series.

tion to a particular line of thinking he considers desirable but which the group has evidently not sensed

7. Discussion of the case should stop short of *ennui*.

An illustraton of a case and the questions which accompany it follows:

Charles and Robert were considered good students Their intelligence ratings were about the same They were studying Spanish and making about equal grades, in the high 80's or low 90's They recited well in class with one exception Charles could not read well "at sight" material he had not studied beforehand Robert seemed able to read new materials almost as well as those he had studied. When they finished high school, Robert went on to college, continued his study of Spanish, and, on graduation, obtained a position as an interpreter.

Charles tried Spanish in college, but gave it up at the end of a year because his Spanish lessons took too much of his time.

Questions:

1 Evidently Robert was the better Spanish student. What did you discover in his high school work that indicates this?
2 How do you suppose the two boys differed in their study habits?
3. Which used the dictionary more?
4. Which gave more nearly exact translations in class? Why?
5. Which read faster? Which read more?
6. Which one probably could speak more Spanish? Why?
7. Which boy read more nontextbook material, such as newspapers, magazines, jokebooks; listened to Spanish songs on the radio; sought the acquaintance of Spanish-speaking people?
8. State two principles which you believe should guide a person who is studying a foreign language.
9 Can you apply your conclusions to other subjects? Illustrate.

Group Counseling in Other Activities

While we have been considering group counseling only in homerooms or in classes set up for the purpose, there are a number of other activities that are usually considered as performing the group counseling function Among these are the school assembly, a great many types of clubs where much group thinking and discussion is engaged in, school government, the homeroom organization activities, and committee work in many school activities. Outside of school are civic activities Boy and Girl Scouts and other such groups, Sunday school, young people's religious groups, etc. All these and many others furnish opportunity for education of the individual in problems that to him are vitally important.

The best method of selecting problems for group counseling is to choose those that are actually facing the group One counselor who wanted materials for her group guidance program went out onto the playground and observed the situations that arose in connection with pupil contacts there She looked for real problems in the subject matter classes she was teaching and asked other teachers to hand her lists of those that arose in connection with their daily work She went still further, and asked pupils in her group counseling sections to list subjects they would like to consider. Among these, as was expected, were such questions as: "How shall I choose a vocation?" and "How can I get a job?" Others referred to boy-girl relations and how to be popular

There are many lists of problems for group counseling, but one of the best is that by Wendell Yeo.[3] The problems are classified under the following heads.

✓ 1 Health and Physical Fitness

2 Family Relationships

[3] J. Wendell Yeo, "Suggested Content for the Group Guidance Program," *Education*, Vol. 65, pp 80–89, October, 1944. Used with permission.

3. Vocational Planning and Adjustments
4. Educational Planning and Adjustments
5. Utilizing Free Time
6. Social Adjustment
7. Personal Values
8 Finances
9 Personal-psychological Relations

These problems are listed below according to the school grades in which they might well be presented. (It should be stated that no scientific determination of grade level has been made, but there is some evidence that the assignments are satisfactory.) The numbers before each topic indicate the areas to which it belongs among those that are listed above.

Grade 7

- 4, 6 Getting acquainted in our new school
- 4 Differences between elementary and junior high school
- 4 Learning how to study
- 7 What should my responsibility be toward the property of others?
- 6 Courtesy in the classroom
- 3 Why people work
- 3 Survey of different occupational fields
- 4 Learning how and where to ask for help
- 9 Are my angry moments worth while?
- 4, 7 What constitutes cheating in homework?
- 6 What kinds of manners affect popularity?
- 2 Relationships with brothers and sisters
- 8 Managing a weekly allowance
- 9 Learning how to accept criticism
- 6, 7 Seeing the good and beautiful in the lives of others
- 7, 8 The borrowing and lending habit—good or bad?
- 7 The code of a good sport
- 1 A check list of sound health habits

9 Would I be considered selfish?
2, 8 Helping my family live within its income
5 What to do in free time

Grade 8

7 On becoming a responsible person
4 Do I know and practice good study habits?
6, 7 How important are one's companions?
7 Meaning of good sportsmanship
4 Things to consider in choosing high school subjects
4, 7 Is "getting by" good enough?
5 How to acquire new interests and develop old ones
3 Vocational ladders
4, 5 Making the most of clubs and other student activities
2 Sharing home responsibilities
6, 9 Personality—what is it?
7, 9 Relationship of our thoughts and actions
1, 4, 5 Budgeting one's time for rest, study, and play
4 How can I learn of my real abilities and aptitudes?
6 How should I regard the opinions of others?
6 The right thing to do at social affairs
5 How to start a hobby
3, 4, 7 Finding pleasure and pride in good workmanship
6, 7 On the keeping of confidences
9 Building self-confidence
9 Lessons to be learned from defeat
8 Earning one's spending money

Grade 9

8 Planning to finance one's education
3, 4 Reasons for continuing my education
4, 7 What qualities should a good student possess?
9 How can I learn how to control my temper?
7 Should I smoke?
2, 6 What can I do to make people like me?
3, 4 Relation of school subjects to vocational life

6, 7 How to act at a party
6 Teachers are people, too
3 How to choose an occupation
9 What's wrong with daydreaming?
1 How much sleep should junior highers get?
1, 9 Why do I feel tired so often?
9 Overcoming self-consciousness
7 Is it ever right to tell a lie?
4, 5 How to choose a club
7 Sportsmanship in action
4 Meaning of college certification
4 Requirements for graduation from high school
3, 4, 6 Proper dress for school, parties, and business
2, 6, 7 How should boys and girls act toward each other?
4, 7 Need for rules and regulations
4, 7 "He goes to 'X' high school"
2 Evidence of loyalty to one's home and family

Grade 10

8 Youth's financial needs and resources
6, 7 What about "going steady" in high school?
4, 6 How to make good in high school
1, 3, 4, 6 Differences among people: mental, physical, and social
6, 7 Traits that make us liked
9 How to break a bad habit
9 What to do about worry
2 Do parents expect too much from their children?
1, 3, 6, 7 Qualities of leaders
3 Getting and holding a part-time job
6 What about dates?
9 Facing inferiority
1, 3, 4 How does one learn of one's special abilities?
7, 9 "But everyone else is doing it"
3, 4 Factors to consider in choosing a college
3, 4 How important is my high school record?
6, 7 Characteristics of the lady, the gentleman

- 1, 6 Good health, the basis of a radiant personality
- 4 The place of the high school in the community
- 1 How to improve one's personal appearance
- 6, 7 Many acquaintances or a few friends—which?
- 6, 9 How to overcome racial prejudices

Grade 11

- 1 Rest, diet, exercise—what I need, what I get
- 6, 7 What shall we talk about?
- 9 Dangers in being hypersensitive
- 1, 2, 4, 5, 7 First things first learning to live on twenty-four hours a day
- 2 Getting along with the members of one's family
- 6, 7 Problems in etiquette for youth
- 6 The meaning of social maturity
- 7 Ethics for modern youth
- 7 The kind of a person I am becoming
- 8, 9 Achieving independence
- 9 Fundamental human drives
- 9 Ways in which people adjust to conflict
- 5 Finding worthy avocations
- 3 Summer work as vocational experience
- 6, 7 Who is a tolerant person?
- 3 Qualities of leadership
- 6 Value of a good reputation
- 7 Youth on the highway
- 1, 3, 4, 6, 8 Establishing personal goals
- 9 What is meant by "hero worship"?

Grade 12

- 3 How to get and hold a job
- 3 How to make the most of that first job
- 3 Legislation affecting youth today
- 2, 3, 6, 7, 8 The high school senior looks at marriage
- 4 Keeping on growing. post high school educational opportunities
- 3 Meaning of occupational adjustment

9 When is a person emotionally mature?
7 Finding a faith to live by
5, 6 What price popularity?
2 Factors making for happy home life
1, 4, 5, 6, 7, 8, 9 Adjustment problems of college freshmen
7 The senior's responsibility to lower classmen
3, 7 Ethics in business
7, 9 Attitudes—determinants of success or failure
3 What may an employer properly expect of me?
9 Mental health and how to achieve it
7 High school graduate's obligations to his community
7 Holding fast to one's ideals
1, 4, 5 How to keep physically fit

After these problem listings, Yeo explains, "Because of the several organizational plans possible for imparting occupational information no attempt has been made in these listings to include topics on *specific occupations or fields of occupations.*"

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Select one of the above questions, prepare it carefully, and using one of the methods listed, demonstrate with your class to a group of teachers how it can be handled. It is not expected that this demonstration will be a finished job. The teachers observing should discuss together how the procedure can be improved. Several teachers should prepare units by different methods and present them to groups of pupils in the presence of other teachers. The order of presentation may be determined by lot.
2. Any program of group counseling should be organized on a grade basis with special care that the problems considered are not covered in any other grade or subject. If a

school has not had a group counseling program before, it would probably be well to start with the highest grade in the school, covering in that grade as many of the most important problems for that and the lower grades as possible. The program can then proceed with the grade next below, covering the work it has missed to date, but reserving problems which are assigned to the highest class, etc

3 Plan a research program intended to reorganize the program of studies so that overlapping with the group counseling program will be eliminated.

4 Organize a committee to develop techniques for group counseling.

5. What changes would you make in the handling of your extracurricular program that would improve the group counseling program therein?

6. One of the most important functions of a group counseling program is that of indoctrinating pupils in the idea and techniques of studying their own needs, interests, aptitudes, and capacities. How would you organize such a program so that it would function best? See the bulletin published by the Chicago Public Schools [4] for suggestions.

BIBLIOGRAPHY

McDaniel, Henry B : "Do We Have Time Enough for Counseling?" *California Journal of Secondary Education*, Vol. 18, pp. 177–182, December, 1943 In this article, the author describes how group counseling can be effectively used not only for imparting information

[4] Grace E Munson and L. J. Schloerb, "High School Courses in Self-appraisal and Careers," Chicago Public Schools, Chicago

but also for screening students needing individual counseling, bringing counselors in closer touch with parents, and helping to plan future educational programs. A counseling profile is pictured. The author concludes if any school is organized to make full use of well-planned group guidance activities, there is time for counseling in that school's program.

METCALFE, HAROLD H: "Group Counseling at the Eleventh-grade Level," *School Review,* Vol. 54, pp. 401–405, September, 1946. Using a high school guidance program as a basis for his study, the author presents means for evaluating it. He describes methods in group counseling and cites examples of group conferences in which the meaning of the Kuder Preference Record is discussed after each member of the group has taken it. Group guidance, he concludes, enables the dean to meet many students in a personal way, group thinking stimulates the individuals, leaves more time for individual counseling, and promotes interest in the entire group.

RATHBUN, J. E.: "Functions of Group Counseling," *California Journal of Secondary Education,* Vol 20, pp 447–452, December, 1945. The author divides group counseling into three major functions: imparting factual information, interpreting environmental factors in terms of personal experiences, and group therapy, which includes the discovery and treatment of the maladjusted. He says that the true value of group counseling is its developmental aspect, that finding pupil's problems is one of the first requisites, and tells how that can be done. Methods of scheduling group guidance activities are described. Continuity and regularity are called minimum essentials if continuous growth and development of students is to be obtained.

SACHS, GEORGIA M.: "Evaluation of Group Guidance Work

in Secondary Schools," *Southern California Educational Monographs*, No 14, University of Southern California Press, Los Angeles, 1945. Which is the more effective group-guidance plan, that employing the services of a specialized guidance teacher or that using the home-room teacher? The author reports measurements of the relative effectiveness of the two plans as they are carried on by two different junior high schools.

WATTS, M. S.: "Thinking about Personal Problems," *Clearing House*, Vol. 19, pp 474–479, April, 1945 The author, reporting on a method of teaching English which she has used for a period of years, tells how the "problem approach" increases the interest and performance of her pupils in writing and reading At the same time it provides them with continuing guidance on social and moral problems and teaches them to think constructively.

UNIT 18

Capacity and Achievement

Mrs. Dailey had come to the high school and wanted to see June's homeroom teacher. June had taken another poor report home, and Mrs. Dailey had had enough. She reported that June had not been allowed to go out in the evenings and had been required to spend a definite amount of time each evening in study. Mrs. Dailey had done her part and now it was about time the school began to produce.

Miss Corwin, the homeroom teacher, was embarrassed She knew why June was receiving low grades June just was not a capable child She was studying hard, probably harder than she should, but was unable to raise her grades. Now, Miss Corwin had to confess to the mother frankly that June could do no better It was a difficult situation for both, but they faced it. Some curriculum changes were arranged which enabled June to make a better record with her limited ability. She was placed in a curriculum where her good manipulating ability made her reasonably successful.

The next day Mr. Truitt came to Miss Corwin to discuss his son, Spencer Here was an easier situation. Spencer

was a boy of unusual ability but he was taking home a report which was rather consistently "average" Ways and means were considered, and Spencer was called in to discuss the problem with them. He was reminded that his chances of entering Harvard, his father's alma mater, were exceedingly slim with his record to date. He was told that he who consistently fails to live up to his capacities may find this becoming habitual and himself a person of no consequence.

Some methods of approach were also suggested in this conference. Spencer claimed that the work was usually too easy and not interesting. For these reasons he preferred to spend his time in reading books which were not related to his subjects and in participating in certain extracurricular activities. Also, he was engaged in afterschool work which occupied 2 hours of his time each day.

During the discussion, he decided to give up his work, use somewhat less time for extracurricular activities, and devote more of his time to study In turn, the homeroom teacher agreed to give him help on methods of study and to suggest to some of his teachers that he be allowed a bit more time for reading in the library on areas in which he was particularly interested. He agreed to check himself frequently and to take standardized or other tests whenever possible.

These two cases illustrate a problem which is one of the biggest in the guidance field, that of keeping pupils' achievements somewhere near to their capacities Some pupils of limited capacity overwork and make their lives miserable because they are constantly far behind the better students On the other hand, many pupils of high ability are allowed to loaf through school with mediocre or only slightly better than average records.

These cases represent a moderately satisfactory situation The teacher knew that June had very limited ability and that

Spencer was very able Another case illustrates a less satisfactory situation. Mrs. Ruther, a woman of much more than average intelligence, called on Miss Lake, her son's fifth-grade teacher, to see if something could be done about Walter's grade of D in English. Miss Lake was visibly annoyed by Mrs. Ruther's visit, but she relaxed when assured that the mother had not come to criticize her but to see if something could be done to improve Walter's work. Miss Lake said that she did not know what to do Perhaps he could not do any better When Mrs. Ruther asked her if she knew that Walter had a high I Q , she admitted that she did not

Here was an unfortunate situation. The teacher was presuming to teach pupils whose abilities she did not know. Consequently, the problem of keeping achievement up to ability was entirely a hit-or-miss affair. Surely no reputable doctor would attempt to prescribe for a patient whom he knew only as "someone who complained of not feeling well." He would use every possible means of learning the patient's medical history and present condition before presuming to treat him. So every intelligent teacher will spend a good deal of time studying her pupils in order that she may help each one to develop to the limit of his ability

But one of the tools which have helped to aggravate the situation emphasized here is the old-fashioned report card which shows that June's grades are the same as Spencer's but with no qualifying statements The ordinary parent will put as much pressure on June as he will on Spencer. In the former case, the pupil's health, both physical and mental, may be seriously injured, while in the latter vigorous pressure may be what is needed.

To correct this error, the newer type of report cards indicate not how a pupil stands as compared with his classmates but whether his progress is satisfactory for one of his ability

Such reports usually rate the pupil S or U, satisfactory or unsatisfactory—in other words, living up to his ability or not living up to his ability.

The question is always asked, "What about recommending him for college or a job? Shall we recommend for college everyone whose work is satisfactory?" That would be as unwise as entering a plow horse in a trotting race because "he ran as fast as he could" The answer is contained in the guidance program. The pupil's cumulative record is relatively complete and he is recommended for a job or further training on the basis of his ability, interest, and special aptitudes. On this record is an indication of his rank in class and his percentile rankings on intelligence tests as well as on any achievement tests he has taken.

The reader should be reminded that the most "retarded" pupil in the school is usually the one of most ability who is not held up to his maximum production.

Another caution is that the teacher should not condemn a pupil who is deficient in certain types of ability. He may have a surplus of some other type. A guidance worker should never sentence a pupil to a life of failure

Numerous examples of persons with apparent lack of ability in school who later became famous, are found in history. Thomas A. Edison is one of these commonly mentioned examples. However, we should not overlook such individuals as Isaac Newton, Robert Fulton, Sir Walter Scott, Henry Ward Beecher, and Herbert Spencer, all of whom showed little promise in school.

Since the matter of matching ability and accomplishment is of such vital importance, three forms are presented which are intended to assist the teacher, the pupil, and the parent to identify problems and act intelligently in relation to them. These forms are, in order:

1 The scattergram (for class use)
2 The capacity-achievement report (for the individual pupil)
3. The report to parents

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. In a certain college during the Second World War, two young men from the same town were enrolled in a Navy V-12 program Their grades were approximately the same, but one was "washed up" and dropped from college while the other was retained When the commander of the unit was asked the reason, he replied that the man who was dropped would never become a good officer because he did not live up to his capacity and, consequently, would not inspire men to perform on their highest levels. Criticize pro or con the stand of this officer

   Are we justified in taking a similar attitude in (*a*) public schools? (*b*) colleges? (*c*) teachers colleges? (*d*) graduate schools? Should a teacher who does not make a serious effort to know the capacities of her pupils be retained on a faculty? If your answer is yes, would it be the same if that teacher were teaching your child?
2. Henry C. Morrison claimed that a teacher should spend half her time studying her pupils and the other half doing what this information indicated should be done. You may disagree with Dr. Morrison. If so, how would you change the statement?
3. Work out a plan other than the scattergram for locating pupils not producing on their capacity levels.
4. After you have discovered that a pupil is living far below his capacity level in your subject, your most difficult problem is helping him to correct the difficulty. Select an actual case, and lay out a definite program of corrective work.

UNIT 19

The Scattergram

A simple and graphic method by which a teacher may analyze the achievements of her class is furnished by the so-called "scattergram." This is merely a picture of the accomplishments of the class set against a background of their abilities. The portrait which one teacher drew of her class and which furnished a number of shocks is given below.

Accomplishment in History

Ability to Learn	1	2	3	4	5
5		S.K.	S D.	R M. G.A.	K L. F.A. M.G.
4		J.E. C.G.	N.S.	D.E. A M B.T. L R	
3	C.U.		R K. T.A. G I I.G.	I.M.	
2	E.R.	F.D. J.M. C.V.	A.T.	A.W.	
1	J.A D K	B.L.	S.L.		

This teacher obtained ability rankings of her class of 30 pupils by using a diagnostic reading test and a scholastic aptitude (intelligence) test and taking average rankings on the two measures She then ranked the pupils in history by means of an objective test which she prepared. Beside the name of each pupil, listed vertically, she put in two columns his rankings—first, in ability to learn and, second, in accomplishment in history on the basis of the fifth of the class in which he was placed in each category. Armed with this information, she placed them on the scattergram in the following manner. Pupil C U ranked in the third fifth in ability to learn and in the first fifth in accomplishment in history. Therefore, he is placed in row 3 in ability and in column 1 in accomplishment. Pupil K L, who ranked in the fifth fifth in each, is placed in the fifth row in ability and the fifth column in accomplishment Thus each pupil is placed in his proper square in the scattergram. It will be observed that the first fifth in each case represents the lowest group and the fifth fifth the highest.

Now comes the importance of the picture. This particular teacher had not heretofore given much attention to the abilities of her pupils. She had trouble enough worrying about the accomplishments of some of them. On examining the picture, she found that 16 of her pupils were ranged in the squares running from the lower left corner to the upper right corner of the diagram These were properly placed, therefore she gave her attention to the other 14 who did not appear in these squares. In order to give attention where it seemed to be must urgently needed, she began with S. K Here was a boy who ranked in the upper fifth in ability to learn but in the second fifth in accomplishment. This hiatus seemed serious and she attacked the problem with vigor. She looked up his standings in all his other classes and found that in three of his five subjects he was doing excellent work.

She checked again on his ability and found that he stood high in the upper fifth. On talking with the three teachers in whose work he was doing well, she found that all of them had discovered his ability and had given additional interesting work, over and above the required amount done by most of the pupils. He was doing outside projects and being provided with opportunities to express his accomplishments in a number of ways. The teacher in the fifth class, in which he was doing even poorer work than in the history class, considered him just a common nuisance and was threatening to report him to the principal for exclusion from her class.

Being an intelligent person, his history teacher told her findings to the principal, who called a meeting of all S K.'s teachers for discussion of his case All the information available was presented to the group, and the findings indicated that the three successful teachers probably had the solution of the problem The two teachers in whose classes he was not succeeding decided to discuss his case with him and endeavor to apply techniques similar to those that other teachers had found successful. However, they realized that no two teacher personalities are similar and that the problem might require some time for solution. An important consideration here was that other teachers appeared to have solved it. The remaining pupils whose accomplishments did not reach the levels indicated by their abilities were taken up individually and attempts were made to resolve their difficulties. In general, they were reasonably easy of solution

One other pupil, however, who gave the teacher some concern, was A. W. Along with several others, she was accomplishing far more than was warranted by her ability to learn. It was discovered that she was working much harder than conditions seemed to warrant. While working till late at night to keep her grades up, she was refraining

from all extracurricular activities and social affairs Her health was being impaired and her attitudes toward life were becoming unfortunate. The solution of the problem was difficult because any other approach to the situation would undoubtedly lower her grades while she was participating in desirable social and recreational activites. Two attacks on this problem were possible. One was a change of program in order that she might take courses which were less difficult or better adapted to her particular abilities. The other was a change of marking system which would give her satisfactory grades if she did the best she was capable of doing. It seems to the writers that there are few other solutions for this type of case unless the teacher, using the present marking system, relax her scholastic requirements for those less capable pupils who are ambitious to excel in their grades and put her grading tacitly, if not admittedly, on different bases for pupils of different capacities.

This discussion has raised the suspicion that the teacher who uses the scattergram is likely to get herself into troubles that would otherwise not face her. However, no teacher who is a real teacher will regret the challenge of keeping pupils somewhere near their abilities It should be said here that a variation of one-fifth, or one quintile, is far less serious than is a variation of two or more quintiles The former deviation may be due to some chance element A variation of more than one quintile will always warrant a careful investigation and generally will call for procedures so important that it is well for the case to have the attention of a number of interested, intelligent teacher-counselors.

Some will ask how this can be handled in situations that do not lend themselves to objective measurement. It is not being proposed that this be attempted. However, there are no doubt scientific-minded teachers and counselors who will attempt to project some such techniques into situations that are much more subjective in nature For all others, it is

suggested that the scattergram be confined to those situations lending themselves to objective measurement.

It is not claimed that this technique is infallible. Surely a scholastic aptitude test and a reading test do not give an absolute indication of a pupil's capacity. Scholastic aptitude tests are growing from the situation where a single score was the only result, through the A C.E Psychological Examination with two factors, to the Chicago Test of Primary Mental Abilities with six factors

If the A.C E test is used in the scattergram, it is suggested that the Q score only should be used if the subject is of the quantitative type and the L score only if the subject is of the literary type, including English and social studies

But the reader should be reminded that techniques for determining how a pupil's accomplishment compares with his ability do not solve the problem. They are helpful in keeping the facts before the teacher and pupil, but when these are understood, only a start toward readjustment has been made. And it is entirely possible that the matter will stop there.

When the ability and accomplishment are not matched, there is some reason for the discrepancy. In the case of the pupil working below his ability, he may not know how to study; he may not care to study; he may dislike the subject; he may dislike the teacher; the possibilities for individual development in the study or activity may not have been made clear to him; he may be giving too much time to extracurricular activities in school, or he may be working too long before or after school. All of these and many other possibilities should be investigated. But one of the most profitable lines of investigation is that of the methods of teaching used in the class or classes in which he is not doing good work. The teacher is always wise to look to her own accomplishment when trying to keep the pupil up to his possibilities. Perhaps the teacher, herself, is a case in point

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. You are a classroom teacher and desire to prepare a scattergram which will give you a graphic picture of how the pupils of a certain class are living up to their capacities. There are 28 pupils, and their capacities and accomplishments are shown in the following tabulation The pupils are indicated by letters of the alphabet, plus AB and BC They are ranked: (1) according to intelligence, (2) according to scores in a reading test, and (3) according to a test in your subject

   You will observe that in intelligence E and W have equal rank (25½), Y and Z have equal ranks (2½), and O and P have equal rank (17½) In reading, E and F have equal ranks (24½), and in the achievement test in subject matter L and M have equal ranks (9½).

   An explanation of how these ranks are arrived at may be helpful to persons not acquainted with statistics. It will be noticed that E and W each has a score of 123, and in determining the rank if one had been larger than the other, these would have been 25 and 26 However, since the scores are equal their ranks must be identical. Therefore, we add 25 and 26 which equal 51, and divide by 2, the result is 25½, the rank of each score In the case of Y and Z we add 2 and 3 and divide by 2, the answer being 2½, the ranks of the two scores of 80. Had three scores been identical, temporary ranks would have been added and the sum divided by 3 Likewise, with larger numbers of temporary ranks, the totals would be divided by the number of scores that were identical

   In arranging ranks according to quintiles, the total number of scores is divided by 5. In the case given here the quotient given is 5⅗. Any rank below or equal to

5⅗ is in the first quintile, any above this and not more than 11⅕ is in the second quintile, any score between 11⅕ and 16⅘ is in the third quintile Any score between 16⅘ and 22⅖ is in the fourth quintile, and any score between 22⅖ and 28 is in the fifth quintile. Here we come to the worksheet (shown below) for preparation of the scattergram (also shown below).

Pupils	Intel scores	Intel. ranks	Reading scores	Read ranks	Intel and read aver ranks	Subj scores	Subj ranks	Quintiles	
								I&R	Subj.
A	100	13	71	23	18	70	14	4	3
B	121	24	62	17	20½	94	27	4	5
C	82	4	46	6	5	48	2	1	1
D	98	12	51	9	10½	90	24	2	5
E	123	25½	74	24½	25	85	22	5	4
F	129	28	74	24½	26¼	68	13	5	3
G	84	5	43	4	4½	83	19½	1	4
H	102	14	55	12	13	66	12	3	3
I	104	15	65	19	17	84	21	4	4
J	119	23	68	20	21½	77	17	4	4
K	117	22	69	21	21½	95	28	4	5
L	86	6	52	10	8	62	9½	2	2
M	88	7	50	8	7½	62	9½	2	2
N	96	11	58	13	12	65	11	3	2
O	110	17½	60	15	16¼	91	25	3	5
P	110	17½	59	14	15¾	75	16	3	3
Q	116	21	64	18	19½	58	7	4	2
R	94	10	54	11	10½	57	6	2	2
S	90	8	45	5	6½	54	5	2	1
T	114	20	70	22	21	88	23	4	5
U	92	9	48	7	8	50	3	2	1
V	108	16	61	16	16	72	15	3	3
W	123	25½	78	28	26¾	92	26	5	5
X	125	27	77	27	27	59	8	5	2
Y	80	2½	38	1	1¾	83	19½	1	4
Z	80	2½	42	3	2¾	51	4	1	1
AB	78	1	39	2	1½	46	1	1	1
BC	112	19	75	26	22½	80	18	5	4

Capacity	Achievement				
	1	2	3	4	5
5		X	F	BC, E	W
4		Q	A	J, I	K, B, T
3		N	P, V, H		O
2	S, U	R, L, M			D
1	Z, C, AB			G, Y	

2. Select one of your classes, and prepare a scattergram Intelligence scores will probably be on file in the office. Reading scores may also be available. If not, you may give the Gates, Traxler, or Iowa test, or even an improvised test. Average the ranks in these two tests. Give an objective test in your subject. This may be a standardized test or one made by yourself. In either case it should be a valid test, that is, one that really measures achievement in the subject. Rank the pupils according to the scores in this test, and, using results of the three tests mentioned above, prepare a scattergram of your class. Be prepared to demonstrate in a faculty meeting the construction and use of the scattergram.

UNIT 20

The Capacity-Achievement Report

While the scattergram is helpful in reminding the teacher that certain pupils' abilities and achievements are out of line, it is not a tool that can be used to remind the pupil of his dislocation. Such a report, however, can be prepared and has been found extremely useful in adjusting an individual pupil's achievement to his capacity. A report form of this type with its construction and its application is given below

The reader will observe that there are nine quintile spaces on the capacity-achievement chart instead of the five that might be expected. The explanation is as follows: The middle quintile or "capacity area" represents the capacity of any pupil regardless of his level of ability or the subject involved. A look at the scattergram will indicate that a pupil's achievement may be three quintiles away from his ability (see S. K. on the scattergram in the fifth quintile in capacity and the second quintile in accomplishment) or,

CAPACITY-ACHIEVEMENT REPORT

School ____

Pupil ____________________________________ Age ____ Grade ______

Homeroom or Core Teacher ____________________________ Date ______

Subjects	English	Mathematics	Science	Social Studies	Foreign Language	Reading				
4										
3										
2										
1										
Capacity area										
-1										
-2										
-3										
-4										

<u>General level of your ability</u>

Your ability in different subjects may not be the same The fact that the capacity area is straight does not indicate equality. It merely gives your teacher a starting point for your graph.

If your graph is below the capacity area in any subject, you should study the situation to discover why If necessary, you should discuss it with your homeroom teacher and next with your class teacher If your graph goes much <u>above</u> the capacity area in any subject and below in another, you should probably plan to distribute your time more wisely

Teacher Comments

in an extreme case, as much as four quintiles The chart shown provides for these wide deviations.

The principal should have a supply of capacity-achievement blanks on hand for the use of homeroom teachers and counselors. Preparation of the report for a pupil takes very little time.

The capacity area represents a quintile If the pupil's accomplishment is within the quintile of his ability, it is regarded as satisfactory. However, the pupil's approximate location in the quintile should be shown The farther the achievement graph is from the capacity area, the more serious is the problem.

The graph shown is that of James Carson. He is doing better than is expected in mathematics, and his work in science and social studies is satisfactory. However, his work in linguistic studies is three quintiles lower than is to be expected and in English and reading one quintile lower. Possibly he likes mathematics, dislikes English, reading, and foreign languages, and does not distribute his time wisely Whatever the cause, he should ask for a conference with his teacher.

Examples of the Use of the Capacity-Achievement Report

1 For an illustration of the capacity-achievement report, refer to the scattergram and locate J. E., James Egan. He is found to be in the fourth quintile in ability to learn but in only the second quintile in accomplishment in history. Now, no matter how high or how low his ability, it is assumed to be represented by and located in the middle quintile (capacity area). His accomplishment in history, then, is represented by a point in the second quintile below the capacity area. Where this will be located in the quintile will depend on the seriousness of the deviation of his accomplishment

from his capacity. It is possible for him to be only slightly over the line into the second quintile or deep into it.

What shall be the treatment of James Egan? That will depend on a number of conditions. If his accomplishment is noticeably above his capacity in some other subjects, it may be desirable to help him in distributing his time more equitably. If he has not learned to read intelligently in history, this problem should have attention It is hardly necessary to remind teachers of any subject that one of the first things to do in starting a new class is to determine the reading ability of every pupil in that particular subject. If he just dislikes the subject, the teacher should study the methods used, the pupil's background, and the possibilities of arousing interest. These are only three of many suggestions that may be effective.

2 One more case that illustrates the use of the capacity-achievement report is found on the scattergram. It is that of S. L , Sarah Long. Sarah is in the lowest fifth in ability to learn but in the third fifth in her accomplishment in history. If the tests she has taken are valid, she is accomplishing considerably above her capacity. Her capacity, again, is represented by the quintile known as the "capacity area." This is not to be confused with the idea that her capacity is the same as that of James Egan, who is located in the same area In her case, accomplishment in history is indicated by a dot in the second quintile above the capacity area. The report tells that she is accomplishing work in history that is far above her capacity, and here is an implied suggestion that the teacher and pupil should investigate the situation. She may be especially interested in history and giving it too much time. She may have been reading history for years as a hobby. Her reading ability in history may be much greater than her reading ability in some other fields This may be a fine feature and merit encouragement on the teacher's part On the other hand, she may be neglecting

subjects or activities that are desirable in her development. She may be overstudying this subject, and perhaps others, to the detriment of her health. The above are only a few of the possibilities in understanding this case.

In each of the preceding cases, the capacity-achievement report provides an excellent background for the discussion of the problem by the teacher and the pupil. While it is not always necessary or perhaps desirable for the report to be taken home, it will be very helpful in any home where the parents are understanding people.

It is not expected that a capacity-achievement report will be given to every pupil. For instance, 16 of the 30 pupils appearing on the scattergram will not receive one. Likewise, perhaps a number of others not quite in line will be handled without the help of this report. However, in each class there are likely to be a few who will profit by its use. The capacity-achievement report is a very simple device. Every homeroom teacher should have a supply of printed blank copies on one of which she can very quickly sketch a picture of a pupil's capacity-achievement status.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. The purpose of the capacity-achievement report is to bring squarely to the attention of the pupil his achievement status as compared with his capacities. Try to devise a capacity-achievement report different from the one presented here.
2. Debate in a faculty meeting the subject: *Resolved,* That thousands of dollars are being wasted every year by our failure to hold pupils up to their capacities.
3. Debate the subject: *Resolved,* That the loss in human happiness every year by our attempts to have pupils live up to a set average cannot be measured in dollars.

UNIT 21

The Report to Parents

Cooperation between teacher and parent is indispensable in any successful school program, and the so-called "report to parents" is one of the important means of keeping this contact effective.

The traditional report to parents, which gives a pupil an A, B, C, D, or E, or 100, 90, 80, 70, or 60, originated in the high school that taught only a select group of pupils, nearly all of whom planned to go to college. If they were to get into college on the basis of their grades, those grades had to compare them with their schoolmates and eliminate those too weak to do college work. To be sure, some of them became disappointed and discouraged, and for some, no doubt, the system was unfair, but the scheme served pretty well.

The teacher should be reminded that in 1880, when nearly all high school pupils were looking forward to college entrance, only 100,000 pupils were enrolled in the public high schools of the United States. In 1890, the number had doubled, in 1900 it had risen to 500,000. By 1940, more than 7,000,000 pupils were enrolled.

But as the number grew and every man's child was going to high school regardless of his capacity and financial ability to attend college, the percentage of high school graduates entering college had dropped to 15. This means that 85 per cent of the graduates do not attend college. This does not, however, include the many thousands of pupils who because of discouragement or other reasons drop out of school and in most cases are lost in the whirlpool of humanity. Most schools do not follow them up, and in some cases there are evidences of relief when their names are removed from the rolls.

In any high school of considerable size, one finds pupils of from very low to very high scholastic aptitude. In some schools, but not in large numbers, pupils are grouped homogeneously, usually according to scholastic aptitude. This furnishes some relief from the strenuous competition, but even in this situation wide variations in ability are found. Comparing a pupil with his classmates even in this situation may be unfortunate and unfair.

Grading systems that compare pupils of high and low abilities to the discredit of the latter have been instrumental in bringing on many tragedies among adolescent youth. Of poignant memory to the author was the adolescent who tried ever so hard to get grades satisfactory to his parents. When, after all his struggle, he brought home three failing marks out of four, he went to his room and took the only path that appeared open to him—suicide. Another case is that of a girl of limited ability who had a brilliant sister. Her parents continually pointed to her sister and told her that she could do as well if she only tried. They didn't realize, apparently, that she was already working far harder than she should. This case was approaching a tragic conclusion when the unfortunate girl told her plans to a sympathetic and wise counselor. The counselor visited the home, and laid the

problem bare before the parents. She told them that the girl was about to take her own life because she could not do what they expected of her. The parents were told of their daughter's limited ability, and the recommendation was made that she be placed in a curriculum in which her ability would enable her to succeed. Here, to be sure, she was not a high-grade student and did not receive honor grades; but she was encouraged at home, and she gradually attained satisfactory adjustment.

There is no intention to convey the impression that all low-grade pupils when compared with their classmates contemplate self-destruction. Many seem to accept the fact with equanimity, and many others attempt to compensate by conduct which is considered antisocial The very fact that a pupil who works hard has to be compared with one who performs far below his capacity is not likely to bring happiness to the less able pupil.

But very often the damage to the brighter pupil is even greater. Where pupils of all levels of ability are graded in comparison one with the other, the standard for the school is likely to strike a level far below the best that the capable pupil can do. He may develop lazy habits and, although he may be receiving the highest grade the school gives, he is deteriorating because he is not using his talents. The most retarded pupil in many a school is the most able pupil who is wasting his time and failing to live up to his possibilities.

The report to parents shown below is radically different from the traditional one and is intended to correct the difficulties involved in the comparison of each pupil with every other pupil, regardless of the capacity of any one. This report provides for comparing a pupil's achievement with his capacity to achieve. It is with the idea, then, of encouraging every pupil to live up to his best, regardless of the level of his capacity, that the report to parents is presented

REPORT TO PARENTS
Junior or Senior High School

School ______________________ Homeroom Teacher ______________________

Pupil ______________________________ Age ________ Grade ________

To Parents Reports on pupils' [illegible] only in terms of satisfactory [illegible] e is achieving on approximat [illegible] what he should be expected t [illegible] lom mean the same thing in [illegible] The work of any pupil who is doing his best is considered satisfactory regardless of the quality of the work

Subjects (Kind and Year)	1st Period	2nd Period	3rd Period	Final 1st Sem	4th Period	5th Period	6th Period	Final for Year
English I								
Days absent								
Times tardy								

Probable reasons for unsatisfactory work
1 Ill health
2 Absence
3 Lack of interest
4 Out-of-school duties
5 Too many extra-curricular activities
6 Lack of effort
7 Lack of reading ability
8 Poor study habits
9 ______________
10 ______________ etc.
(Additional causes may be listed by the teacher)

Where it is believed that unsatisfactory work is due to one or more of the causes listed above, the number or numbers of the cause or causes are written into the square containing a U In any case, when a pupil receives a U, it is wise for the parent to see the homeroom teacher If a pupil is achieving beyond what should be expected of him, the teacher should mark him S+ This means that the parent should make an appointment for a conference with the homeroom teacher

Signature of parent

1 ______________________
2 ______________________
3 ______________________
4 ______________________
5 ______________________
6 ______________________

(*Note* The parent's signature indicates merely that he has seen this report and not that he approves of it)

(See other side)

(Back of Report to Parents)

COMMENTS ON PUPIL PROGRESS

By homeroom teacher: **By parent:**

Period

1 . . . .

2 . . . .

3 . . . .

4 . . . .

5 . . . .

6 . . . .

This report covers mainly the academic progress of your child If you are concerned about his social and personal traits, work habits, etc., you are invited to write or call the school or, better, visit the principal and the homeroom teacher

If the pupil is living up to his capacity, his mark is S (satisfactory), no matter what grade of work is done. For the brilliant student, this means work of high quality and sufficient quantity. For the pupil of limited capacity, the quality and quantity may be much lower. Yet in each case the work is satisfactory, that is, the pupil is doing his best. The teacher will find the determination of what is *satisfactory* work much easier if she uses the scattergram, and the pupil will be more successfully handled if the teacher make use of the *capacity-achievement report*.

The mark of U (unsatisfactory) is given to that pupil who is performing below his capacity. Again, evidence is presented by the two forms just mentioned.

Here, however, a scheme is provided for the teacher to indicate what she believes to be the reason or reasons why the pupil is not matching accomplishment with capacity. If she finds on the card a reason for unsatisfactory work which she believes is valid in this case, she puts into the space with the U the number of that reason For instance, if she believes that lack of interest is the reason for poor work, she puts the number 3 in the space It is entirely possible that she may consider that the poor work has behind it a number of causes, and in such a case more than one number will appear with the U.

There is another mark which may be significant. If the teacher believes a pupil is achieving results beyond his capacity, she may give him a mark of S and place a plus (+) after it in the square. This indicates a situation serious enough to justify a conference with one or both parents and signifies a request for such a conference.

The question will immediately arise as to how you will report to colleges those few pupils who continue into higher education. The suggestion made elsewhere in this volume that pupils be recommended to college on the basis of com-

parisons with other members of their own school as well as with persons throughout the country is a valid one In these days very few schools should be found that do not give all their pupils at least a standardized scholastic aptitude test. The pupil's rank in his class on such a test and his percentile rank in comparison with pupils on a nationwide basis will be very helpful here. Add to that his rank on standardized subject matter tests and the consensus of opinion of his teachers as to his ability to do college work and the matter of recommending him to college is practically solved as far as scholastic aptitude is concerned. To be sure, he must have more than scholarship if he is to be a successful college student, but at this time we are considering only scholastic aptitude.

It is pertinent here to refer to the matter of tests which pupils take, either standardized or homemade. It should be emphasized that the exact score of every pupil be recorded, no matter how low it is. This, as well as any comparative scores which are recorded for use in recommending him to college or a prospective employer, should be filed in his cumulative folder Such scores or comparisons should not be posted or in any way given to other pupils in the school. A pupil may be given his score but with the suggestion that he may want to keep the information to himself.

The question may be raised as to whether a pupil should ever be required to repeat a course The answer is that he will repeat a course when, in the opinion of his classroom teacher, his homeroom teacher, and the principal, it will be more profitable for him to take that course again than to go on to additional work in that subject or in some other one.

It will be observed that the report card shown here does not list character traits and habits such as are given on many present-day reports to parents. The reason is that in most cases such ratings are made by only one person and may

DENVER PUBLIC SCHOOLS

REPORT TO PARENTS

Student's Name ____________________ Grade ________

____
(School)
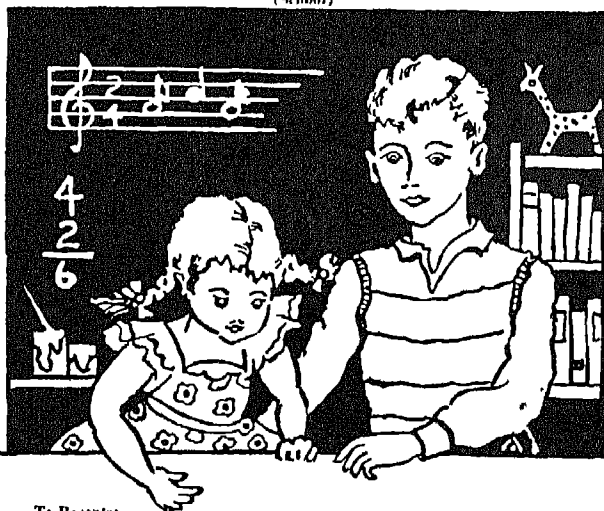
To Parents:

At school we are trying, as you are in the home, to direct the growth of your child so that he may live wholesomely and effectively as an individual and as a member of a democratic group. Democracy is a way of living that demands the highest physical, emotional, social and intellectual development of each member.

Children differ in interests, abilities, past experiences, and the rate at which they grow.

Teacher ____________________

Principal ____________________

Semester ending ____________________

Assignment for next semester ____________________

Used with permission

Personal and Social Development	FIRST	SECOND
PHYSICAL DEVELOPMENT		
Seems to have good general health and energy Practices good health habits Shows physical skill and coordination		
SOCIAL ADJUSTMENT		
Gets along well with others Does his share in a group activity Accepts authority Shows leadership		
PERSONAL RESPONSIBILITY AND SELF-DIRECTION		
Thinks for himself Shows self-confidence and poise Cares for property Is creative and resourceful Has a variety of interests		
WORK HABITS		

Listens and follows directions
Has materials ready and starts promptly
Finishes work on time
Takes pride in neat and accurate work

SCHOOL ATTENDANCE

IS AT HIS BEST IN

SHOWS GREATEST NEED FOR IMPROVEMENT IN

Explanation of marks

1 excellent
2 good
3 average
4 lowest passing mark

DENVER PUBLIC SCHOOLS

REPORT TO PARENTS

Student's Name . . . Grade . ...

Progress in Subject Fields	FIRST	SECOND
SPEAKING		
Expresses ideas well Speaks clearly Uses correct forms of English		
READING		
Shows growth in reading skills Reads with understanding Reads widely		
WRITING		
Expresses ideas well Shows creative ability and imagination Writes legibly Spells correctly in written work		
SOCIAL STUDIES		
Is aware of the problems of the class and is interested in solving them Contributes to the planning of activities Gathers pertinent information Draws valid conclusions Organizes and presents materials Builds new understandings into everyday living		
ART		
Enjoys art activities Shows creative ability Shows skill in handling tools and materials		
MUSIC		
Enjoys singing Is learning to read music Enjoys listening to music		
ARITHMETIC		

Uses numbers readily
Is learning number facts and processes
Can use numbers in solving problems

Personal and Social Development

	FIRST	SECOND
PHYSICAL DEVELOPMENT		
Seems to have good general health and energy Practices good health habits Shows physical skill and coordination		
SOCIAL ADJUSTMENT		
Gets along well with others Does his share in a group activity Accepts authority Shows leadership		
PERSONAL RESPONSIBILITY AND SELF-DIRECTION		
Thinks for himself Shows self-confidence and poise Cares for property Is creative and resourceful Has a variety of interests		
WORK HABITS		

Listens and follows directions
Has materials ready and starts promptly
Finishes work on time
Takes pride in neat and accurate work

SCHOOL ATTENDANCE

IS AT HIS BEST IN

SHOWS GREATEST NEED FOR IMPROVEMENT IN

Explanation of marks

1 excellent
2. good
3 average
4, lowest passing mark

DENVER PUBLIC SCHOOLS

REPORT TO PARENTS

Student's Name . . . . Grade . . . .

Progress in Subject Fields	FIRST	SECOND
SPEAKING		
Expresses ideas well		
Speaks clearly		
Uses correct forms of English		
READING		
Shows growth in reading skills		
Reads with understanding		
Reads widely		
WRITING		
Expresses ideas well		
Shows creative ability and imagination		
Writes legibly		
Spells correctly in written work		
SOCIAL STUDIES		
Is aware of the problems of the class and is interested in solving them		
Contributes to the planning of activities		
Gathers pertinent information		
Draws valid conclusions		
Organizes and presents materials		
Builds new understandings into everyday living		
ART		
Enjoys art activities		
Shows creative ability		
Shows skill in handling tools and materials		
MUSIC		
Enjoys singing		
Is learning to read music		
Enjoys listening to music		
ARITHMETIC		
Uses numbers readily		
Is learning number facts and processes		
Can use numbers in solving problems		

SUGGESTIONS TO PARENTS

The value of this report depends largely upon the attention you give it

Talk it over with your child

Visit your child in his classroom Arrange for a conference with the teacher

Help your child select his books, radio programs, movies, and other leisure time activities

Write your comments and suggestions, and sign this card before returning it

TEACHER'S COMMENTS

PARENT'S COMMENTS

Parent's Signature

FORM 400 A EP DSP 6 47 15M L 359 52381

have much less validity than is desirable Furthermore, the program of guidance proposed here provides for anecdotal records and a relatively valid system of personality rating. The suggested card provides, also, for comments at each report period by both the teacher and the parent and makes the suggestion that they meet for discussion of serious problems.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1 The report to parents (pp. 225–228) was developed cooperatively by the elementary school principals of one of America's outstanding school systems. Criticize it from the standpoint of the following. (*a*) items included, (*b*) work required on the part of teachers, and (*c*) keeping pupils' accomplishments near to capacities.
2 Criticize the report recommended in this unit by the criteria suggested in paragraph 1 above
3. Criticize the report to parents now used in your school by the above criteria
4 Suggest a method for keeping the record recommended here with the smallest amount of work on the part of teachers.

BIBLIOGRAPHY

DEZOUCHE, DOROTHY: "The Wound Is Mortal," *Clearing House,* Vol. 19, pp. 339–344, February, 1945. The author presents in tonic language her vigorous reactions to marks, honors, and unsound activities, the "three horrors of teaching." The giving of grades heads the list. Coaching pupils for competitive honors follows close on its heels, as the "second atrocity." With a plea against labeling a pupil and for teaching cooperation rather than competition, Miss DeZouche maintains it

is a fine thing to develop leadership in a dozen children, but it is not a fine thing to leave the remaining 1,488 on the sidelines for their entire school life. The third "horror" commented on is directing any activity "socially harmful or educationally unsound."

JOHNSON, C. S.: "Parents Help Plan Report Cards," *Nation's Schools,* Vol 38, pp. 45–46, July, 1946. Believing that the "point of view of parents should weigh heavily in deciding school policies and that a sound working relationship between home and school is vital in the education of youth," the author, a supervising principal, invited carefully selected parents to work with the junior high school report card committee. Newspaper articles, classroom discussions, and a letter to parents told of the new resulting report card and invited comments and suggestions. The final form of the report to parents is illustrated.

MACKENZIE, C.. "Report Cards for Parents," *The New York Times Magazine,* June 16, 1946, p. 34. This is a different kind of report card, worked out by the chairman of a youth committee on vocational guidance, with the aim of bringing home to parents the fact that home influences bear directly on a child's school report card This card is for the parents to rate themselves; the ratings on 10 points of parents' attitudes toward the child's report card is short, to the point, and easy to do The author of the card reports that parents are "very honest about it" and that it has been found "useful and effective." The card is illustrated. A good idea!

PETERSON, S A.: "Reports to the Home," *Clearing House,* Vol. 13, pp. 67–72, October, 1938 After discussing developments in reporting systems used successfully in various sections of the country, the author lists 11 ideas that seem to him to answer the needs of a good reporting and grading system

Roberts, Roland. "Report to the Public," *School Executive,* Vol 66, pp 30–31, August, 1947 This is a different kind of school report. It is addressed to the general public as well as to parents, is published in a special school edition of a rural weekly newspaper, and is excellently illustrated A brief letter on the front page explains the issue as a "pictorial review" of the Kentucky County School System and expresses the hope that, as a result of the report, parents will visit the schools more frequently and will offer "helpful and constructive criticism" As the superintendent says, people look at pictures even if they do not read the articles, and the pictures selected present a vivid report of the school system. Ten statistics which complete the report are ones the school system should know and are chosen for a particular audience, the readers of a rural weekly newspaper in a county where there are some 2,000 pupils and where only 12 schools have electric lights Schools of far larger enrollments might well follow this effective plan.

Stiles, L. J.: "Up to Date Reporting," *School Executive,* Vol. 65, pp. 50–52, January, 1946. A system of reporting pupil progress to parents was developed by a teacher of Boulder and has been used successfully for 4 years Several advantages of such a report are noted by the author and illustrations of the various pages of the report card used are given

Sugden, W. E.: "Achievement Record vs Report Card," *School Executive,* Vol 66, p 34, July, 1947. The author tells of a new reporting scheme in an Illinois school system whereby each pupil receives a separate achievement card for each subject. The plan was worked out through cooperative studies of parents and teachers and takes cognizance of the "important factor of individual differences" Details of the cards are given.

UNIT 22

Helping Pupils to Choose Curricula

The tendency today is for a large part of the secondary school program of studies to be general and required. This relieves the school of much labor in connection with assignment of pupils to school programs. The pupil takes these basic courses without question and without much guidance The problem of guidance arises, however, when he chooses the minor part of his program—that which may be designated *special* or *vocational* This part of the pupil's school program is probably closely related to his life career, whether it involves higher education or entering a job at the end of the high school course.

In some schools, pupils enter the ninth grade on the Tuesday following Labor Day and find their program cards carefully made out for them. The number of curricula is limited, and the number of pupils large. This is a very simple problem The classes are organized at about the normal size, new books (or old ones) are given out, the teachers make their assignments, and all is well, apparently. Before the end of the week, however, the story is different Pupils have been assigned to subjects that are difficult for them,

and the teachers have made assignments that do not differentiate between strong students and weak ones. Classes are large, and individual attention is difficult. Pupils begin to flounder and in many cases continue to flounder until the end of the semester or year. One boy of low scholastic aptitude, who was taking shorthand and completely baffled by it, was asked why he didn't change to another subject His reply was that the only other subject he could take was French. Thus he would have been hopping from the frying pan into the fire. Here was just another case where guidance was not functioning in the choice of curricula and courses It was a very nice-looking program of studies, but it just did not work. The school instead of the pupil was the chief concern.

At the risk of "carrying coals to Newcastle" we present here the type of program that would have obviated the situation outlined above. When these pupils entered the first grade, they should have had an intelligence test or reading readiness test which would have helped to determine whether they were ready for school and something of their probable progress through school At the entrance to the fourth or fifth grades, they should have had another scholastic aptitude test and from time to time subject matter tests, mainly diagnostic, in order that their teachers might know their weaknesses and endeavor to do the remedial work necessary. Sometime during the eighth grade (for this was an eight-four school program), they should have had another scholastic aptitude (or intelligence) test and some comprehensive subject matter test, such as the Stanford Achievement Test or the Metropolitan Achievement Test. On the basis of these findings, along with the pupil's scholastic record over the past 8 years and the numerous other bits of information based on his personality, his activities, teachers' observations, and conferences with parents, the school

should have prepared for him a profile or story which his parents could understand. Then the parents should have been called in for a conference on his aptitudes and probabilities of success on various levels of scholastic endeavor, as well as something of what he might possibly want to point to as a vocation.

On the basis of the information obtained from a large number of pupils of all levels of ability and types of personality and aptitude, which runs fairly uniform in a given community from year to year, the school authorities should have sat down together months previously and taken stock of the situation. With the facts at hand they should have said. "Now, here are so many pupils of these various personalities, abilities, needs, and roughly probable futures. What kind of school program will best suit their needs?" Then there should have been a serious attempt to answer this question. When such a program had been prepared, the parents of every entering pupil should have been sent an invitation to visit the school and to consider with the school authorities the needs, capacities, and future of their children. No pupil's program should have been approved by the school until it had the understanding approval of the parent, unless the parent was definitely opposed to what the school believed to be the best interests of the pupil.

When a pupil enters a secondary school, he should be immediately assigned to a teacher who will, preferably, continue as his adviser throughout his stay in the school. This adviser (call him what you will—homeroom teacher, class adviser, or counselor) should have in a folder the complete school history of the pupil, including scholastic record test results, home background, extracurricular activities, teachers' ratings, teachers' statements of his activities (anecdotal records), parents' opinions, and many other types of information.

But proper admission to secondary school does not guar-

antee that the curriculum problems are permanently solved. It is always possible that a mistake was made in the original assignment and an adjustment must be made. Again, the pupil may have the ability and interest but not the ambition Or, he may not have learned to study. It may even be that he has become too much interested in extracurricular activities or a girl. He may become more interested in mischief in class than in being a successful student Any of these problems and many others may require the services of an interested adviser. The solution may involve a change in curriculum It may mean learning how to study or just getting his conduct readjusted or his time budgeted. Consideration and solution of the problems listed above are classed under *educational guidance.*

QUESTIONS AND PROBLEMS

1 This unit has dealt with the problem of helping pupils to choose curricula It has said nothing about the teachers' helping to build curricula for pupils to choose or about enlisting the help of pupils and parents in the program of curriculum building. No program of guidance can be complete without machinery for revision of curricula as the needs of pupils and the demands of society change Suggest a school organization for continuous revision of curricula as conditions change, which will bring into the revision program teachers, pupils, parents, and community leaders.
2. Rufus Simpson had his curriculum changed at the end of his sophomore year. He decides during his junior year that his second choice has not been a wise one. The curriculum he thinks he now wants is not offered in this school How would you approach his problem and try to solve it?

UNIT 23

Correcting Educational Defects

In the discussion of the scattergram, we learned how a teacher may single out pupils who are not matching accomplishment with ability. The capacity-achievement report is a device which assists the teacher and the individual pupil to face the facts of the pupil's accomplishment in relation to his capacity. The report to parents presents to the parents the accomplishment of the pupil in relation to his capacity But it does one thing more It shows what the teacher believes to be the reasons why a pupil is not living up to his capacity, when that is the case. The reasons given include ill health, absence from school, lack of interest, out-of-school duties, too many extracurricular activities, lack of effort, poor reading ability, and poor study habits. Space on the card allows the teacher to list additional items which she believes affect his work adversely.

But these suggested reasons for work below the pupil's capacity are those which the teacher *believes* to be correct. In some cases she may be wrong. How can the teacher decrease the likelihood that her judgments are in error? Here enter the techniques of diagnosis and remedial work There

are few subjects in which these two processes are not essential. In any subject, the approach to ineffective learning should be to find out what the trouble is and to attempt to provide a remedy for the difficulty. Morrison[1] recommends the "mastery formula," which reads. "Pretest, teach, test the result, adapt procedure, teach and test again to the point of actual learning" He continues, "It will be noted that this is precisely the procedure adopted by other practitioners who work in the field of organic changes. The physician, for instance, who undertakes the cure of a patient, first makes his diagnosis, then formulates and applies treatment, then tests the results of his treatment, modifies treatment in accordance with his test results, and so on to success or failure. Even if he fails, the physician is eager to know *why* he failed"

The authors are glad to bring the above quotation from Dr. Morrison's book to the attention of the reader. His book is probably the best that has been written on high school teaching It is recommended, also, for its suggestions in Part IV in regard to many problems in pupil personnel work.

Reading

The necessity of doing something about reading difficulties is highlighted by the fact, as indicated by many studies, that junior and senior high school pupils range in reading ability from third grade up If any degree of success in high school is to be attained by such children, they must learn to read. Moreover, plenty of evidence is at hand that defective reading can be improved Although cases are reported in which pupils under remedial treatment have gained as much as four school grades in 1 year, perhaps as convincing

[1] H. C. Morrison, *The Practice of Teaching in Secondary Schools*, University of Chicago Press, Chicago, 1931

evidence as is available is contained in the report of a remedial reading project in the New York City high schools, involving more than 2,200 pupils. Under this program these pupils raised their average reading grade level from 7.5 in September, 1937, to 8.6 in January, 1938. This improvement is nearly three times that which is normally expected.

It is exceedingly important to correct defects in reading, since probably 90 per cent of the learning in secondary schools is largely dependent on this skill. Therefore, few teachers on this level will expect success in most subjects for pupils who are not able to read the subject materials reasonably well. Hence, a recommendation that is almost mandatory for any teacher who expects effective learning on the part of her pupils: a reading test in the subject being taught. The test will be of little value except to point out poor readers, but this is a preliminary to corrective procedures.

What type of test should she use? A simple suggestion has been found in many discussions of the subject, and it has been tried by numerous teachers: Ask every pupil to start reading in his textbook material not read before by any members of the class. All pupils should begin reading at the same point in the book and read until told to stop. When the stop signal is given, every pupil should circle the last word he read. Instructions should include the statement that each pupil should read at the rate at which he can understand what he reads. After the reading, a number of objective questions should be given to all pupils, the questions extending over the materials that are likely to be read by the best readers. When answers have been scored, the pupils may be ranked in speed and comprehension.

This method of locating poor readers can be supplemented by observing pupils to see how they behave when reading. Poor readers will turn the pages slowly, be restless and fidgety, and perhaps point to words as they read. Also, the

teacher can find out if and what a pupil likes to read and what books, stories, and articles he reads. It may be discovered that a pupil reads one type of material better than another. A good deal of attention in recent years has been given to discovery of reading defects by observation of eye movements The opthalmograph, a binocular camera for photographing eye movements, is used in many reading laboratories There are other and less expensive methods of observing eye movements. One is known as the "peep-hole test," in which the teacher holds before the pupil a card containing reading materials. While the pupil reads material on the card, the teacher, who faces him, looks through a hole in the card about 3/16 inch in diameter and observes the rapidity of the movements of his eyes. It is feasible, also, for the teacher to stand behind the pupil as he reads a book and observe his eye movements through a small mirror placed on the page of the book that he is not at that time reading Pupils who have many eye movements are poor readers. Good readers have few eye movements.

After the pupil's deficiency in reading is established, it is well to give one or more diagnostic tests to discover specific difficulties. Probably the most used diagnostic tests are the Iowa Silent Reading Tests,[2] elementary and advanced, and the Traxler tests for grades 7 to 10 and grades 10, 11, and 12 The Iowa elementary test measures rate of comprehension, directed reading, word meaning, paragraph comprehension, sentence meaning, ability to alphabetize, and ability to use an index The advanced test measures the above and in addition grade equivalents from 2 to 16 3 are given for the elementary test and percentiles for the advanced.

The Traxler Silent Reading Test[3] for grades 7 to 10

[2] The Iowa Reading Tests are published by the World Book Company, Yonkers, N. Y.

[3] The Traxler Reading Tests are published by the Public School Publishing Company, Bloomington, Ill

measures rate, story comprehension, word meaning, and paragraph comprehension. The Traxler High School Reading Test measures rate of reading, story comprehension, and finding the main ideas in paragraphs. In the future, it will have a vocabulary test.

A test which has recently come into extensive use is the Gates Reading Survey[4] for grades 3 to 10. It measures vocabulary, power or level of comprehension, speed, and accuracy A desirable feature of this test is that there are no time limits for the vocabulary and comprehension tests.

When a pupil's reading difficulties have been discovered, what can be done about them? Only a few suggestions can be listed here

If the pupil has poor eyesight, this can usually be corrected by fitting with proper glasses. If he is making too many eye movements, he can be trained to slow them down. If his difficulty is lack of speed, he can be trained to increase his speed by use of a machine called the "metronoscope," which moves the reading material out of the pupil's range of vision at a certain speed and thereby hurries his reading. It can be set to move at a considerable range of speeds. Since only one line at a time is seen by a pupil, however, the situation is not an entirely natural one. It is possible also for the teacher to move a large card down the page covering all that has been read so far and forcing the pupil to increase his speed if he wishes to gather the meaning of the material. This is sometimes called the "push-card" method.

However, one of the best methods of increasing reading speed is for the pupil to push himself to the limit. The pupil should practice trying to grasp an entire phrase at a time and proceed from there to entire lines and sentences Even learning to skim may increase his speed materially.

[4] The Gates test is published by the Bureau of Publications, Teachers College, Columbia University, New York

Grasping the topic sentence of a paragraph usually gives a good idea of what is in it. A pupil who reads the preface of a book may have a pretty good idea of its central idea Reading a book's contents carefully and checking divisions of chapters will also speed up understanding.

To improve the understanding of materials in any subject, attention should first be given to the vocabulary in that subject. It is a simple matter for a teacher to prepare a vocabulary test in her subject. It would not need to be prepared anew each time the subject was taught, but it might be revised from year to year as the subject developed When weaknesses in subject vocabulary are known, techniques for correcting them can be worked out. Other remedial methods include practice in reading to comprehend, to search out details, to get the central idea, and to find topic sentences.

But the best method of correcting reading defects is reading. Poor readers read very little and, conversely, persons who read very little are usually poor readers. Hence, the teacher who finds that pupils are poor readers should endeavor to induce them to read extensively. Any of the tests already mentioned will give an idea of the school grade in which a pupil's reading would place him To get a pupil to read, the teacher may select such techniques as the following: Learn in what school grade a pupil's reading places him, and see that he has plenty of attractive reading matter of that level of difficulty In one school, for instance, the teacher indicates, by a sign unknown to the pupil when he goes to the library for books, something of his difficulty. The librarian takes special interest in the case and tries to recommend books she believes will interest him and that he can read.

The pupils' interests should have a big place in the selection of books. A questionnaire on the types of books a pupil

likes and the specific books he has read lately will form the background for book recommendations Many teachers give pupils "big-little" books, because they are always easy to read and are brief enough to enable a poor reader to complete one in a reasonably short time. Furthermore, the vocabulary is seldom above fifth-grade level *Free-reading* periods, recommended strongly by Morrison [5] for all pupils, are specially helpful for poor readers.

In this training, book reviews should never be required, but the pupils should be encouraged to indicate on cards the books they have read and encouraged, but not required, to tell something about the books. In other words, reading must be an enjoyable exercise. A poor reader is not likely to find it very enjoyable if he is dreading the possible consequences.

It would be interesting and helpful if we could go into the subject of remedial reading much more extensively. However, this subject is only one among many in this volume, and it can merely be introduced. It should be mentioned, however, that reading difficulty is only one item in an entire situation. It may be a cause or an effect of a personality difficulty. A pupil with a decided inferiority feeling may have his reading adversely affected by it On the other hand, if he is a poor reader, he is frequently removed from the social contacts he desires, becomes ingrown, and develops feelings of inferiority and of not belonging The cause may be poor eyesight, poor hearing, speech defects, no reading facilities or incentives at home, or the most meager ones at school; it may be an inherited low mental ability, or poor teaching in the early grades. Whatever the cause, the teacher will meet the pupil as another person who has a problem to solve, and who presents a challenge to her scientific approach to problems. If she maintains such an

[5] Morrison, *op cit*

attitude, the pupil is fortunate. If she happens to be a person who "treats 'em all alike," then Heaven help the children!

Language

Whether correct speech and writing are essential to a young person's success depends to a considerable extent on the education and training of the persons with whom he regularly associates The writer remembers the owner and manager of a farmers' market who dealt largely with illiterate persons and who was financially very successful Relatively few persons who attended the market were concerned about the English used by the proprietor.

An opposite case comes to mind. A young woman of unusually high intelligence commuted from this same community to college Her unfortunate habits of speech were so definitely fixed that the author recalls four errors in speech made by this young woman in three consecutive sentences the day following her initiation into Phi Beta Kappa. (And she was an English major!) The best proposal, then, is that children, no matter what their background or future situation, have bad English habits corrected to the degree possible with the individual capabilities and home and community surroundings.

Perhaps the best suggestion here is that every teacher of all pupils, regardless of the subject taught, be careful with his own English and appoint himself a teacher of "remedial English." Of pleasant memory is the lady, now retired, who made correct speech an important feature of her algebra class Many a professor of education, trained in effective speech, has made correct speech a part of his course in education, regardless of the course title, for prospective teachers frequently come from homes and communities not noted for purity of speech.

While it is realized that the young person looking for a job will find that his personality and character are of first importance, it must be acknowledged that employers complain bitterly of the lack of ability of employees to use the bare fundamentals of an education communication and number. And our educational experts today are emphasizing that in too many cases these fundamentals are not mastered in the elementary school. If taught at all, then it must be in the secondary school.

How shall defects in spoken English be detected? Any teacher can easily jot down errors in spoken English as they are made in class or in other school exercises. One teacher kept a vest-pocket book which he called his "Joke Book," where he regularly wrote pupils' speech errors. He did not try to conceal the fact that he had heard a "good one," as he wrote it in the book, but he never wrote it immediately after the mistake was made. He waited until there was little chance of identification of the person who made the error. His pupils always considered it a red-letter day when he took time out to conduct a game with these "jokes."

What are the most common errors in spoken English? Lyman[7] studied such errors among school children in four widely scattered cities and in consolidated schools in Iowa He found the seventeen most common errors to be the following: (1) Ain't, hain't, (2) Saw and seen; (3) Plural subject with singular verb, (4) Double negative; (5) Have got; (6) Come and came, (7) Git; (8) Them and those, (9) Teach and learn, (10) Can and may, (11) Do, did, done, (12) *And* for *to* with infinitive; e g., Try *and* for try *to;* (13) Shall and will; (14) Go, went, gone; (15) Subject of verb not

[7] R. L. Lyman, *Summary of Investigations Relating to Grammar, Language and Composition, Supplementary Educational Monographs,* No. 36, p. 72, The University of Chicago Press, Chicago, 1929.

in nominating case, (16) I and my brother; (17) Frank and me, in nominative case.

To detect errors in written English, teachers should check compositions, examination papers, and other informal writings by pupils. They may also use standard diagnostic tests such as the Barrett-Ryan-Schrammel English Test.[8] It measures sentence structure, grammatical forms, and punctuation The Tressler Minimum Essentials Test[9] measures grammatical correctness, vocabulary, punctuation and capitalization, the sentence and its parts, sentence sense, inflection and accent, and spelling. Other tests which will be found helpful are the Cooperative English Tests.[10] Test A: Mechanics of Expression, Form Q, Measuring Grammatical Usage, Punctuation and Capitalization, and Spelling, grades 7 to 12. The Wilson Language Error Test[11] has two forms, each consisting of three stories containing 28 errors each. Pupils are expected to discover and correct errors.

Remedial measures, in addition to those already mentioned, consist of workbooks,[12] either published or prepared by English teachers for local use; special remedial classes for pupils who need attention, even excusing the poorer pupils from regular classes; assigning problem cases to other pupils

[8] The Barrett-Ryan-Schrammel English Test is published by the World Book Company, Yonkers, N. Y, 1938.

[9] The Tressler Minimum Essentials Test is published by the Public School Publishing Company, Bloomington, Ill, 1941

[10] The Cooperative English Tests are published by the Cooperative Test Service, New York

[11] The Wilson Language Error Test is published by the World Book Company, Yonkers, N. Y.

[12] For an excellent series of English workbooks, see *Practice Activities in Junior English* (Books 1, 2, 3) and *Practice Activities in Senior English* (Books 1, 2, 3, and Advanced), World Book Company, Yonkers, N Y, 1937–1943.

who will help to correct their errors, individual counseling by homeroom teachers or English teachers; having pupils speak and write on their special interests and asking for corrections, coaching classes with no English credit until satisfactory progress has been made, and requiring writing for school newspaper with proofreading done by the pupil under guidance of experts, etc.

Arithmetic

Many teachers can remember when offering arithmetic in high school was felt by most people to be practically sacrilege. Algebra, geometry, and trigonometry were the only subjects of sufficient standing scholastically in a high school program of studies. There were continual complaints from employers that graduates couldn't do the simplest arithmetic problems, but in most cases the blame was passed on to the elementary school "where it belonged." The old-line mathematics courses were still the only ones deserving a place in the high school. But the complaints continued, and teachers were reminded that only 15 or 20 per cent of high school graduates went to college. This left at least 80 per cent of the graduates and all the dropouts who were not likely to profit from traditional high school mathematics.

Gradually it began to dawn on high school teachers and administrators that something ought to be done about it Pupils taking vocational and commercial curricula were getting related arithmetic courses that pretty well met their needs. But the others—and this included a large percentage of the dropouts—needed arithmetic training Courses known as "senior arithmetic" (looked down on by many colleges) were offered in some schools, and in others courses known as "arithmetic review" or "general mathematics" were given But many of these pupils showed serious deficiencies in

number work and indicated the need of definite programs of remedial teaching if corrections were to be made

Brueckner [13] sets up four functions of arithmetical instruction: the computational, the informational, the sociological, and the psychological While it would be desirable for secondary school teachers and pupils to be acquainted with all these functions, we can scarcely expect pupils who are not looking forward to careers in some phase of mathematical work to emphasize the informational and sociological functions. The first and last functions, however, should be constantly in the minds of teachers who are concerned with remedial work in arithmetic

The computational function has to do with the manipulation of number processes, the handling of verbal problems with reasonable speed and accuracy, and the checking of the work. The psychological function reaches out into the appreciational area, including the philosophy of numbers, as well as touching such practical matters as precise, orderly thinking, understanding and preparation of graphic representations, and the use of number in prediction. It is with these two functions, particularly the former, that we are concerned in secondary school remedial work in arithmetic.

Pupils entering the secondary school unable to use arithmetic with reasonable facility are usually the products of teaching with little of the Morrison "mastery formula" quoted earlier in this unit. "Pretest, teach, test the result, adapt procedure, teach, and test again to the point of actual learning"

The teaching in many cases also lacks the study of the child and his weaknesses, which is repeatedly recommended

[13] L J. Brueckner, "Diagnosis in Arithmetic," in *Educational Diagnosis*, 34th Yearbook of the National Society for the Study of Education, Public School Publishing Company, Bloomington, Ill , 1935.

in this book. There are, of course, fundamental difficulties which the teacher may find it hard to overcome, such as difficulties of sight, hearing, reading, and low mental ability.

How shall the secondary school teacher know that a pupil needs remedial work in arithmetic? One of the easiest ways of learning this is to observe him as he attempts to solve problems in algebra or geometry, if he takes those subjects, or in general mathematics or related mathematics. Work requiring much use of addition, subtraction, multiplication, division, fractions, decimals, or percentage will soon bring out such defects. If the pupil does not need to use numbers to any degree in his work, it is well for the school to give a general test in arithmetic early in his secondary school career. An excellent test for this purpose is the Progressive Arithmetic Tests [14]—Intermediate, for grades 7, 8, and 9, or the Progressive Mathematics Test, for grades 9, 10, 11, and 12. These tests cover the fundamentals and reasoning and are to a moderate degree diagnostic. To cover the wide range of arithmetical ability in a high school the Progressive Mathematics Test has grade norms from 4 to 16. The price in each case is 75 cents per 25. Another that may be used to discover pupils' ability in arithmetic is the Stanford Advanced Arithmetic Test [15] for grades 7, 8, and 9 with grade norms from 2 to 11. There are numerous tests that will serve the purpose of screening out the poor students in arithmetic, but the two mentioned above should be adequate. However, many an alert teacher has prepared her own tests for this purpose.

When a teacher knows that a pupil is weak in arithmetic, what should be her procedure? Since she knows merely that he is weak but probably little more than that it may be in

[14] The Progressive Arithmetic Tests are published by the California Test Bureau, Los Angeles, Calif

[15] The Stanford Advanced Arithmetic Test is published by the World Book Company, Yonkers, N. Y.

one or more of the fundamentals or in reasoning problems, she has less than enough information on which to base any remedial work Her best procedure here is to give a diagnostic test such as the Buswell-John Diagnostic Test in the Fundamental Processes in Arithmetic. This test comes in two parts, the Pupil's Work Sheet and the Teacher's Diagnostic Chart. It is an individual test, and as the pupil works examples on the work sheet, he thinks aloud. The teacher, with the diagnostic chart in hand, checks the types of mistakes the pupil makes. Below is reproduced the Teacher's Diagnostic Chart[16] for each of the four fundamentals in arithmetic.

Teacher's Diagnosis
for pupil.. .. .

Published by the
Public School Publishing Co
Bloomington, Illinois
Printed in U S A

TEACHER'S DIAGNOSTIC CHART
FOR
INDIVIDUAL DIFFICULTIES

FUNDAMENTAL PROCESSES IN ARITHMETIC

Prepared by G T Buswell and Lenore John

Name . . School ... Grade Age IQ .
Date of Diagnosis Add , Subt , Mult. , Div. . .
Teacher's preliminary diagnosis

ADDITION. (Place a check before each habit observed in the pupil's work)

— a1 Errors in combinations
— a2 Counting
— a3 Added carried number last
— a4 Forgot to add carried number
— a5 Repeated work after partly done
— a6 Added carried number irregularly
— a7 Wrote number to be carried
— a8 Irregular procedure in column
— a9 Carried wrong number
—a10 Grouped two or more numbers
—a11 Splits numbers into parts
—a12 Used wrong fundamental operation
—a13 Lost place in column
—a14 Depended on visualization
—a15 Disregarded column position
—a16 Omitted one or more digits
—a17 Errors in reading numbers
—a18 Dropped back one or more tens
—a19 Derived unknown combination from familiar one
—a20 Disregarded one column
—a21 Error in writing answer
—a22 Skipped one or more decades
—a23 Carrying when there was nothing to carry
—a24 Used scratch paper
—a25 Added in pairs, giving last sum as answer
—a26 Added same digit in two columns
—a27 Wrote carried number in answer
—a28 Added same number twice

Habits not listed above .

. . . .

[16] Used with permission

SUBTRACTION: (Place a check before each habit observed in the pupil's work)

- —— s1 Errors in combinations
- —— s2 Did not allow for having borrowed
- —— s3 Counting
- —— s4 Errors due to zero in minuend
- —— s5 Said example backwards
- —— s6 Subtracted minuend from subtrahend
- —— s7 Failed to borrow, gave zero as answer
- —— s8 Added instead of subtracted
- —— s9 Error in reading
- ——s10 Used same digit in two columns
- ——s11 Derived unknown from known combination
- ——s12 Omitted a column
- ——s13 Used trial-and-error addition
- ——s14 Split numbers
- ——s15 Deducted from minuend when borrowing was not necessary
- ——s16 Ignored a digit
- ——s17 Deducted 2 from minuend after borrowing
- ——s18 Error due to minuend and subtrahend digits being same
- ——s19 Used minuend or subtrahend as remainder
- ——s20 Reversed digits in remainder
- ——s21 Confused process with division or multiplication
- ——s22 Skipped one or more decades
- ——s23 Increased minuend digit after borrowing
- ——s24 Based subtraction on multiplication combination

Habits not listed above

MULTIPLICATION: (Place a check before each habit observed in the pupil's work)

- —— m1 Errors in combinations
- —— m2 Error in adding the carried number
- —— m3 Wrote rows of zeros
- —— m4 Carried a wrong number
- —— m5 Errors in addition
- —— m6 Forgot to carry
- —— m7 Used multiplicand as multiplier
- —— m8 Error in single zero combinations, zero as multiplier
- —— m9 Errors due to zero in multiplier
- ——m10 Used wrong process—added
- ——m11 Counted to carry
- ——m12 Omitted digit in multiplier
- ——m13 Wrote carried number
- ——m14 Omitted digit in multiplicand
- ——m15 Errors due to zero in multiplicand
- ——m16 Error in position of partial products
- ——m17 Counted to get multiplication combinations
- ——m18 Error in single zero combinations, zero as multiplicand
- ——m19 Confused products when multiplier had two or more digits
- ——m20 Repeated part of table
- ——m21 Multiplied by adding
- ——m22 Did not multiply a digit in multiplicand
- ——m23 Based unknown combination on another
- ——m24 Errors in reading
- ——m25 Omitted digit in product
- ——m26 Errors in writing product
- ——m27 Errors in carrying into zero
- ——m28 Illegible figures
- ——m29 Forgot to add partial products
- ——m30 Split multiplier
- ——m31 Wrote wrong digit of product
- ——m32 Multiplied by same digit twice
- ——m33 Reversed digits in product
- ——m34 Wrote tables

Habits not listed above

DIVISION. (Place a check before each habit observed in the pupil's work)

— d1 Errors in division combinations
— d2 Errors in subtraction
— d3 Errors in multiplication
— d4 Used remainder larger than divisor
— d5 Found quotient by trial multiplication
— d6 Neglected to use remainder within problem
— d7 Omitted zero resulting from another digit
— d8 Used wrong operation
— d9 Omitted digit in dividend
—d10 Counted to get quotient
—d11 Repeated part of multiplication table
—d12 Used short division form for long division
—d13 Wrote remainders within problem
—d14 Omitted zero resulting from zero in dividend
—d15 Omitted final remainder
—d16 Used long division form for short division
—d17 Counted in subtracting
—d18 Used too large a product
—d19 Said example backwards
—d20 Used remainder without new dividend figure
—d21 Derived unknown combination from known one
—d22 Had right answer, used wrong one
—d23 Grouped too many digits in dividend
—d24 Error in reading
—d25 Used dividend or divisor as quotient
—d26 Found quotient by adding
—d27 Reversed dividend and divisor
—d28 Used digits of divisor separately
—d29 Wrote all remainders at end of problem
—d30 Misinterpreted table
—d31 Used digit in dividend twice
—d32 Used second digit of divisor to find quotient
—d33 Began dividing at units digit of dividend
—d34 Split dividend
—d35 Used endings to find quotient

Habits not listed above

A diagnostic test that may be used with groups is the Wilson Inventory and Diagnostic Test in Arithmetic [16a] This is a series of diagnostic tests in arithmetic covering addition, subtraction, multiplication, short division, long division, and in addition, related decade facts to 39 plus 9. The numbers of different errors provided for in the various fundamentals are. addition, 24, subtraction, 30, multiplication, 24; short division, 27, and long division, 43.

One more diagnostic test which can be used with a group is the battery known as the Brueckner Diagnostic Arithmetic Test.[17] The test covers whole numbers, fractions, and decimals Dr Brueckner's reputation as an expert in arithmetic is probably sufficient recommendation for this battery

After weaknesses in arithmetic have been discovered, how

[16a] The Wilson Inventory and Diagnostic Test in Arithmetic is published by the Palmer Company, Boston, Mass

[17] The Brueckner Diagnostic Arithmetic Test is published by the Educational Test Bureau, Minneapolis, Minn

shall the deficiencies be corrected? The most common practice involves setting up remedial classes and in connection therewith having the teacher give as much attention as possible to individual pupil difficulties. In some cases, teachers in subjects other than mathematics have done incidental remedial work with individual pupils. This, however, has not been entirely satisfactory, although some homeroom teachers have done some successful remedial work in arithmetic. It is suggested that where a pupil is particularly poor he be asked to take as an individual test whatever diagnostic test is used and that he "think out loud" while taking it.

A number of work books have been produced which teachers will find particularly valuable. One of these is *Remedial Arithmetic for High School Pupils,*[18] by Allen R. Congdon and Ronald B. Thompson. This includes tests, practice materials, and a teacher's manual. Morrison's plan is used in part, in that the program starts out with a pretest. If difficulties are revealed, the pupil works on practice materials. Mastery of a given unit is always required before the pupil is allowed to go on to another. Some other available workbooks are *Review Arithmetic* by Buswell, Brownell, and John,[19] and *Learning to Compute,* by Schorling, Clark, Potter, and Deady,[20] in two series.

The discussions of diagnostic and remedial work in reading, English, and arithmetic have been necessarily limited. However, it is hoped that enough suggestions have been presented to enable the teacher to look intelligently and sym-

[18] The Allan R. Congdon and Ronald B. Thompson, *Remedial Arithmetic for High School Pupils,* University of Nebraska Press, Lincoln, Neb., 1937.

[19] Guy T. Buswell, William A. Brownell, and Lenore John, *Review Arithmetic,* Ginn & Company, Boston, 1943.

[20] Raleigh, Schorling, John R. Clark, Mary A. Potter, and Carroll F. Deady, *Learning to Compute,* World Book Company, Yonkers, N. Y., 1940.

pathetically at her halting pupils and draw from this unit something that will make solution of her problems easier.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1 Select any subject you are now teaching in which reading ability is considered significant Prepare a test according to suggestions early in this unit. Administer the test, score it, and select the three or four pupils at the bottom of the list. Give them one of the standardized tests listed here. Plan a program for finding their specific difficulties and doing remedial work When you have worked with them for a certain period, the length to be determined by you, give them another form of the first standardized test and see what success has been achieved. On the basis of results, plan a program for caring for larger numbers of remedial reading cases. (*a*) List the tests you will use; (*b*) suggest the remedial measures you believe will be most effective

2 You are not a mathematics teacher, but you discover a pupil who evidently is entirely lost in any situation dealing with fractions. He is not taking a mathematics course, and the school offers none dealing with arithmetic What is your procedure?

3 Errors in spoken English are not hard for the alert teacher to detect. You are not an English teacher, but you observe numerous errors in your classes Plan a campaign to improve spoken English among your pupils

4. You are not an English teacher, but you find many grammatical errors in written work handed in. Do you believe you should try to correct these mistakes?

5. If so, what is your plan? If not, what will you do about the problem?

BIBLIOGRAPHY

BLAIR, GLENN MYERS: *Diagnostic and Remedial Teaching in Secondary Schools*, The Macmillan Company, New York, 1946. The author produced this book with two specific aims in mind: (1) to provide a basic text for courses in diagnostic and remedial teaching, and (2) to furnish practical suggestion to educators, supervisors, principals, and teachers who wish to set up programs in their own schools. Areas in the field dealt with are the improvement of reading; remedial techniques as applied to arithmetic, handwriting, English, and spelling, and general considerations, such as making case studies and the personal preparation that is necessary for remedial teaching. It contains many lists of enjoyable children's books, classified according to grade levels. Every school interested in increasing its pupils' ability to study should own a copy of this book.

BLAYNE, T. C.: "Reading Center Implements Guidance," *California Journal of Secondary Education*, Vol. 20, pp. 288–292, May, 1945. The author, member of a state committee on developmental readings, gives here "a practical and realistic description of a reading center in action." A battery of tests determines what and how much in remedial reading is needed by each beginning student in the junior college. Poor readers are permitted to substitute work in the reading center for regular work in English courses. They keep careful charts of their own progress and reenter the regular English classes when test scores, etc., show they are able. A plan of operation is briefly outlined and a list of appropriate facilities listed.

GLICKSBERG, C. I.: "Failure and Guidance," *American School Board Journal*, Vol. 105, pp. 26–28, September, 1942. The author maintains that the central aim of education

is development of wholesome, integrated personalities, not marks or scholastic achievement. He says the school which identifies success in school with marks is creating the painful problem of failures. The part a grade adviser can play, the reasons teachers give for failing students, and the "entirely different version" given by the students themselves are discussed. The conclusions drawn are not new ones but can well be reread and cogitated.

GUILER, W. S. "Difficulties in Decimals Encountered by Ninth-grade Pupils," *Elementary School Journal*, Vol. 46, pp. 348–393, March, 1946. The Christofferson-Rush-Guiler Analytical Survey Test in Computational Arithmetic was given to 936 ninth-grade pupils in five Ohio schools. Percentages of pupils showing specific weaknesses are given below.

Ability Measured	*Per Cent*
Changing fractions to decimals	60.7
Changing mixed numbers to decimals	82.7
Addition of decimals	33.0
Subtraction of decimals	33.3
Multiplication of decimals	6.6
Division of decimals	83.9

The author thinks this is a matter of serious concern. Until the difficulties can be corrected below the high school, secondary principals and teachers should institute an instructional program intended to diagnose and correct the difficulties.

SLAYBAUGH, D. B. "Functional English for Ninth Graders," *California Journal of Secondary Education*, Vol. 21, pp. 24–26, January, 1946. Based on the stated assumption that there have been "failures and on a gross scale in the department of English," the author here formulates in terms of student achievement 13 ninth-grade English objectives. A chart is given listing the devices to be used for measuring progress in achieving these various goals of English courses.

UNIT 24

Articulation

Helping a pupil to select a curriculum and to make the adjustments which may be necessary thereafter is only a part of the problem of educational guidance. There is the important problem of having a pupil to educate who comes to school "ready" to accept the school's offerings and who is so oriented that he may be able to enter into his work successfully This is the problem of *articulation,* which is the process of making several levels of the school system into a unified program in which a pupil passes from one level to another with the minimum of difficulty and discomfort.

Here is a good place to advise that graduation exercises in elementary and junior high schools be discontinued Sometimes a diploma has the effect of convincing a pupil and his parents that he has completed his education. It also has a tendency to widen the gap between the two levels of the school program. An important function of the counselor is to assist in making this gap easy to bridge and as short as possible.

It should first be understood that guidance in transfer from a school to a higher one is important. Many a pupil

just about to leave the sixth grade for junior high school has a good deal of fear of the unknown. Thus, unless careful guidance is provided, he may enter the junior high school with erroneous ideas to what is before him, and fear of the unknown may color his attitudes for a considerable time. Hence, it is necessary to provide careful planning for his journey to his new world. The same is true in transfer to the senior high school and to schools of higher learning.

Some items important in this transfer process are:

1. Knowledge of the child.
2. Knowledge of the upper and lower schools by teachers, counselors, and principals of both schools.
3. Acquaintance and cordial understanding among teachers of the two schools.
4. Acquaintance of the pupil of the lower school with what he is about to meet in the upper school.

Knowledge of the child is found largely in the cumulative record which is passed on from the lower school. The following information should be included in this record: the child's health status at present, the sicknesses he has had in the past, and his physical or mental handicaps, the standardized tests he has taken during and previous to his stay in the lower school; his scholastic record and the specific difficulties he has had therewith. This is not sufficient for the upper school. It is essential that principals and teachers of the two schools become acquainted and discuss the pupils. When the homeroom teachers of the two schools meet, a list of the pupils being transferred from one to the other should be prepared and a brief check list of important items should be considered by the two teachers. This check list should contain such items as the following:

1. Name of the pupil ....
2. Underage .... Overage . . .
3. How long in lower school . . .

4. General student ability . . . . . .
5. Special interest . . . .
6. Special ability . . . . . .
7. Special difficulties . . . . .
8. Physical handicaps . . .
9. Home background Excellent . . . Fair . Poor .
10. Aggressive . . . . . . Retiring .
11. How he gets along with other pupils Leader .
    Follower . . . . . .

This check list need not be used with every pupil but is a good thing to refer to when homeroom teachers are checking over the transferring of pupils. Other items of information should be found in the cumulative record, including statements by principal and teachers—the anecdotal record.

The matter of knowledge of the upper and lower schools by teachers, counselors, and principals is important. While it is a good thing for all units of a school system to have a recognized philosophy which is adhered to by all its employees, this is not common Therefore, it is particularly important that the upper school know the philosophy of the lower It should know what the lower school is driving at; whether it is more interested in pupils or subjects, whether the parents have been made an important part of the program; whether the school insists on thorough knowledge of the fundamentals, what these fundamentals are in that school, whether pupils have had experience in many school activities; whether the lower school teachers take the scientific attitude toward the pupils and seek to base all their decisions on carefully obtained facts.

It is just as important that the principals and teachers of the lower school know the philosophy of the higher. Will the pupil be subject to markedly different methods of teaching, curriculum ideas, and extracurricular philosophy? Will the guidance program have similar objectives and methods?

Will the objectives in English, for instance, jump quickly from those emphasizing fundamentals to those emphasizing literature and the application of fundamentals?

It is to be hoped, of course, that teachers in all levels of the schools will have collaborated in the building of curricula and programs of study and that the pupil moving up to the higher school will find an easy transition, not only because the curriculum is well articulated but because the teachers, both above and below, understand that entering an entirely new situation is always more or less of a shock and make every possible effort to relieve that shock

Frequently not enough importance is attached to friendly relations among teachers in different levels of the school system. There was a time when high school teachers blamed the failures of their pupils on the teachers in the lower schools. This has even been known to happen between colleges and high schools. In more progressive school systems, however, the tendency is for the teachers on the two levels to meet for the consideration of their problems Both sides realize that cooperation is much to be preferred to castigation. The tendency now, in the better schools, is to study cooperatively the problems a pupil meets as he progresses up the educational ladder and endeavor to solve them. English teachers, for instance, are working out courses of study in which transition from one school to another offers little more difficulty than ordinary grade promotions. The same is true in science and mathematics and social science and foreign languages. In one school system, a workshop was organized in which teachers on all levels considered with much profit the problems and techniques of articulation. Such arrangements bring success and happiness to many pupils and obviate the necessity for many adjustments in the upper school.

But such curricular adjustments are likely to depend on

cordial relations between the teachers of the two schools. A liking for a person always mellows one's judgment of him and his work. Thus, parties and luncheons and dances, which the teachers from both schools attend with the intention of getting acquainted and enjoying their friends, provide a guidance activity frequently not appreciated.

Up to this time we have just been laying the groundwork for the important feature of articulation—the actual transfer of the pupils to the higher school with the least possible misadjustment. The cordial relations between the faculties of the two schools are assumed to have encouraged both to take steps to get the pupils acquainted with the new school and properly oriented in it. Principals and teachers in the lower school give pupils about to be transferred all possible information on what they are about to encounter. Handbooks from the receiving school have been handed to the principal for distribution to the prospective students. In some cases, printed folders giving requirements in the various high school curricula are distributed; principals and counselors visit the lower school, speak at assemblies, and meet individual pupils with special problems, pupils and their parents are invited to the upper school, are received by pupils and teachers, and are taken through the building by the former, special editions of the upper school newspaper containing information specially prepared for the new pupils are distributed among all the prospective pupils, the lower pupils are invited to "open house" demonstrations in the upper school so that they may see something of how the classes are conducted.

After arriving at the upper school, pupils may be assigned to "big brothers" and "big sisters," whose function it is to give them many varieties of information, introduce them to faculty members and students, and do everything possible to make them feel at home. These "big brothers" and "big

sisters" have had previous training in which it has been emphasized that the newcomers must achieve a sense of belonging in this new environment, must make a proper approach to the several teachers under whom they will work, and as soon as possible must feel at home in a student body coming from a much wider geographical area than did their lower school companions. Receptions for the beginners are held in some schools. At this time they meet faculty members, listen to words of greeting, enjoy entertainment by older students, and have refreshments

But only a beginning of orientation is provided in these activities. The process must continue for at least a semester in homeroom groups, in assemblies, and in orientation courses set up specifically for the purpose of getting the pupils started successfully. Suggestions for the subject matter of orientation courses are found at the end of the unit on Group Counseling. During this period of transfer and orientation, the parents of pupils may enter profitably into the picture At some convenient time early in the semester they may be received by the faculty, made to feel at home, and learn something of the new school home of their children. They should meet the school's principal and the pupils' counselors, class advisers, and homeroom teachers, if such persons are employed in the school. If possible, also, the children should introduce their parents to all their classroom teachers. These introductions, though necessarily casual, may later be the basis for significant cooperation with the school. Some schools hold "parents' night" early in the fall semester, preferably during American Education Week, when parents may accompany their children to some classes and also visit their homerooms At such times the principal may explain many important items to parents at brief assemblies prior to the more informal phase of the evening's program He may tell something of the methods

of teaching employed in the school, the curricula and their purposes, the various services the school provides, such as medical, psychological, dental, etc., and may discuss the opportunities in extracurricular activities. Here he can apprise the parents of special calls upon their children's time, due to their advancement up the educational ladder.

It has been assumed above that all transfer and orientation procedures are successful. This is expecting too much. The situation cannot be perfect, and certain cases of non-adjustment will appear, some of these, perhaps, because of wrong procedures. These the school should expect and be ready to handle by remedial or reorientation techniques. It is well for the guidance committee to see that the faculty reviews periodically its success in pupil orientation, especially in the first semester. Many of these problems will be related to selection of curricula. While this may seem to be duplicating suggestions regarding *selection of curricula,* or even *diagnosis and remedial work,* it is reiterated here because of its importance.

Transfer to College and Orientation to the New School

How should pupils choose colleges and become adjusted in these institutions? After the Second World War, the selection of a college was hardly a matter of choice, because so many students wished to attend college. Students in a large number of cases entered whatever institutions they could and were thankful. However, there probably will be a time when the situation will change and the students will be actually *choosing* colleges.

A number of elements will enter the picture: the parents' college, if any, the college chosen by a good friend; the distance to the institution; whether it is a private or state institution, with free tuition in the latter case; the reputation of the institution locally, its standing with national accrediting agencies; the curricula offered, etc. Carter V. Good's

book *A Guide to Colleges, Universities and Professional Schools in the United States,*[1] is a very helpful one It should be in the library of every high school.

Counseling a pupil on the choice of a college does not differ from counseling in other areas. The counselor does not (or should not) advise the pupil to go to any particular college but presents the facts and allows him to make his own choice. The book by Good, mentioned above, gives much valuable information. The pupil should, if possible, have chosen his future occupation and should seek a college offering the curriculum he desires Whether he selects a particular school will depend on a number of items listed above. A useful chart in any school is one listing at the side the names of institutions and at the top certain items of information which the counselor believes should be available to pupils looking forward to college. It is suggested that only colleges most likely to be chosen by pupils in any particular school be selected. A good plan might be to choose colleges to which pupils of this school have gone within the past 5 years. Some of the items which should appear at the top are the following:

Location
Size of town
Men only
Women only
Coeducational
Public control
Private control
Church control (if any)
Accredited by
  State university
  State education association
  Regional association
  Association of American Universities
Size
Admission requirements
  High school certification
  Examination at college
  College Board Examinations
Minimum cost per year
Maximum cost per year
Fraternities
Sororities

[1] Carter V Good, *A Guide to Colleges, Universities and Professional Schools in the United States,* American Council on Education, Washington, D C, 1945.

- Tuition
- Work opportunities
  - Few
  - Many
- Scholarship aid
- Curricula
  - Liberal arts
  - Engineering
    - Aviation
    - Chemical
    - Civil
    - Electrical
    - Mechanical
    - Radio
- Teacher training
  - Elementary
  - Secondary
    - Academic
    - Commercial
    - Home economics
    - Music
    - Physical education
    - Vocational
- Guidance service
- Placement service
- Physical education
- Cooperative work-study plan

What goes on the top side of the chart will depend partly on what the interests of the pupils are in general and partly on the standards that are accepted. The making of such a chart is an excellent project for pupils in the junior or senior year of the secondary school. The work will be valuable as a project in cooperation, and by the time a committee has finished such a chart, it will be in excellent shape to conduct a panel discussion on choosing a college, and the individual members will be able to help pupils who have not had such experience. An item before the name of each college might be a number, indicating how many have attended that college from this high school.

But just knowing how to select a college is far from enough. It is quite possible that half of those who select colleges may not be capable of completing a college course. Hence, the importance of beginning this college guidance very early in a pupil's secondary career. His success in elementary and secondary school, along with all the test results and other information in his folder, should be adequate for his counselors. If the chances of his succeeding are slight,

he should be shown the advantages of entering suitable work which does not require college education.

While the teacher should rarely, if ever, tell a pupil that he is not capable of doing college work, she can very easily present information which he can interpret without difficulty. A chart used in some schools has proved very effective. It merely shows what has happened to pupils from that school who have gone to college with high school records of various levels. An example is given below

High school record	College record			
	A	B	C	D
A	10	40	30	20
B		30	40	30
C			40	60
D				50

This chart is entirely theoretical and does not refer to any particular school. The distribution might be quite different in an actual case. However, the principle holds.

Explanation: A pupil with a high school average of A has, according to records of pupils who have gone to college, the following chances in college There are 10 chances out of 100 that he will have an average of A, 40 that he will have an average of B, 30 of C, and 20 of D The pupil with a B high school average has 30, 40, and 30 chances that his college grades will average B, C, and D, respectively, etc. If a pupil does not believe he is to be classed in a particular category, it might be well to suggest a scholastic aptitude test. A certain large school system has discarded the

term "I Q." and uses only the term "probable learning rate" (P.L R.). Every pupil is given his P L.R. score and is allowed to take as many additional tests as he desires to change his P L R. if possible. The point is that it is dangerous to place a pupil in a certain slot and assume that he belongs there In most cases there is little change in the P L R., but occasionally the difference is significant. By this means a pupil's ability to do college work is put on a basis somewhat like that of the weight lifter. He may try as often as he desires and decide for himself whether he prefers to be a professional weight lifter; but his limited success there may indicate to him that perhaps he might be more successful in some other occupation

College entrance requirements are slowly changing Formerly the pupil had to have a certain number of Carnegie units in English, foreign language, mathematics, science, history, etc. Today, a number of colleges have agreed to accept students without regard to subjects taken. For instance, Bucknell University sets up the following requirements.

1. Applicants for admission to the College must be graduates of an approved 4-year secondary school, or graduates of an approved senior high school
2. Applicants will be admitted to the College on the basis of individual qualifications to do college work as indicated by such criteria as
   a. Scores on tests of the College Entrance Examination Board, including the scholastic aptitude test (required)
   b. Preparatory school record
   c. Rank in graduating class
   d Principal's recommendation

It is the writer's opinion after several years' experience as a college director of admissions that progressive college admissions officers are little concerned with the grades of

secondary school graduates. As far as ability is concerned, they prefer percentile rankings on standardized psychological and subject matter tests Rank in class is much more significant for the admissions officer than are grades, although of less value than percentile rankings on standardized tests. These officers are, moreover, concerned about the character and personality qualities of the candidate and want a complete list of his activities in school and out.

Becoming properly adjusted after entering college will depend on a number of things Among these are (1) whether the work in the high school has been of sufficiently high grade to prepare the pupil for the higher work, and (2) whether the pupil has been informed of the many new situations he is likely to meet.

The second condition will involve the program for informing the pupil on college activities, requirements, and customs. College catalogues, unfortunately, seldom are very helpful. Freshman handbooks, if studied thoroughly, provide very good background information They frequently give something of the history of the institution, curricula offered, fraternities and sororities, regulations about class attendance, care of property, religious and social activities on the campus, student government, etc High school pupils planning to enter colleges should have such information Counselors or librarians may well collect these materials from the colleges which the graduates of the school are most likely to enter and make them easily available to pupils At college, the freshman is likely to be involved in an orientation program involving "Freshman Week." This usually includes lectures on "Why Go to College," "How to Study," "How to Use the Library," "Time Budgeting," etc In some colleges, freshmen take psychological and subject matter tests and meet their counselors or advisers at this time They are entertained at social affairs given by upperclassmen and

at receptions at which they meet the faculty. Frequently they attach themselves to older students who help them in the process of orientation.

It should be added here that the college student's orientation which is effected by the techniques mentioned above is not the most important part of his adjustment to college life. The real orientation is what he does for himself as a thinking human being. High school counselors and teachers do well to emphasize and reemphasize the importance of the college student's observing carefully how successful people adjust themselves to the educational program and constantly criticize their own approaches. Students should be reminded that education as a process, according to Dewey, is "the reorganization and readjustment of experience, which adds to the *meaning* of experience and increases ability to direct the course of subsequent experience." They should be reminded further that they should try to fit every college experience, of no matter what type, into the mosaic of their developing education. Not until a person has learned to do this will he be living up to his possibilities as a college student.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Some educators claim that a 6-year high school should hold two assemblies, one for the first three grades and the other for the last three. If this is true, does it mean that proper articulation between the two levels has not been achieved? Explain your answer.
2. You are a member of the high school handbook committee. What items not usually found in handbooks would you add?
3. In some large school systems, supervisors work in ele-

mentary, junior high, or senior high school grades. In others, a supervisor is in charge of a single subject from elementary through secondary school grades List arguments for and against each plan from the standpoint of articulation.

4 Why not confine all orientation of pupils entering secondary school to "big brothers" or "big sisters"?
5. Write to a number of college admissions officers, and ask them what three things they consider most important in the admission of a secondary school graduate to college.
6. Ask for a panel discussion of the problem of college admission in a school employing the report to parents recommended in this volume.

BIBLIOGRAPHY

CAREY, K. L., "Articulating the Junior High with Other Units," *California Journal of Secondary Education,* Vol. 16, pp. 476–479, December, 1941 Assuming that in America we are *one* school, not elementary, junior high, and senior high, the assistant superintendent in charge of junior high schools in Los Angeles tells of the workshops held in 1940 and 1941 for teachers of all grades. The purpose was thorough mutual understanding in order that pupils might experience the minimum of shock in transfer from a lower to a higher unit An interesting feature was the fact that the junior high school was expected to take a backward as well as a forward look.

GOOD, CARTER V.: *A Guide to Colleges, Universities and Professional Schools in the United States,* American Council on Education, Washington, D.C., 1945. This book is a valuable aid in educational counseling Be-

cause it contains comprehensive information on each of 1,700 institutions, it constitutes a noteworthy reference book. It should be available in all high schools.

GREENLEAF, W. J: "Educational and Vocational Information," *Review of Educational Research*, Vol. 15, pp. 173–184, April, 1945. The author, specialist in occupational information and guidance of the U. S. Office of Education, reviews briefly many researches in the field of educational and vocational information and the large-scale research projects carried on by government agencies during the period of 1942–1944. The object of the review is that "work of identifying appropriate material for guidance and placement purposes will be considerably reduced." The researches covered are published mainly by five agencies of the United States Government and are discussed under 12 different headings. A helpful and detailed bibliography is given.

HILL, M. E.: "Education for Work vs Education for Leisure," *California Journal of Secondary Education*, Vol. 17, pp. 263–266, May, 1942. The author, a university director of admissions, urges that high school and junior college students be given a "proper blending of vocational and academic curricular offerings" Three sequence courses in various fields are outlined, whereby "national service" courses are included in the regular core curriculum

ODOM, C. L: "Closing the Gap between School and College," *Occupations*, Vol. 20, pp. 194–197, December, 1941. A study of high schools in 20 school systems brought out the fact that high school pupils need to learn to read and take lecture notes, while colleges need to adapt methods to high school pupils. Also, colleges must assist in the social adjustment of entering freshmen. College entrance requirements must be

liberalized and less attention must be given to individual academic subjects. Personnel programs in both high school and college must be greatly improved.

SKEEN, BEARNICE. "No Strangers Here," *Nation's Schools*, Vol. 37, pp. 28–30, January, 1946. In Vanport City, Ore., a government housing project with 37,000 people during the war and 19,000 at the time the article was written, new pupils came to the schools each week in considerable numbers. An "orientation room" to which all new pupils went first is an interesting variation in this orientation plan. A unique scheme for meeting an unusual emergency.

UNIT 25

The Pupil's Plan Book

A useful tool in the guidance of secondary school pupils is the so-called "pupil plan book." This book provides space on which the pupil may record his present status, his ambitions, and his plans for education and vocation. It should be started when the pupil enters secondary school, and it should be revised at least twice a year. A plan book providing for 4 years of secondary school work may require as little as 8 or 16 pages. When the pupil has filled out his plan book, he may hand it to his homeroom teacher or counselor, to be filed until he wishes to make changes in it.

Making the plan book may be an activity of unusual value. A committee of pupils in a homeroom may take over the problem and invite the cooperation of other members of the group. A request for suggestions as to what should be included may bring proposals from every pupil in the room. Committee and group discussions of the purposes and techniques may have motivating values not likely to be developed in any other manner.

The plan book may have pages of two widths, the title or guide page being twice as wide as the remaining ones, thus

making it necessary to write the items only once Each narrow page may be ruled and dated and items listed as on the first page While the plan book should be kept in the pupil's cumulative folder, it should be available to him at any time.

Some suggestions as to the form and contents of a plan book follow, but these should be considered as suggestions only, and such a book in any school should be developed according to the wishes of the teacher and pupils.

UNIT 26

Vocational Guidance

Rich man, poor man, beggar man, thief.
Doctor, lawyer, Indian chief.

This familiar jingle used by children at play might adequately express the vocational knowledge of many high school pupils on their graduation day. For many a high school graduate has faced the future with little idea of how he can fit into the world of work or what jobs are available there. Therefore, bewildered by the strangeness and immensity of the life that confronts him after graduation, he may follow the path of least resistance to the job at hand whether or not he is interested in doing it or is equipped for it. Too many times he has been exposed to the theory that only people with white-collar jobs are respected and considered successful. If the job he has involves manual labor, he immediately places himself in what he considers the "lower class." Somewhere along the line he was not taught the dignity and worth of all useful labor. Life for him becomes humdrum and without challenge. The future seems to hold nothing by way of happiness. He becomes a

frustrated individual, and his living is meaningless and colorless.

It seems, then, that a first objective for an effective vocational guidance program in any school should be to help boys and girls to develop a respect for all useful labor and for those who perform it. The world of today is a very complex world So many people of all races and creeds contribute to the living of their fellows that the school can ill afford to neglect this important phase of the guidance function. For too long a time the school has used the lure of white-collar jobs as a means of prodding boys and girls to do good work in school with the result that many young people early in life have developed an inferior feeling when they have found themselves in other fields of endeavor. If work is worth while and necessary for the life of people, it is honorable; and the worker who does his work well is worthy of the respect of all his fellows. The school more than any other agency outside the home can teach this respect, and it becomes the first imperative of an adequate vocational guidance program

The foregoing should not be interpreted as countenancing the tendency in too many schools to delegate certain groups of individuals because of race, color, or creed to certain types of menial tasks regardless of their abilities or vocational interests. If the school is to help in perpetuating the American way of life, it must help to break down such unfair practices both by helping children of the majority groups to accept members of minority groups as coworkers and by helping children of minority groups to recognize their own worth and accept the challenge to contribute to the economic emancipation of their groups.

The shortage of workers during the Second World War tended to push into the background the second objective of the school guidance program—to help pupils discover,

adopt, and have practice in the principles of careful, efficient work During those years when jobs were so plentiful and workers so few, what counselor of high school boys and girls did not hear over and over the statement that many of the ideals held before youth were foolish? On one occasion a boy of 15 was referred by his counselor to an employer. The boy needed to work to help support his sick mother. In talking with him, the counselor tried to give the boy some suggestions on how to apply for a job Among other things she suggested that he comb his hair neatly, wear clean clothes, etc. The boy's reply was a smile and a statement to the effect that that wasn't necessary any more. He could get the kind of job he wanted by going just as he was. This attitude was to be expected of children who had no background of experience against which to weigh their judgment.

Today, the story is different. Work is becoming increasingly hard to find. Employers are looking for more mature and better trained workers. Shoddy work is no longer acceptable, and young people will need a great deal of understanding and guidance if some of them are to rebuild their work habits and others are to build acceptable ones.

In the third place, an effective vocational guidance program will help pupils to discover and evaluate the variety and types of work that contribute to present-day living. If the attainment of this objective is pursued with understanding and sympathy, the first objective mentioned in this chapter will almost take care of itself. For young people can hardly discover their dependence on others without acquiring a respect for them. Moreover, such an enterprise acquaints the pupil with the vast number of possibilities from which he, too, can choose a career. It affords an opportunity for discussion of the need for planning a career.

Too much emphasis cannot be placed on the importance

of helping youth to build a set of worth-while objectives. It is dealt with at more length in another unit. It should be repeated here that unless the school is able to help boys and girls set goals for themselves, it is unfair to expect them to apply themselves in school.

It has been pointed out by Fornwalt that there are two deficiencies which seem to be characteristic of delinquent boys. One of these is the lack of worth-while friends, and the other is a lack of worth-while objectives The case of Dan is a good example. Dan was a handsome boy of 16, a member of a minority group The going had been difficult for Dan. His childhood had been full of danger, anxiety, and insecurity. There had been the digging up of roots in one place and the accompanying task of learning to feel at home in another city, there had been a period when neither his parents nor his teachers understood his problem, and there followed the rather frequent pattern of aggressive behavior; then there had been rather stringent disciplinary measures A couple of years later Dan found himself with an opportunity to make a fresh start.

Dan's ability to learn school subjects was quite limited, but he tried hard and earned for himself, through effort, the right to advance with those of his own age group. But someone told him that he really hadn't earned his advancement He was "dumb." He was getting so old that they had to do something to get him out of school. When he went to the counselor after hearing this, he was bitter and resentful He didn't want life to give him things. He wanted to earn them. And now that he knew the truth, nothing mattered any more.

The counselor knew that Dan could never enter a profession. She had felt that Dan was headed toward the time when they would have to face this problem together. She had had some tests made with the hope that Dan could be

helped to plan a career in accordance with his ability and yet one that would be a challenge to him As the boy sat there and the counselor said that she realized how he must feel, she knew that the school had waited too long If somehow 2 or 3 years ago Dan could have been helped to find challenge and thrill in preparing for a career that would be possible for him, how different his picture would have been. He was not hopeless. The counselor had reason to hope that in his next visit Dan could be helped to face his situation frankly, but the road would be more difficult.

Perhaps the school has neglected this phase of its work because it is difficult to tell the truth to those of limited abilities. Perhaps this is because those who belong to a professional group find it difficult to believe that happiness can be found in other types of work. And yet, one has but to observe those with whom one comes in contact every day to find that there is joy in living and adventurous living in most work, if the worker will but find it there. Moreover, that happiness comes through a sense of achievement which is impossible when a person has been placed in a job overtaxing his abilities. The vocational counselor, then, must be willing and able to look up and out with the pupil, no matter what his abilities or his handicaps

In the fourth place, the school which would do effective vocational counseling will help boys and girls build those traits of character conducive to successful careers and happy living A poorly adjusted person cannot be a good worker no matter what vocational assets he may have. If an individual is seeing his job through a screen of emotional conflict, he can hardly be expected to do his best work. It is encouraging to note that many schools are devoting more and more time to a study of the simple mental hygiene rules in an effort to help young people resolve emotional con-

flicts. The person who starts on a job must have a wholesome attitude and a hopeful outlook if he is to be successful To help him to face the realities of the job, and of life generally, with courage and hope is part of the task of education and more especially the task of the vocational guidance program of the school

Then, too, the person who would be efficient and happy in his job must be fortified by a wholesome out-of-work experience. No longer can the school be satisfied when it has turned out individuals who are efficient in certain skills It has been proved that recreational leisure-time pursuits contribute largely to the efficiency and productivity of the working day. It would seem, therefore, that the adequate vocational guidance program would also make some provision for avocational interests and that the school would give some training in these.

Although many schools at the present time lack the personnel necessary, wherever it is possible a carefully devised plan of follow-up should be instituted. This is especially true when the pupil leaves high school and goes immediately to a job. The sympathetic interest and understanding of a teacher or counselor mean a great deal to these young people who are trying their wings in the largeness of the world of work

There has been a great deal of discussion as to where in the school experience the vocational guidance program should begin It is the feeling of the authors of this book that it should begin when the child starts school. The people in his school experience who are contributing to his life are workers, and he can learn to appreciate their efforts in his behalf. The school has ample opportunity to explore with him the origins of the clothes he wears, the food he eats, and the comforts he enjoys. One second-grade group became interested in the story of milk and butter They visited a

farm. They found out what the tasks of the farmer and his wife were. They watched the milking being done. They took back to school some cream from the farm and made butter They made some fruit preserves like the ones the farmer's wife was making the day of their visit. They enjoyed the things they made. They built a farm which had a farmer and a farmer's wife living in the farmhouse. Not only did these children learn much about what goes on at the farm but they experienced a sense of kinship with these keepers of their health when they, too, for a short while helped to provide food for their class. Work habits are formed in the first grade and strengthened all through the school experience Likewise, character is in the process of growth from the birth of the individual, and each year in school should contribute directly to it

It would seem, then, that an opportunity for discoveries in various occupational areas should be provided throughout the school curriculum. The discussion that follows, however, will pay particular attention to its development in the secondary school. Schools are using many different approaches successfully. Some of the methods that have been found most practical and helpful for the small school are discussed here, as well as the story of how one teacher organized a vocational guidance program in the ninth-grade social studies class.

The principal was having a meeting with the ninth grade They were completing their work in the junior high school and were confronted with the task of selecting their senior high school courses. The expressions on their faces, as they sat staring at the roster of possibilities, presented a study in pathos. Some looked dazed, bewildered, some were excited at the large list of possibilities. Questions such as these arose: "How do we decide what we are going to take?" "Which one of these courses is for me?" The principal pa-

tiently explained that it depended on what the pupil wanted to do when he was through school. Few of the group had settled that question for themselves As she watched the bewilderment of these pupils of hers, the ninth-grade sponsor determined that another group would not come to such a meeting unprepared.

Immediately she began to collect materials. She made a list of books that might be bought for the school library She examined magazines of all kinds to find offers of free materials on various occupations, and sent for them. This plan afforded a wealth of good materials.

September arrived. The teacher planned to do her work in occupations as a prelude to the visit of the principal and the planning of senior high school curricula. There were the materials. There were the pupils Certainly they could learn a lot about occupations from the data assembled Then conversations with her pupils set the teacher wondering

There was Jane. Jane wasn't getting along very well in school She was bright enough, but she had no interest in what was going on about her She did not enjoy the association with her classmates, and spent much of her time alone. It was hard for Jane to know what she was really interested in doing after she had finished school.

Then there was Mildred Mildred had lived a fairly well-protected life, although she had had a few work experiences. As I Q 's go, hers was very high. Her achievement in school, however, was not compatible with her ability. Her manner was careless, her work careless, and her appearance was careless It had never occurred to her, she said, to think about what she would do when she was through school.

Cases multiplied The teacher decided that before she tried to help boys and girls learn something about occupations she should help them to discover their vocational interests. She secured the Kuder Preference Record. After

she had studied a number of such inventories, the teacher decided upon that one because it seemed that the boys and girls would enjoy taking the test. They could score it themselves and get a lot of joy from recording their scores and working out their own profiles. It would be possible for the teacher to help the pupils interpret their scores in a group. The teacher also liked the philosophy underlying the construction of the Kuder test. If the school had not been able to purchase it, the teacher would probably have used the inventory offered by Germane and Germane in *Personnel Work in High School,* which they have so generously given teachers the privilege of copying for use in their classes.

The preference record gave the pupils scores in nine major areas of vocational interest—mechanical, persuasive, computational, scientific, literary, musical, artistic, social service, and clerical A pamphlet of directions gave the teacher a group of occupations listed within each of these areas. Since there wasn't time for each pupil to learn the details regarding many occupations, the pupils were asked to obtain a general idea of the field and to study carefully an occupation of their own choice in the area of their highest measured interest.

The classroom became a beehive of activity. All the library materials except encyclopedias were brought into the classroom. Charts of various kinds were placed on the walls. The bulletin board carried items of interest in the vocational field. Several days were devoted to browsing in the library in search of information on the specified occupation. Strange what curious turns the interests of these boys and girls took! Plentiful as the material seemed to be, there was much to be desired. A lesson in letter writing became necessary. If the material he needed wasn't there, the pupil

had to find it. Some of the most interesting materials of the department were those discovered by the pupils and bequeathed for the use of the classes to follow. A variety of classroom activities was engaged in, and there were many interesting and helpful visits with those successful in various fields.

To guide them in their study, the teacher and pupils worked out an outline. The outline was used as a basis for a written report and for an oral report to the class. The system of oral reports helped the class become acquainted with vocations they had not had time to study Many conferences were held with individual pupils to help them interpret their scores on the preference record. The reports were placed in notebooks that were made for the purpose in the art class, and each gave some indication of the contents

A small percentage of these ninth-grade pupils found that their vocational interests had not developed to the point where they were outstanding on the profile These had to be counseled with, because there was a tendency on their part to feel "inferior" or poorly developed When these same people took the inventory in the eleventh grade, all had decided vocational interests as measured on the same test.

As the teacher reviewed the work of 2 months, she felt that the pupils were much better prepared to make an intelligent choice of senior high school curricula than they would have been otherwise. They had become conscious of the world of work, of some of its opportunities and some of its requirements They had learned to study more effectively and had become more resourceful as a result of it. They had had some purposeful experience in sharing their findings with their classmates. The enterprise had afforded opportunities for correlation on the work of the art and social studies departments. The teacher saw that there

could be numerous opportunities to correlate the work of the social studies and English departments.

She realized that the enterprise as conducted had omitted entirely a study of measured aptitudes There were two reasons for this. In the first place, the school was too small to afford a battery of good aptitude tests. In the second place, the teacher was carrying a full teaching schedule and did not have the time required for such testing. She did not ignore the importance of this phase of vocational guidance with the pupils One session was spent in explanation of the importance of aptitudes in the selection of a vocation She told the group of the services of a nearby university in the field of aptitude testing.

There was a period of a few days when many members of the group were waiting for the arrival of materials. During this time, the teacher studied with the pupils *Your High School Record–Does it Count?*[1] The photographed copies of actual letters from business firms did much to impress the pupils with the seriousness of the whole project and stimulated much creative thinking within the group.

As has been suggested, some of the ninth-grade pupils did not have clearly defined vocational interests as measured on the Kuder Preference Record. To help these pupils and to allow others to check for any change in vocational interest, the blank was administered again in the eleventh grade By the time this grade has been reached, the world of work is much more imminent; many pupils have had some first-hand experience in one or more occupations, there is still time to readjust their schedules to take a course that they find they are going to need. This is a good time also (a better time than on the ninth-grade level) to investigate schools and to take advantage of summer work opportunities as

[1] Robert D Falk, *Your High School Record–Does It Count?* rev. ed , South Dakota Press, Pierre, S. D., 1942.

a laboratory experience in a chosen field. Harry followed such a procedure He had always wanted to be a mechanical engineer or a doctor He couldn't decide which. The Kuder profile indicated a high interest in both fields Aptitude tests administered by a university student as he finished the eleventh grade indicated that Harry would be successful in either field. He had the opportunity to work with machinery during that summer and that experience helped him to choose medicine. Joan volunteered as a nurses' aide and through this experience was assured she had chosen a profession to her liking

The procedure described above was carried on as part of the work in the social studies department. Vocational guidance, even though it receives its emphasis in one particular department, should not be limited to that department There is ample opportunity in every field to introduce this material. It does seem necessary, however, that some one member of the faculty, or a faculty committee in larger schools, should specialize in vocational guidance. Such a person has many duties. He should become a member of the National Vocational Guidance Association and be active in its local branch; he should read as much in the field as possible and be ready to suggest materials for the library and classroom; he should organize a placement service and do as much of the follow-up as is possible.

While these special tasks should be assigned to one person who is especially interested in this phase of the guidance program, it is to be hoped that teachers in every field will vitalize the curriculum by making some contribution toward the vocational adjustment of the pupils. Every teacher of every subject, if he is thoroughly interested in the contribution his subject can make, can assist in the vocational guidance program of the school. The English teacher will find that his subject contributes directly to the training of the

journalist, advertiser, editor, proofreader, poet, novelist, teacher of English, actor, lawyer, minister, radio announcer, and, in fact, to the training of every person who in the course of a day must be able to express himself, who must get along well with coworkers. The difficulty lies not in listing vocations to which subjects contribute directly but to determine what opportunities a particular subject field affords for developing the objectives of the program. Perhaps this can best be done through conferences of members of one department and then pooling the findings of all departments.

In Cincinnati, Ohio, the teacher is held responsible for integrating the occupational materials with the regular program of studies. It has been found that an understanding of community and church interests is necessary. For example, an eighth-grade class carried out a project known as "Interdependence of Workers," centering about the machine-shop worker and involving his dependence on persons in nine different fields represented in the United States census. The project was a cooperative one, persons representing the nine fields being organized as committees responsible for gathering occupational information, after an analysis of the machine-shop worker's duties A miniature community was constructed, representing a life-size machine-shop worker towering over the many workers who contributed to his success in the community. All the regular school subjects were involved in the development of the project, and perforce pupils became acquainted with many types of work through this relationship. The project was later presented to outside audiences.

Many schools are making more and more use of excellent films that are available, of records describing occupations, and of visits to the school by persons who are able to present their own occupations in interesting fashion to the boys and girls. In many schools, the career conference has become an

important part of the study of occupations. Leaders in various occupational fields are invited to participate Meetings of the total group are followed by meetings of interest groups where the guest leaders serve as resource persons and frequently lead the discussion. It should be emphasized, however, that the career conference is only one of many phases of a comprehensive vocational guidance program.

Another approach that seems to be gaining favor although it is too expensive for many children is the 3- or 4-day summer camp. In these camps, high school boys and girls are given complete batteries of tests and a counseling service is available to help them plan their careers.

In some states, the state employment service has developed a plan whereby specially trained youth interviewers are made available to young people leaving school to go to work Interest and aptitude tests are given and a counseling conference is held prior to placement on a job. Some industries offer a similar service to prospective employees.

Some schools have found it helpful to have each teacher become a specialist in a given occupational area. She collects materials, plans assembly programs around the occupations in her area, and holds individual conferences with pupils interested in her particular field. Charts which indicate qualifications for particular jobs within a job area are helpful devices in pupil counseling.

Methods will vary with each school because each school will try to meet its own special needs and will use the resources peculiar to its own community. And in each community where the school has the will, it will find the way to the effective guidance of youth in this all-important area.

Career Book

1. Brief history of the occupation
2 Divisions and types of jobs
3. Qualifications needed to enter the occupation

4. How my personal qualities measure up
   a. Kuder Preference Record
   b. Schoolwork
   c Personality
5. Advantages
   a. To employee
   b To society
6. Disadvantages
7. Range of earnings—rewards other than financial
8 Hours of work—regularity of employment
9. Demand and supply of workers
   a. In wartime
   b. In peacetime
10. Training needed for different types of jobs
   a Places where training can be secured
   b Cost of training and means of financing it
11 Policies of employers regarding
   a. Organized labor
   b Kinds of people employed
   c. Retirement
   d. Sick benefits
   e. Vacations
12 Report of interview with someone in this field of work
   a Points covered during the interview
   b. Personal observations made about working conditions, nationalities, and attitudes of workers
13. How to look for a job and how to proceed in getting a job
14 Chances for advancement
15 What to read about this occupation
16 My educational plans for senior high school

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Select one of the occupational areas measured in the Kuder Preference Record. Make a chart on which you indicate the types of jobs within the area, along with educational and personality requirements.

2. Collect free materials that will be useful to the pupils as they explore this area.
3. List the names of persons successful in this area whom you might call upon to participate in a career conference.
4. List recordings and motion pictures that are available in this area. Where can they be procured and what is their cost?
5. Plan three assembly programs in which you would interpret this occupational area to the pupils.
6. Evaluate the program of vocational guidance in your school as to testing, counseling, job placement, and follow-up. Make suggestions for improving it or for using what you now have to better advantage.

BIBLIOGRAPHY

BREWER, J. M.: "Are We Neglecting the Pupil's Curriculum?" *Occupations*, Vol. 26, pp. 282–284, February, 1948. The author questions the present trend in vocational guidance. He feels that perhaps a return to vocational experience in the classroom where a "floor" is put under vocational guidance and vocational education is in order.

CULBERT, JANE F.: "Counseling Young Workers," *The Child*, Vol. 10, p. 116, January, 1946. While it is impossible to set up any definite pattern whereby a counselor can fit a pupil into a particular vocational niche, there are certain general factors that are involved in counseling young workers. The author points out these factors in such a way as to be particularly helpful to the beginning counselor.

FINN, G. H.: "Survey of Visual Materials Used in Vocational Guidance," *Educational Screen*, Vol. 27, pp. 72–73, February, 1948. Based on a study of 252 educational institutions, the article summarizes visual education material

used in vocational guidance. The author suggests some obstacles to the realization of an adequate program and offers a remedy

FORNWALT, R. J., "Part-time Job Values for the Maladjusted Boy," *Occupations*, Vol. 26, pp 221–223, January, 1948. By means of several brief case studies, the author presents the values of the part-time job for the maladjusted child.

HASTIE, W., "Senior Composition and Vocational Guidance: An Experiment in Integration," *English Journal*, Vol. 33, pp. 439–440, October, 1944. The author reports on her attempt to make a required English composition more meaningful to her pupils. She explains how she organized and proceeded with the venture and how it culminated in a helpful vocational conference

HEUSS, C. A, *et al.*, "High School Seniors Study Occupations," *Occupations*, Vol. 26, pp. 290–293, February, 1948. The authors describe and evaluate the study of occupations as it is conducted in the Dobbs Ferry High School. The program involves the departments of guidance, social studies, and English, and it is partly sponsored by a community organization.

JACOBSON, N.: "Unit of Work on Guidance in the Junior High School," *High Points*, Vol. 28, pp. 32–38, February, 1946 A stimulating article in which the author describes how he initiated and carried through a helpful unit in vocational guidance with a group of boys in an underprivileged neighborhood. Pupil participation in planning procedures as well as the resourcefulness of the group in carrying out their plans combined to make this a fine experience.

LAFORTUNE, ELWOOD W.: "A Card for Use with High School Seniors," *Occupations*, Vol. 26, pp. 294–298, February, 1948. The author presents a form for use in counseling

high school seniors; in addition he offers a plan for the vocational interview.

METCALF, H. S.: "Group Counseling at the Eleventh-grade Level," *School Review*, Vol 54, pp 401–405, September, 1946. The article includes a résumé of the group guidance program in an Illinois high school. The author enumerates what he considers the greatest values derived from the group guidance technique.

WRENN, C. GILBERT. "Trends and Predictions in Vocational Guidance," *Occupations*, Bibliography, Vol 25, pp. 503–515, May, 1947. Dr. Wrenn reviews important changes in the personnel field with careful attention to the contribution of the United States Employment Service to vocational guidance He discusses trends in counseling procedures and the growth of the use of group techniques as initiated by the armed services, as well as developments in occupational research and placement. Included in this article is the popular "A Creed for the Counselor."

HELPFUL MATERIALS FOR USE IN THE VOCATIONAL GUIDANCE PROGRAM

BOOKS

ALSOP, G F., and M. F McBRIDE. *She's Off to Work. A Guide to Successful Earning and Living*, Vanguard Press, New York, 1941.

BELL, HOWARD M.. *Matching Youth and Jobs*, American Youth Commission, American Council on Education, Washington, D. C., 1940.

CHASE, GENEVIEVE: *Four Young Teachers*, Dodd, Mead & Company, Inc., New York, 1947.

DARLEY, J G.: *Testing and Counseling in the High School*

Guidance Program, Science Research Associates, Chicago, 1943

DAVEY, M. A., *et al.: Everyday Occupations*, D. C. Heath and Company, Boston, 1941

DETJEN, M. F., and E. W. DETJEN: *Your Plans for the Future*, McGraw-Hill Book Company, Inc., New York, 1947.

Dictionary of Occupational Titles, Part I, Definitions of Titles, 1939; Part II, Arrangement of Occupational Titles and Codes, 1939; Part IV, Entry Occupational Classification, 1944, Government Printing Office, Washington, D. C.

FORRESTER, GERTRUDE: *Methods of Vocational Guidance*, D. C. Heath and Company, Boston, 1944

FORRESTER, GERTRUDE. *Occupations: A Selected List of Pamphlets*, The H. W. Wilson Company, New York, 1946.

HAMRIN, S. A · *4-Square Planning for Your Career*, Science Research Associates, Chicago, 1946.

HUFF, DARRELL, and F. M. HUFF. *Twenty Careers of Tomorrow*, McGraw-Hill Book Company, Inc., New York, 1945.

KAHLER, A., and E. HAMBURGER: *Education for an Industrial Age*, Cornell University Press, Ithaca, N. Y., 1948.

KITSON, H. D: *I Find My Vocation*, McGraw-Hill Book Company, Inc, New York, 1947.

KOTITE, EDWARD A.: *Jobs and Small Businesses*, Graphic Enterprises, New York, 1946.

MILLAR, LILLIAN D.: *Careers for Women*, Bruce Humphries, Inc., Boston, 1946.

ROBINSON, LURA: *Outdoor Jobs for Men*, Vanguard Press, New York, 1947.

SCHREIBER, ROBERT E., and LEONARD CALVERT: *Building an Audio-visual Program*, Science Research Associates, Chicago, 1946.

SOUTHWELL, JOHN: *Getting a Job in Television*, McGraw-Hill Book Company, Inc., New York, 1947.

STEELE, EVELYN, and H. K. BLATT. *Careers in Social Service*, E. P. Dutton & Company, Inc., New York, 1948

SOURCES OF PAMPHLET MATERIALS

American Association of Schools of Social Work, Chicago. Free pamphlets on professions in this field.

Actuarial Society of America, New York. Free materials on careers in this field.

American Dietetic Association, Chicago List of publications and reprints as well as a bibliography covering careers in dietetics.

American Nurses' Association, Nursing Information Bureau, New York Inexpensive pamphlets on careers in nursing.

American Occupational Therapy Association, New York. Free materials in this comparatively new profession.

Association of American Railroads, Washington, D. C. *Quiz on Railroads and Railroading.*

Association Press, New York.

Bellman Publishing Company, Boston, Mass. Fifty-eight vocational and professional monographs.

Big Brother Movement, Vocational Department, New York. Excellent material for those interested in aiding delinquent or predelinquent boys through job opportunities and friendship

Bureau of Labor Statistics, Washington, D. C. Pamphlets on the employment outlook in various fields of work.

Columbia Broadcasting System, Department of Education, New York.

Commonwealth Book Company, Inc., Chicago.

Division of Research and Guidance, Los Angeles County Public Schools, Los Angeles, Calif. Useful materials in building and carrying out vocational guidance programs.

Guidance Department, Dobbs Ferry Public Schools, Dobbs

Ferry, N Y. Latest revision of the senior project, "A Study in Occupations," is available.

Institute of Life Insurance, Educational Division, New York. Free materials on careers in insurance.

Mademoiselle, New York. "Jobs and Future" series Reprints.

McKnight & McKnight, Bloomington, Ill.

Michigan State College, Institute of Counseling, Testing, and Guidance, East Lansing, Mich. *A Selected Bibliography of Guidance Materials*, annotated.

Minneapolis Industrial Relations Center, University of Minnesota, Minneapolis, Minn. Materials for a study of jobs in the field of industrial relations.

Morgan, Dillon and Company, Chicago.

National Child Labor Committee, New York. Free and inexpensive materials available.

Occupational Index, New York University, New York. A large variety of occupational abstracts widely used by schools. Also a periodical which should be in every school.

Psychological Corporation, New York. Materials on occupations as well as helps in organizing a guidance program This company handles many of the modern tests used in guidance.

Public Affairs Committee, New York.

Science Research Associates, Chicago. Occupational briefs covering a large number of occupations as well as many other materials in the field of vocational guidance.

United Airlines School and College Service, Chicago. Set of ten pictures of historic airplanes, a map of United States air lines, and a directory of free and inexpensive material in the field of aviation education.

U.S Department of Labor, Women's Bureau, Washington, D. C Material on vocations for girls.

United States Office of Education, Vocational Guidance Division, Bulletin 236, "Occupational Choice and Training Suggestions, Books and Materials for Guidance Programs", Bulletin 15, "Occupational Information and Guidance Service." Also a list of publications is available, including a free weekly list of government publications. Send to Superintendent of Documents, Government Printing Office, Washington, D. C.

Vocational Guidance Manuals, Inc., New York. Vocational guidance manuals on a variety of subjects.

Western Personnel Institute, Pasadena, Calif. A series of moderately priced monographs. One of the newer ones in this series is entitled *Law Enforcement, a Profession for Peace.*

FILMS

Association Films, Y.M.C.A. Motion Picture Bureau, New York. Large library of sponsored films. Classified list available.

Castle Films, Inc., New York. Free catalogue of United States government visual aids and training films.

Coronet Instructional Films, Chicago. Catalogue available.

E. B. Film News, a small magazine published by Encyclopaedia Britannica Films, Inc., Chicago.

"Free Films, 16 mm. and Sound," a mimeographed list compiled by Lili Heimers, New Jersey State Teachers College, Upper Montclair, N. J.

One Thousand and One, 1948, Educational Screen, Chicago. Gives information on more than 6,000 available films and their sources.

Vocational Guidance Films, Inc., Carl F. Mahnke Productions, Des Moines, Ia. This firm makes "Your Life Work" films. These films are accompanied by guides for the

teacher and students and are planned for use in classroom discussions

CHARTS

B'nai Brith Occupational Orientation Charts, B'nai Brith Vocational Service Bureau, Washington, D C Nine two-color charts defining more than 600 occupations

College Majors Chart, *Glamour,* New York Reprinted from *Glamour*, August, 1946.

Guidance Posters, Science Research Associates, Chicago. 17 x 22 inches.

"Job in Action Pictures," Science Research Associates, Chicago. Seventy placards.

National Roster of Scientific and Specialized Personnel, Superintendent of Documents, Government Printing Office, Washington, D. C. Inexpensive charts on a variety of occupations.

PERIODICALS WITH GUIDANCE MATERIALS

American Vocational Association Journal, New York

Brewer's Chart of Vocational Opportunities, Government Printing Office, Washington, D. C., 1949. 16 x 21 inches.

Career News, B'nai Brith Vocational Service Bureau, Washington, D. C.

Champaign Guidance Charts, Champaign Senior High School, Chicago, Ill.

Current Events Series, American Education Press, Inc., Columbus, O. Weekly during school year.

Employment Service Bureau, U.S Department of Labor, Employment Service, Washington, D. C. Monthly.

Glamour, New York.

Grooming for the Job, Bristol-Myers Company, New York.

Guidance Chronicle, Chronicle Press, Moravia, N. Y. Monthly.

Guidance Publications, Cleveland, O. Write for information.

Labor Information Bulletin, Department of Labor, Washington, D C

Ladies Home Journal, Philadelphia. A series of 21 career booklets, 1948.

Life, Chicago.

Mademoiselle, New York. Occupations for girls.

Monthly Labor Review, Bureau of Labor Statistics, U.S. Department of Labor, Washington, D. C

Occupations, the Vocational Guidance Journal, New York.

Our America Series, Coca-Cola Company, Atlanta, Ga.

Personnel Journal, New York.

Pic, New York

Saturday Evening Post, Philadelphia

School and College Placement, Association of School and College Placement, Philadelphia.

Scholastic, New York.

Guidance Agencies

National Vocational Guidance Association.

Occupational Information and Guidance Service, U S Office of Education, Washington, D. C.

The state employment service in your state capital

Veterans Administration Guidance Centers. Find out where they are located

Organizations which will gladly furnish valuable guidance information are Boy Scouts of America, Girl Scouts, Kiwanis International, Lions International, and Rotary International.

Occupational Files

A well-organized system of filing occupational information should be found in every secondary school. Occupational clippings, photographs, leaflets, and even dissected chap-

ters of books are filed for immediate and future use Probably an alphabetical plan will be most useful for younger pupils. For more elaborate plans, see below.

Michigan Plan, Sturgis Printing Company, Sturgis, Mich., 1947 600 classified headings

New York Department of Education System, Chronicle Press, Moravia, N Y. Follows code system of *Dictionary of Occupational Titles.*

Parker Classification, adapted from W. E. Parker's *Books about Jobs*, 1936.

Science Research Associates Filing Plan, Science Research Associates, Chicago.

UNIT 27

Guidance Through Extracurricular Activities

Lucy Brown entered high school at the age of 13. Her I.Q. was somewhat over 130. Both of her parents were intelligent college graduates. She entered the ninth grade with hopeful enthusiasm, thrilled beyond measure to have done with a school that offered only regular subjects and a smattering of unsupervised athletics. And what was she, with her eager enthusiasm and her own individual personal problems, offered? A standardized curriculum, standardized examinations, exposure to facts and tests to see if the pupils could retain them for as long as 6 weeks. However, the novelty of a year in a larger school kept up her enthusiasm during the first semester of the ninth grade. She was disappointed occasionally by the dearth of challenge and the lack of opportunity to get into things, and then she was again the happy, hopeful youth looking over the hill into the wonderful tomorrow.

Nothing much happened during the second semester. She was not a leader, and was so modest about asserting herself

that she was hardly a good follower. She was usually on the honor roll in her classes but was near the lower limit for that distinction Early in her sophomore year she fell from the honor roll and to the concern of her parents did not seem to care. Her replies when they mentioned her scholarship were that she was tired of sitting in those old, dull classrooms, hearing the teachers talk. In class she began to ask questions, which in some cases the teachers could not answer. And she seemed to get a modicum of malicious delight out of their discomfiture. Her report card continued above average but indicated accomplishment much below her ability

That summer she went to a girls' camp for 2 weeks and for the first time encountered a challenge, an opportunity to do things. Her shoulders snapped back and she shifted to high gear. No outdoor game was too strenuous for her; the period in the swimming pool was far too short. She joined the nature study group and in delightful trips over hill and stream learned eagerly about plant and animal life. She learned to weave. She spent fascinating hours on the archery field, she learned how to lay outdoor fires that would defy wind and weather. She assisted in the camp library, and helped in the dining pavilion She received the coveted badge of "good camper." She was almost heartbroken when her parents came and took her home at the end of the camping period. The next 2 weeks were spent in preparation for school, and she went into her junior year sans vision or enthusiasm of any kind. She was like the small boy caught in the garage, dressing for the swimming pool, who is sent forthwith to Sunday school.

The following summer, for lack of something more interesting to do, Lucy enrolled in a summer demonstration school held in connection with a teacher-training institution. The principal of this school was a progressive educator, and in order to ensure a modicum of real education for his pupils

he saw to it that a variety of activities was shortly under way. Since Lucy was not looking for additional credit and was in school only for the "fun," if such a thing could be found in school, she presented herself for whatever activities she might enter. Being fairly good in English, she became editor of the *Summer Session Echo*. Here again she found something to do, something along the line of her interest. She had practically entire charge of the editorial policy, since the teacher-sponsor was very busy—and wise. Also, she worked hand in hand with the business manager and, when the paper threatened to go into bankruptcy, worked out with him a clever scheme for raising money This involved meeting a number of businessmen, which was particularly hard work for her. But the job had to be done or the paper would be a failure. Those two planned, executed their plan, and enjoyed the result. Lucy was chosen for a part in the play that was given at the end of the session Significantly, when the girls left town for camp 2 weeks before the end of the summer session, Lucy elected to stay in the school, regardless of the fact that she was free to go if she cared to. School, she had found, packed a challenge.

Into a junior high school in the Middle West came Arthur Thompson, tall, good-looking, American, and 15 years old. He lived with his mother and stepfather, and it was learned that a settled animosity existed between the boy and his mother's second husband Within a few days, an understanding homeroom teacher realized that unless Arthur were given some worth-while responsibility, the history, English, and mathematics classes were likely to lose out in their attempts to educate him. The evidences of his leadership ability were observed, and before long he found himself chief of the school traffic system. For 8 of the 9½ months of the school term he performed the many special activities and carried the responsibilities incident to the position. At

the end of the year, when "Recognition Day" came, at which time 80 per cent of the pupils of the school received recognition for some definite accomplishment, he walked to the platform and received his special honor. He had had something to do throughout the year. He had been happy, wholesomely occupied, and had therefore presented to the school no discipline problem. Within a month after the close of the school term in June, having nothing worth while to hold his interest and engage his activities, he became involved in a prank that sent him to the state school for boys for 1 year At the end of this period, he was given a position which challenged his capacities. At the last report he was a successful man.

In another junior high school, the principal was surprised one day to be presented with a copy of a newspaper written in longhand and containing only two types of material Charles Swank contributed poetry of no mean quality, and Bela Rebacki decorated the sheet with cartoons. They had little opportunity to "do their stuff" in the regular classes, and since the school newspaper appeared only once a month, their craving for activity of their peculiar types could not be satisfied there What should that principal have done with that ambitious sheet?

In an overflowing high school in the city of X, where the teachers lacked time for the coaching of plays, a group of pupils under the leadership of one of some experience organized a dramatic club and with only infrequent suggestions from faculty members produced plays of passing quality They not only produced plays; they gained experience in purposing, planning, executing, and judging, as Dr. Kilpatrick would say They learned not only leadership but followership Was this project of less educational value for those pupils than a regular class in Latin, geometry, or ancient history? In a junior high school in Cleveland it was

found that truants had more general information than had the average pupil in the school. They lived lives of activity, met problems that were vital to them, and had little time for canned information of the stereotyped school.

Eddie R. was the son of a widow in a Western mining camp He and his mother had met life in the raw until he was 14 years old and a sophomore in high school. We have never met a high school pupil who could go more directly to a point or solve a practical problem with more success. Our high school boys and girls need to come more in contact with life problems that directly concern them and engage their interest.

In our present overcrowded schools, it is not only the dull, inactive pupil who is suffering from lack of attention, nor yet is it only that big majority medium group. It is the keener minded, restless boys and girls who, given the proper stimulus and opportunity to develop, will become the sorely needed business, political, and ethical leaders of tomorrow.

Schools that are well organized for extracurricular activities have few discipline problems. The boys and girls are too busy meeting practical situations to waste time annoying the teachers or their schoolmates. Indeed, we find a number of them who deal unkindly with pupils who have been slow in falling into the procession to real life. A transfer pupil came to one such school and started the old game of trying out his various teachers He was forthwith called into a student government group and informed that "in this school that kid stuff is out."

Many boys and girls would be better off out of school, with freedom to plan and execute under the guidance of some wise adult and with opportunity to associate with their fellows in interesting activities, than they are gnawing at the dry bones offered in our traditional high school curriculum. Burnham's three requirements for an integrated personality,

"a task, a plan, and freedom," will live in professional history, along with Briggs' classic statement "The high school should teach boys and girls to do better the desirable things they are likely to do anyhow." With these two statements alone the curriculum maker is well on his way to a high school that educates.

The new curriculum must be one that gives more time to activity and less to passivity; more time to creative consideration of today and tomorrow and less to worship of yesterday and the day before. Curriculum makers should go out into life to find out what is happening, and then, with the courage of conviction, they should prune out the dead wood of the past and graft new to make an activities program which will challenge our children into habits of constructive struggle with problems that are to them important.

What are the possible contributions of extracurricular activities to the pupils in our public schools? According to R D. Russell's[1] study of the opinions on clubs held by school administrators in four northwestern states, the biggest contributions are in responsibility, leadership, social graces, citizenship training, enthusiasm, good scholarship, interest and loyalty to the school, development of cooperation and harmony, and increased interest in desirable leisure-time activities. The chief disadvantages are that clubs make cliques; they take time from pupils, there is a lack of faculty advisers and competent instructors for the clubs; objective programs are lacking. The advantages, according to these administrators, far outweigh the disadvantages.

Too often extracurricular activities have not been considered by principals as desirable phases of a school program, and rather as a relaxation from regular school assignments than as a vital and indispensable phase of the education of

[1] R D Russell, "What Benefits Do Pupils Derive from School Clubs?" *Nation's Schools*, Vol. 7, pp. 35–40, March, 1931.

young people. Probably more often they have overlooked the many opportunities for guidance of individual pupils. These activities can be useful in the areas of personality development, occupational exploration, leadership and followership training, guidance in the use of leisure time, guidance in vocational choice, guidance in work habits, and health guidance.

Some will say that there is no difference between extracurricular activities as extracurricular activities and extracurricular activities as an avenue for guidance. The difference lies in the increased concern for the personality of the pupil for making the adjustments which will encourage him to direct his growth in the channels which appear to be most promising. Many a pupil has engaged in a number of extracurricular activities during his high school course without ever having their many possibilities called to his attention. In fact, many a pupil has never realized that extracurricular activities have possibilities in so many directions for his personal development.

Burnham's famous statement quoted above emphasizes the mental hygiene contribution of extracurricular activities. According to him the integrated personality has "a task, a plan, and freedom." In the first item it varies not much from the ordinary classroom situation where the pupil is assigned a task to perform. The situation usually differs greatly in that in the extracurricular activities the pupil is likely to choose his own task, whereas in the usual class situation the assignment of a task is made by the teacher. The intelligent adult need not be reminded of the difference in pupil attitude in the two situations. The writer well remembers the times when as a boy he had two kinds of assignments when his father left the farm for a day. In one case, he was told to do some specific job. In the other, he was told that he might select something that needed doing and do it if he

"had a mind to." It is not necessary to tell how the amounts and qualities of work differed.

While not all extracurricular activities may be said to meet Burnham's three requirements, they approach the ideal Each extracurricular activity certainly provides a task; planning is frequently present; and almost always a considerable amount of freedom. Seldom does a school make extracurricular activities required, and a student is usually free to choose the activity he likes best. These very criteria of extracurricular activities stamp them as of significant value in guidance. Guidance is hardly guidance if it contains much that is compulsory. In the early days of the movement, it was believed that no one having authority over a pupil could be a successful counselor. Some experts today maintain this attitude, Carl Rogers being its outstanding advocate. However, the movement today is strongly toward guidance by classroom and homeroom teachers. If this is right, perhaps Rogers and some others are wrong. However, they may both be right. Certainly there should be a minimum of direction in any guidance program. The purpose of such a program is to help the pupil to be able to direct his own life.

Nowhere is this truer than in the selection of a vocation or an avocation. The pupil should generally have a free choice, with the teacher or counselor simply seeing that he has the proper information and criteria for evaluating it The teacher seldom says, "You ought to do this." He says, rather, "Persons with your talents seem to succeed in this general field." Or, "Statistics show that . . . . per cent of people of your ability succeed in present-day colleges."

Extracurricular activities provide an excellent exploratory situation. Ordinarily a pupil is permitted to change his activities fairly frequently. The pupil who finds he is not

interested in some activity he has chosen is permitted to make another choice This may be an activity already in operation or one which grows out of the interests of a number of pupils. This, too, may not have the drawing power he had anticipated, and again he may switch to something else Finally, he may become connected with some activity that he will want to follow for a long time as either a vocation or avocation.

Discovering whether a pupil has leadership qualities and giving him training in this area are often functions of extracurricular activities. Leading a school club or other organization, getting classmates, teachers, principals, or outside persons to cooperate with him, obtaining election to school offices and performing their functions—all these are guidance and training opportunities rarely available in regular classroom situations. Through extracurricular activities, pupils learn the importance of electing good leaders; ascertain the qualities needed for leaders; learn the techniques of selecting leaders and the responsibilities of every good citizen in this connection; determine when an elected official has performed his task successfully or has failed, learn and practice techniques of keeping leaders close to the objectives for which they were elected. One might extend the list, but in any case he will discover that the chances for success are greater in extracurricular activities.

In the area of leisure-time guidance there are unlimited opportunities in extracurricular activities. While teachers may do much to emphasize the need for and techniques of leisure-time guidance, they are less likely to do this in class situations than in a relaxed atmosphere of extracurricular activities. Furthermore, the practice rather than the precept is important, and extracurricular activities provide it in a natural setting. It is scarcely necessary at this point to

emphasize the importance to a pupil's personality of the way he uses his leisure. The speed of development of atomic energy and other almost equally phenomenal discoveries presage an early date when machinery will enter much more into almost all lines of work and the working day will be accordingly shortened

Guidance in preserving a pupil's health is one of the functions that a program of extracurricular activities can perform His mental health will be improved and ensured by Burnham's prescription of "a task, a plan, and freedom." Since he can choose his activity, he is likely to be able to achieve real success in something, a requisite for mental health. His physical health can be promoted by (1) mental health, and (2) physical activities, satisfying at the time and adaptable to practice over a long period of years. These can be developed in a program of extracurricular activities.

One might add to the benefits of extracurricular activities in a guidance program, but no one person could imagine all the possibilities. These will develop as interested, alert, creative teachers search for activities that will function in the all-round development of individual personalities.

The chief need seems to be for teachers and administrators who are able to see the almost limitless possibilities and who place such activities definitely into the guidance program. When our educational system is well organized and effective, the record of extracurricular activities in the permanent record folder will be considered as important as the pupil's scholastic record, and it will be as carefully kept.

Finally, it may be well to remind teachers of the tendency to put into school subjects many activities which were formerly considered extracurricular. A caution here is that if they are to function best they must retain the challenge of choice, planning, and freedom from too much teacher dictation.

What Activities?

There are many activities with which school people are familiar: musical, athletic; literary, artistic; vocational, such as agriculture, commercial, mechanical, etc. Then there are those connected with academic subjects, such as foreign languages, mathematics, sociology, science, English, history, and journalism. The above list may be helpful but should be only suggestive to creative teachers, who will see possibilities in some of their own interests for activities which have not yet been heard of. For every teacher should have a hobby and should be constantly looking for guidance possibilities for her pupils.

How shall extracurricular activities be organized? There is no definitive answer to this question. A few suggestions follow. Various schools have all extracurricular activities controlled by the student senate, by a committee of teachers and pupils, or by a committee of teachers alone. In certain schools, a director of extracurricular activities is appointed by the principal It is conceivable that the program might well be controlled by the curriculum committee of the school Whatever the organization, some kind of direction is necessary. Time for such activities is always a problem. The most satisfactory arrangement in many schools is that in which one period a day is free for activities. One or two of these periods in any week are given to assemblies, one is given to clubs, one is given to homeroom activities, and the other period or periods are available for counseling and many activities of interest to pupils and teachers.

A few pertinent questions will be asked. Among these are the following: How to determine what activities shall be included in the program? A reasonable principle here is that the extracurricular activities program should include all possible desirable educational activities not included in the regular program of studies. In most schools, assemblies,

student government, musical, and athletic organizations are still considered extracurricular. This is true of clubs and other societies.

A second question relates to the participation by pupils in such activities. Shall all pupils participate? This question brings us back to the guidance program. Does participation in one or more extracurricular activities seem to be the answer for a particular pupil? If the pupil's counselor has a relatively complete picture of his life in school and out, this picture should be before the counselor in advising the pupil. Likewise, when the problem of how many activities a pupil may engage in comes up, it should be settled after examination of his record in the cumulative folder Two statements can be made with some finality: (1) No pupil should be allowed, because of his popularity, to hold a monopoly of leadership positions. In some schools this is handled through a point system, various activities carrying certain points. Membership calls for a certain number of points, minor offices more points, and major offices additional points. However, in any such system, a brake should be placed on the custom prevalent in some places of allowing outstanding pupils to hold a number of presidencies at one time. (2) The other statement relates to compulsion. There may be an instance, now and then, where a pupil should be compelled to engage in some activity that is related to his interests. This, however, should be a rare situation. A general principle is that there must be no compulsion in such activities. Freedom has been emphasized earlier in this unit.

A third question relates to how often a pupil should change activities. One of the most important contributions of extracurricular activities is the opportunity they provide the pupil for exploration of vocational and avocational fields.

This will not be real exploration unless it provides a variety of experiences. Hence, opportunity to change frequently—certainly every semester—is necessary.

Finally, the individual extracurricular activities must have sponsors. How shall they be chosen? This is a delicate matter. Pupils may choose activities or sponsors. The former is, of course, preferable. The better plan is to offer a number of activities which pupils may choose, regardless of sponsors. There will also be clubs that will grow up around certain individuals in the faculty. These should be successful and are frequently relatively permanent.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Make a list of all activities now operative in your school which should be classed as extracurricular.
2. Set up a plan for some kind of organizational arrangement for extracurricular activities. Under this provide for the following: (*a*) Choice of activities by pupils, (*b*) Choice of sponsors, (*c*) Length of time a pupil must remain in a particular activity, (*d*) School time for extracurricular activities, (*e*) Credit for extracurricular activities, (*f*) Extracurricular activities record in a pupil's cumulative folder, prepare such a form, (*g*) Limitations on number of activities a pupil may engage in.
3. Select an activity you would prefer to sponsor, and plan a tentative semester's program for such activity.
4. How can teachers find time to sponsor extracurricular activities?
5. Ask your homeroom group to discuss and prepare a plan for the school organization of extracurricular activities.
6. Some of your pupils are not interested in any extraclass activities. How can you arouse their interest?

BIBLIOGRAPHY

CHARTERS, W. W., and C. C. HARVEY: "The Twelve Questions on the Future of our Extra-curricular Program," *Clearing House*, Vol. 19, pp. 3-7, September, 1944. In this interesting article, Mr. Harvey, teacher and a department editor of *School Activities*, asks 12 questions about extracurricular activities of the future. Dr. Charters answers them. Two criteria are dominant. Does the activity contribute to the growth of the whole child? Does it contribute to the improvement of school and community life? The questions concern aims, types, obstacles to aims, competitions and contests, honor societies, student participation in school government and in the community, abolishing line of demarcation between the curricular and extracurricular, the part the school should take in the war effort, and more attention to training teachers in the extracurricular field. Mr. Harvey concludes, "slow but substantial exploration in this new educational continent . . . The tempo of the schools is glacial but the movement of glaciers is inexorable."

FLAUM, L. S., "An Activity-Seminar Guidance Program," *School Activities*, Vol. 17, pp. 285-287, April, 1946. The author, a school superintendent, after stating the major weakness of the traditional extracurricular program, describes a plan for a comprehensive extracurricular program. This is a six-period day schedule of 1-hour periods, all study periods eliminated, the pupil carrying four major subjects, plus an activity period and music or physical education. A method of procedure is described, the "seminary system" explained in some detail.

Flaum, L. S.: "Activities Contribute to Growth," *Nation's Schools*, Vol. 38, pp. 53–54, December, 1946. In discussing this "creative activity" program, the author, a school superintendent, declares it to be the "result of experimentation and accurate record keeping to determine the use value of activities in relation to the developmental needs of pupils." He lists seven areas of activity and concludes these activities have an educational value in personality development that is "intensely valuable" and that they justify the time spent on them.

Patty, W. W.: "To Complement or to Supplement?" *School Activities*, Vol. 16, pp. 203–204, February, 1945. The author, a professor of education, states first the case for the complementary function of extracurricular activities as those activities which "help fulfill the educational contributions of the curricular offerings." The arguments are given, pro and con, for such activities. The supplemental plan is called one answer to one of the pressing problems of every school administrator—how to increase the educational opportunities of pupils without increasing the school budget. It arranges a program as different in content as possible from offerings in the curricular program, thus broadening educational opportunities. It is especially valuable in small schools. In the opinion of the author, the supplemental plan makes a more superior contribution to the school program than the complemental plan. Thoughtful administrators are urged to give serious attention to its adoption.

Patty, W. W.: "What Tenure for Activities?" *School Activities*, Vol. 16, pp. 283–286, April, 1945. There should be two types of tenure for extracurricular activities according to the author: a permanent tenure plan and a

rotating plan. He lists those activity organizations which should be regarded as permanent and gives five qualifications which an extracurricular activity should possess to qualify for such a status. A rotating plan is proposed for those clubs that have "significant educational values, but for which there are only sporadic or seasonal demands." This is of special value in the small school. A chart is pictured showing how the rotating plan may provide continuous and periodic tenure for extracurricular activities in a typical small high school. The advantages of such a plan for both pupil and teacher are discussed

RAY, P. D.: "A Program for Extracurricular Speech Activities," *School Activities*, Vol 17, pp 204–206, February, 1946. The author, director of speech activities in secondary schools in Texas, writes enthusiastically of a speech-arts program. She gives four points of emphasis in the program, the first of which is to provide opportunities for those "eager but average boys and girls who are usually left out." The satisfying results listed after 1-year existence are (1) timid students become better adjusted, and (2) students who received no special attention before this program find school a happier place An outline of the plan and organization of the project is given.

UNIT 28

The Community and the Guidance Program

Guidance workers must furnish leadership in the education of our boys and girls. This leadership will look into every nook and cranny of our communities for sources of help in this, our most important job. For schools are not provided that teachers may teach but that pupils may learn and grow and correct their mistakes and do those things which good citizens do: work, give, and fight for things that are right and against the wrong; vote, hold office, and pay taxes; establish homes, rear children, and support schools for their own and their neighbors' children. This list could be extended, but enough has been said to underline the importance of an education far beyond the learning of the fundamental subjects, important as these are.

Into this program of development of our youth must come all the forces of the community whose purposes are for good rather than for selfish, sordid motives. Among these is the Parent-Teacher Association, the most vitally interested group in the community and the group which has unlimited possi-

bilities of cooperation in the guidance program. The difficulty usually with the P.T.A. is that entirely too few parents are active and too often those who are active are ones whose children need this cooperation least. Our school leaders must learn the immense possibilities of the P.T.A. as an adult education organization. They must realize that when problems are solved in the home, they do not have to be solved at school. They must know, however, that such activities usually bring late fruit and they must be willing to see small gains, provided that the gains can be continuous.

Other organizations of the community which can perform a vital function in the guidance program are the Y.W.C.A., the Y.M.C.A., and the Roman Catholic and the Jewish young peoples' organizations set up specifically for the purpose of making better men and women of our young people. Here fine, devoted, experienced leaders of youth give their talents for little or no monetary return. They have the priceless privilege of seeing these young people grow up and of observing the impact on their personalities of forces that affect them in "unconstrained situations"—in other words, when no one of authority is looking. This is the time the real boy or girl stands forth in his true character. The personnel of these organizations have many opportunities to furnish helpful guidance to young people, and also they can be of invaluable help to teachers and principals of our schools. Many a boy or girl has not been really understood by a teacher until the latter has made the acquaintance of such youth leaders.

Other people who are not sufficiently well known by teachers of our boys and girls are the leaders of the Boy and Girl Scouts and the leaders of the Camp Fire Girls. It must be realized that these people give their time regularly and generously to our boys and girls with the sole aim of helping with their development. A man or woman who gives at least one evening a week to a troop under these conditions

has invaluable information which he or she will gladly share with any teacher or principal. There comes to mind one man who for the past 11 years has driven or walked 4 miles weekly to serve a Boy Scout troop He knows his boys.

In this connection, some of the best vocational guidance done anywhere is in a Scout troop as a boy climbs the ladder of achievement toward becoming an Eagle Scout or passing his Merit Badge tests. Many a boy has found his life's vocation among the approximately 112 tasks that may be done to earn merit badges. Similar opportunities are offered in the girls' organizations Without going into details, it is profitable to list other organizations which may and do give invaluable service to boys and girls. For example, there are such organizations as the Kiwanis Club, with its international program of vocational guidance, the Rotary Club with its world-wide service to crippled children, and the Lions International, with its service for boys and girls with defective vision. While these organizations perform many other services for young people, they are not alone. Other service clubs, such as the Exchange Club, perform admirably. The teacher who wants help from such organizations need only go to them with an important problem, and they are glad to respond. We shall close this discussion by merely mentioning a few of the many other groups just waiting to be asked for help Sunday schools, churches, men's Bible classes, chambers of commerce, businessmen's associations, business and professional women's clubs, the American Association of University Women, civic clubs, and many other groups are eager to help. In fact, the teacher who really wants to make use of such organizations will do well to have on her wall or in her desk where it is easily accessible a list of such organizations with their leaders' names, addresses, and telephone numbers. For the teacher's convenience, such a form is provided below.

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. No secondary school should introduce a guidance program without providing for utilization of many community resources. List as many as you can.
2. Can a public school teacher afford to serve as a leader of the Boy or Girl Scouts?
3. Teachers sometimes forget that they ought to become members of executive boards or committees of various welfare or service organizations. Suggest procedures for bringing this about.

BIBLIOGRAPHY

BAGLEY, W. C "The Problem of Educating for Community Responsibility," *School and Society,* Vol. 63, pp. 3–4, January, 1946. This is a brief review of the findings of the director of the Bureau of Institutional Research at the University of Illinois, who has found on the basis of "various educational surveys" that there is too much apathy and unconcern about civic responsibility and an unwillingness to accept it. He believes that there is need of education for community responsibility and that the schools should redouble their efforts toward that goal A number of ways of doing this are mentioned Dr. Bagley goes a step further and advocates a program of adult education. ". . this would seem to be almost the only solution, for many of the serious problems involved are unsuitable for discussion in classes of children and youth."

BARRETT, L. A.: "Salida Schools Perform Community Services," *American School Board Journal,* Vol. 109, pp. 19–42, August, 1944. A threefold accomplishment results from active cooperation between the school and

the community in a Colorado town of 5,000 people. The author, who is the school superintendent, says that actual service is performed for the community, that the pupils build up excellent public relations for the school, and that they in return receive practical and educational experience as well as training in good citizenship. A number of specific services are described. The public schools are "missing a golden opportunity if they fail to do work of this type which does not interfere with instruction."

CONOVER, J. F., and E. J. SABISTON: "Play's the Thing," *Nation's Schools,* Vol. 39, p. 49, April, 1947. The authors, in briefly describing the excellent summer recreation program of Terre Haute, say the program is made possible through the cooperation among the school, the city, the park board, community groups, newspapers, and other agencies. Good citizenship, character development, and health checkup and education are among the guidance values stressed.

EAVES, R. W.: "Elementary Schools Have a Part to Play in Community Life," *Nation's Schools,* Vol. 36, p. 46, November, 1945. This is a digest of the Twenty-fourth Yearbook of the Department of Elementary School Principals of the National Educational Association. The committee preparing the yearbook "made an effort to obtain material representing the most outstanding school programs emphasizing various phases of school and community relationships for both rural and urban communities." The essence of the various chapters is noted and several related articles are mentioned.

FLATT, J. D.: "Twin Falls Has Guidance Know-how," *School Executive,* Vol. 65, pp. 47–48, January, 1946. In the opinion of the author, principal of a high school, community guidance is an important part of the effective school guidance program briefly described here. The

aid of men's service clubs is obtained for the guidance work, and speakers from various civic organizations and professions are brought in. Senior students are allowed to take training in downtown establishments for credit.

HALBERSTADT, WILLIAM: "The Dads' Club—for School and Community," *American School Board Journal*, Vol. 109, p 34, July, 1944. The author contends too little attention is being given to a problem of prime importance in the postwar world—the parent For the fathers in particular and the community in general, he recommends Dads' Clubs. The author is president of such an organization. How to be intelligent about their own children's education and how to untangle the mass of information about educational opportunities and reconstruction for youthful ex-service men are "typical of the many problems which are being answered by Dads' Clubs now in existence." The accomplishments of specific clubs are given. A Dads' Club brings together a group of men who as individuals offer the assistance of mature, unbiased, nonpolitical minds in the analysis and promotion of many projects.

"Students Become Civic Minded," *School Executive*, Vol 65, p. 43, January, 1946. This is a report of a "new approach to citizenship training" to be made by the senior high schools of Indianapolis. The purpose of the interschool council, which is composed of four pupil leaders from each school, is to promote better relations between schools and to stimulate student interest in civic affairs. It will serve as a liaison between high school students and education subcommittees of various civic organizations, and it will meet with such groups as the city council, board of safety education, board of health, and the state assembly.

UNIT 29

Evaluating the Guidance Program

Guidance is probably the most discussed subject in the field of education. Hardly a professional meeting in that field is without its guidance section or division A school system today without something called a "guidance program" is considered a definite anachronism. Books and articles in the field are rolling off the presses Research on various guidance problems is being carried on in a number of our graduate schools of education. Guidance programs are being established in the American Occupation Zone in Germany and in many other countries

A grave danger for the future and a probable reason for the slow progress in guidance is the tendency to assume that when a program has been set up its success has been ensured. Throughout this volume the reader has been frequently reminded that guidance, to be effective, must be a growing, creative affair However, little has been said about checking on the success of the procedures recommended. The matter of checking on results is the burden of this unit.

Before we attempt to evaluate our accomplishments, we must look back and review our objectives. Very briefly, the purpose throughout the volume has been to assist (1) teachers, (2) principals, and (3) counselors in individualizing the education of their pupils. An endeavor has been made to instill in school people an enthusiasm for the development of the personality of every individual pupil whether his ability is high or low, his personality attractive or unattractive, and his promise great or small. Also, an attempt has been made to provide techniques and tools for accomplishing the objectives set up.

Two types of evaluation will be considered here: one in which suggestions will be made for measuring the success of certain guidance techniques as they are applied to pupils, the other in which a check list will be used which contains techniques and tools generally considered desirable in a guidance program.

The former method of evaluation involves scientific study of the results of guidance procedures. These may be the techniques of individual or group counseling, the comparison of achievement with capacity, of one type of report to parents with another, of the efficacy of one method of teaching occupations with another, and of the efficiency of various types of cumulative records; the effectiveness of various techniques of rating, of the guidance clinic, and of the homeroom plan as compared with the core plan, the success of remedial measures in various fields, etc.

For techniques and examples of their use, the reader is referred to Chapter 19 in Davis *et al., Pupil Personnel Service*,[1] published in 1948 by the International Textbook Company in Scranton, Pennsylvania It is recommended that any school, after a guidance program has been well started,

[1] Frank G. Davis *et al*, *Pupil Personnel Service,* Chap. 19, International Textbook Company, Scranton, Pa., 1948.

plan to evaluate scientifically some phase of it each year. The value will not be only in the findings. The professional enthusiasm and knowledge that will be a concomitant of the research may be equally worth while.

There are many check lists which will be helpful in evaluating a guidance program. The best known is that developed by the Cooperative Study of Secondary School Standards and used in the evaluation of guidance programs in secondary schools throughout the United States. A copy of this check list is found in the appendix of *Pupil Personnel Service* mentioned above.

One of the best and most recent evaluation schemes of the check-list type is that developed in the Division of Occupational Information and Guidance of the Pennsylvania State Department of Public Instruction at Harrisburg, Pa. It is given below. [2]

SUGGESTIONS ON THE USE OF THIS DEVICE

The criteria contained herein may properly be considered as indications of progress in a guidance program of a public school. If those desiring to conduct a self-evaluation program agree with the statement of general purpose and the guiding statements of philosophy of each division, then the criteria which follow may properly be considered as indications of the ways and means by which the stated purpose of guidance may be achieved. In this respect the criteria become measures of standards against which a particular program of guidance may be evaluated

One point of credit is allowed for each criterion to which an answer of "Yes" can be made. A check mark can be used to indicate this credit in space provided to the right of each statement.

On this self-evaluating scale a perfect score is 80. Schools may

[2] Used with permission of Stewart C. Hulslander, director of occupational information and guidance, Pennsylvania State Department of Public Instruction, Harrisburg, Pa

desire to plot their rankings by profile or through the construction of thermometer diagrams calibrated on a one-point-value scale

Theoretically, a score of 100 would represent a perfect guidance program In view of the fact that there is neither complete agreement nor understanding at the present time as to what constitutes a perfect guidance program, the device is limited to an 80-point score or 80 per cent of a theoretically perfect program.

Criteria for Self-Evaluating Guidance Services in Individual School Districts

I. Organization

To aid in achieving the general purpose of guidance, the program of guidance should be properly organized and integrated into the total school program as a personalized service effectively employing the personnel and facilities of the school and community.

1. Organized guidance services are available for all pupils in grades 1 through 12. ( )
2. Organized guidance services are available for out-of-school persons. ( )
3. Guidance is considered as the personal service of a school rather than the subject matter taught. ( )
4. The guidance services include facilities for aiding pupil adjustments to good health, social competency, personality improvement, educational attainment, and avocational and vocational achievement. ( )
5. Adjustments in school offerings are made on the basis of pupil needs as evidenced through findings in the guidance services. ( )
6. There is one person in supervisory charge of all guidance services in a school district. ( )
7. There is a functioning guidance advisory committee of representative teachers and administrators. ( )
8. There is an average of one certificated school counselor devoting full time to guidance functions for each group of 600 school pupils or fraction thereof. ( )

9. There is one homeroom teacher for each group of 35 pupils or fraction thereof. ( )
10. There is one class adviser or consultant for each grade in the secondary school ( )
11. Faculty committees assist in the development and progress of the guidance service. ( )
12. Each faculty member has specific as well as general responsibilities to the guidance service. ( )
13. Pupils assist in the development and progress of the guidance service. ( )
14. At least one faculty meeting is devoted to guidance activities each year. ( )
15. A special room, or rooms, is provided for the use of counselors. ( )
16. Counseling quarters meet safety and health standards of the Departments of Public Instruction and Labor and Industry ( )
17. Adequate furnishings are provided in the counseling room or rooms, based upon the recommendations of the Department of Public Instruction. ( )
18. The school, directly or in cooperation with employment agencies, places pupils in occupations and institutions of higher learning ( )
19. Meetings are scheduled with individual parents and parent groups for the purpose of making guidance services more effective. ( )
20. Follow-up records of former pupils are analyzed, and the findings are used in reorganizing and adjusting the school to meet the needs of individual pupils. ( )

II. Individual Analysis

To aid in achieving the general purpose of guidance, provision should be made in the guidance program to discover, analyze, and utilize historical and developmental data on individuals.

1. The individual cumulative record, initiated when a pupil first enters the school system, provides for a continuing

record through grade 12 or until the pupil leaves the school. ( )

2. The cumulative record provides for temporary and permanent recording of pupil information. ( )
3. The cumulative record indicates pupil growth and trends. ( )
4. The cumulative record is relatively simple to initiate and maintain. ( )
5. The cumulative record contains the following items. health, attendance, scholastic achievement, standard tests, personality rating, work experience, hobbies and activities, follow-up record, and personal information. ( )
6. Cumulative records are utilized by counselors and others in the guidance service ( )
7. Follow-up records of former pupils are analyzed, and the findings are utilized in the counseling of individual pupils. ( )
8. At least three tests of scholastic aptitude are given pupils during their school life ( )
9. General achievement tests are given to elementary pupils at least every other year ( )
10. Special achievement tests are given during the junior high school period in reading and numbers. ( )
11. A vocational interest test is given in the ninth grade. ( )
12. A vocational interest test is given at the close of the eleventh or at the beginning of the twelfth grade. ( )
13. Special aptitude tests are given on an individual basis to pupils for whom additional information is needed to confirm their objectives further. ( )
14. Personality rating is made each year on each pupil by three or more faculty members who have been in position to observe the individual under different conditions. ( )
15. Cumulative records are located in a convenient place for use by counselors. ( )
16. Provision is made for analyzing, diagnosing, aiding, and correcting maladjusted pupils. ( )

17. The drop-out-of-school rate by pupils is below the state average. ( )
18. A majority of pupils follow through to graduation with the course which they originally selected. ( )
19. Provision is made for pupils to change courses if counseling analysis reveals facts indicating that such a change is desirable. ( )
20. Home visitations are made by faculty members for the purpose of better understanding individual pupils. ( )

III. Counseling and Group Activities

To aid in achieving the general purpose of guidance, the program of guidance, through individual counseling and group activities, associates and compares properly analyzed historical and developmental data of individuals with properly analyzed facts of social, educational, and vocational demands

1. Each pupil in the junior and senior high school is afforded at least one individual interview each year at a time when the pupil has evidenced adjustment needs. ( )
2. Ample pupil and counselor time is available from the school schedule for individual interviewing. ( )
3. Pupil referrals are made to the counselor directly by classroom teachers, homeroom teachers, and others for interviewing purposes. ( )
4. Individual counseling is shared by all faculty members ( )
5. The counselor frequently arranges individual interviews between pupils and faculty members ( )
6. Important factual results of the interview are recorded for future reference. ( )
7. Follow-up interviews are arranged with pupils for purposes of noting progress on suggested changes and on how well their plans are being accomplished. ( )
8. Careful preparation, through a study of available records and other data related to the pupil, usually precedes the interview with the pupil. ( )
9. Orientation, educational, personal, and social adjustment

are emphasized through group guidance activities during the junior high school period. ( )

10. At least one homeroom period is devoted to guidance activities each week. ( )
11. At least four assembly programs are specifically organized around guidance objectives each year. ( )
12. A career day or forum is conducted each year for pupils. ( )
13. At least four tours to employing institutions are made each year by twelfth-grade pupils. ( )
14. A survey of occupations is taught each year to ninth-grade pupils for a minimum of 700 minutes. ( )
15. Special problems on occupations, labor management and techniques, and procedures for procuring employment are taught to twelfth-grade pupils for at least 700 minutes each year ( )
16. Teachers emphasize the potential vocational outlets of the subject matter which they teach ( )
17. Occupational and adjustment information is available and is used in individual interviews and group guidance activities ( )
18. Follow-up records of former pupils are analyzed, and the findings are utilized as factual information for counseling purposes. ( )
19. Counseling in the elementary grades is largely carried on by the classroom teacher assisted by the counselor-coordinator and other specialized personnel ( )
20. The school activities program, organized on the basis of expressed pupil interests, provides for participation in at least one club by every pupil. ( )

IV. References and Resources

To aid in achieving the general purpose of guidance, provision should be made in the guidance program for adequate factual information resources.

1. There are at least six professional books on guidance pub-

lished within the past 6 years available in the library for teachers. ( )

2. At least one professional book on guidance or counseling is purchased each year and placed in the library ( )
3. There are a minimum of 25 professional pamphlets on guidance or counseling. ( )
4. There are a minimum of six professional magazines or periodicals containing articles on guidance or counseling. ( )
5. Visual aids for professional use in guidance are available and utilized by teachers. ( )
6. An adequate supply of standard test forms is available. ( )
7. An adequate supply of cumulative record forms is available ( )
8. There are at least six different books, published within the past 6 years, for pupil references in each of the general, occupational information, personal and social adjustment, and educational areas of guidance. ( )
9. At least one guidance reference book is purchased each year for pupil use. ( )
10. There are at least 50 bulletins and pamphlets for pupil reference on the general, occupational information, personal and social adjustment, and educational aspects of guidance. ( )
11. There are at least six current magazines and periodicals containing articles on guidance suitable for pupil use ( )
12. Visual aids suitable for pupil guidance are available and utilized. ( )
13. The *Dictionary of Occupational Titles* is available and utilized in occupational information and guidance. ( )
14. A filing system for unbound occupational and adjustment information is kept up to date and utilized. ( )
15. The financial budget of the school system makes adequate provision for the guidance services. ( )
16. Organizations and individuals of the community are utilized to enrich the guidance program of the school. ( )

17. Industries, business places, farms, and other employing institutions are utilized in the guidance program of the school. ( )
18. Current catalogues of the major colleges and of other schools which pupils of the school attend are in the library and counseling office. ( )
19. Information on available scholarships and other types of financial aid for pupils is available ( )
20. Special interests, abilities, and aptitudes of individual pupils are encouraged through availability of reference and resource materials for individual use ( )

QUESTIONS AND PROBLEMS

1. Prepare cooperatively a philosophy of education in your school. How much of it is already being followed?
2. Using the rating scheme shown here, evaluate the guidance program in your school. What is the score in each of the four phases?
3. Refer to Chap 16 in *Pupil Personnel Service* by Davis *et al.* and answer the questions found at the beginning of the chapter. What is your subjective opinion of the comprehensiveness of the program?
4. Prepare a test, and determine how much a pupil knows about occupations (*a*) before a course in the subject, (*b*) after taking the course.
5. Select two groups of approximately equal ability in the same grade. Ascertain what vocational choices have been made. Give one group a course in vocational information. Do not give a course to the other group. At the end of a year determine whether vocational choices in each group are more or less in line with the pupils' abilities.
6. Try out experimentally the classroom teacher's cumula-

tive pupil personnel record (*a*) with a clerk doing all the recording, (*b*) with the pupils writing on their own record sheets all but confidential materials and clerks doing the rest.

BIBLIOGRAPHY

"Minneapolis Evaluates Its Guidance Service," *Bulletin of the National Association of Secondary-school Principals*, Vol 30, pp 7–29, January, 1946. This article is divided into two parts: (1) recommendations of activities that should be carried out in the counseling program, and (2) job analysis of the work of counselors and deans of students. "Guidance is . . . the high art of helping boys and girls to plan their own actions wisely, in the full light of all the facts that can be mustered about themselves and about the world in which they work and live." Guidance requires service from the entire school staff and includes the whole gamut of youth problems. The article lists the problems on which pupils usually required individual counseling and analyzes the duties of counselors and the special knowledge and skills they require for their jobs.

North Central Association (Subcommittee on Guidance of the Subcommittee on Fundamentals), "Characteristics of a High School Guidance and Counseling Program," *North Central Association Quarterly*, Vol. 22, pp. 219–247, October, 1947. A comprehensive statement by a group of distinguished guidance specialists of the objectives and activities of a high school guidance program. The last four pages consist of a "Checklist of Elements in a Minimum and an Extended Program of Guidance and Counseling." It is organized under the following divisions: (1) Information about Pupil, (2)

Organizing and Administering the Program, (3) Counseling, (4) Role of the Teacher, (5) Community Resources, and (6) Placement and Follow-up.

PATERSON, D. G., and K. E. CLARK: "Students' Judgments of Counseling," *Journal of Higher Education*, Vol. 14, pp. 140–142, March, 1943. The faculty counseling program at the University of Minnesota was evaluated by means of a questionnaire (a one-page mimeographed sheet, "Students' Opinions Concerning the Value of Faculty Counselors"). Over a 3-year period answers were increasingly favorable. Only 10 per cent indicated they considered the conferences of little or no value. More than 90 per cent of the students for all 3 years said that they would urge a brother or sister to consult a faculty counselor. Another questionnaire to faculty counselors indicated that they considered the work sufficiently worth while to justify its continuance.

RATHBUN, J. E.: "San Francisco's Annual Evaluation of Counseling and Guidance," *Clearing House*, Vol. 20, pp. 95–97, October, 1945. San Francisco holds an annual evaluation of its guidance program by canvassing the opinions of students, teachers, grade counselors, heads of departments of counseling and guidance in the various schools, and the making of a descriptive analysis of one distinct phase of the program in each school. Some findings: Student problems and the success with which they are met are surprisingly uniform in junior and senior high schools. The program is strong in those areas where emphasis has been great. Children are more interested in immediate than in future results. Counselors are more helpful to pupils in connection with personal problems. As problems become more personal, pupils prefer to discuss them with parents. Counselors find that they are more successful in help-

ing pupils to adjust than in correcting maladjustments A continuous daily evaluation must supplement the annual one.

STARR, G. G · "Evaluation of the Student Autobiography as an Aid in the Guidance Program," *Education*, Vol. 63, pp 40–47, September, 1942. The senior class in high school was asked to write biographies. They were guided by certain suggestions, such as (1) What do you do when you have nothing else to do? (2) What do you plan to do in life? Other questions provided coverage of several important adolescent problems. While the evaluation of results was made subjectively, the conclusions pointed toward considerable value in the autobiography.

Index

C

H

P

Q

R

S

T